त्रैमासिक साहित्यिक पत्रिका
ISSN-2321-1504 Nagfani
RNI No. UTTHIN/2010/34408

वर्ष 10 अंक-33 अप्रैल - जून 2020

नागफनी

A Peer Reviewed Referred Journal

अस्मिता, चेतना और स्वाभिमान जगाने वाला साहित्य

नागफनी

A Peer Reviewed Referred Journal

(अस्मिता, चेतना और स्वाभिमान जगाने वाला साहित्य)

त्रैमासिक साहित्यिक पत्रिका

* वर्ष 10 * अंक 33 * अप्रैल–जून 2020

त्रैमासिक साहित्यिक पत्रिका ISSN- 2321-1504 Naagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

''संपादक''

सपना सोनकर

सह–संपादक

रूपनारायण सोनकर

''कार्यकारी संपादक''

डॉ0 एन.पी. प्रजापति

डॉ0 बलिराम धापसे

सलाहकार मंडल (Peer Review Committee)

डॉ0 विष्णु सरवदे, प्रोफेसर, हैदराबाद

डॉ0 किशोरी लाल रैगर, प्रोफेसर, जोधपुर

डॉ0 दिनेश कुशवाहा, रीवा

डॉ0 एन.एस. परमार, बड़ौदा

डॉ0 एम.डी.इंगोले, महाराष्ट्र

प्रो0 संजय एल मादार, कर्नाटक

डॉ0 अलका गड़करी, महाराष्ट्र

प्रतिनिधि मंडल

मुख्य पृष्ठ कलाकृति–असलम, अताउर रहमान (रहमान)

डिजाईन एवं ले आउट–अजय नेगी

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक व संपादक सपना सोनकर द्वारा भास्कर प्रेस 13–कोट्ट रोड देहरादून–248001 उत्तराखण्ड, फोनः 09412054426 से मुद्रित व दून कांटेज स्प्रिंग रोड, मंसूरी–248179, उत्तराखण्ड से प्रकाशित।

संपादकीय/व्यवस्थापकीय कार्यालय

1. दून व्यू कांटेज स्प्रिंग रोड, मंसूरी – 248179, उत्तराखण्ड दूरभाष–0135–6457809 मो0: 09410778718

2. पी.इब्ल्यू डी आर–62 ए. ब्लाक कालोनी बैढ़न, जिला–सिंगरौली म.प्र. 486886, मो0: 09752998467

सहयोग राशि–50/–रूपये पंचवार्षिक सदस्यता–शुल्क–1000/–रूपये संस्था और पुस्तकालयों के लिए 1250/–रूपये विदेशों में – 50/–डालर आजीवन व्यक्ति – 5000, संस्था–7000

पत्रिका की किसी भी सामग्री का उपयोग करने से पहले संपादक की अनुमति लेना आवश्यक है। संपादन संचालक पूर्णतयः अवैतनिक एवं अव्यवसायिक है। 'नागफनी' में प्रकाशित शोध–पत्र एवं लेख, लेखकों के विचार उनके स्वयं के हैं, जिनमें संपादक की सहमति अनिवार्य नहीं। ''नागफनी'' से संबंधित सभी विवादास्पद मामले केवल देहरादून न्यायालय के अधीन होंगे। अंक में प्रकाशित सामग्री के पुनर्प्रकाशन के लिए लिखित अनुमति अनिवार्य है। सारे भुगतान मनी आर्डर/चैक/बैंक ट्रांसफर/ई–पेमेन्ट आदि से किये जा सकते हैं। देहरादून से बाहर के चैक में बैंक कमीशन 50/– अतिरिक्त जोड़ दें।

अनुक्रम

संपादकीय	पृष्ठ क्र. से तक
कोविड – 19 समय और समाज – प्रोफेसर डॉ0 बलिराम धापसे	0–1
कोरोना आपदा	
कोरोना संकटकालः समाज और साहित्य–डॉ. आकाश वर्मा	2–6
कोरोना वायरस और सोशल मीडिया – प्रा .डॉ .नितीन बी .कुंभार	7–8
कहानी	
कोरोना महिमा – प्रा. धन्य कुमार जिनपाल बिराजदार	9–11
वायरस –डॉ. अनिता एस.कर्पूर 'अनु'	12–14
कविता	
'उठ! किसलिए उदास है तू' – डॉ.प्रेम जी., भूल गए थे हम – भगवान धांडे	15
नीति का पुनर्पाठ – शीतनिद्रा – प्रोफे. डॉ. संजय जाधव, परभणी महाराष्ट्र	16
शोध–साहित्य	
बदलते परिदृश्य में साहित्य की भूमिकाः पसायदान के विशेष संदर्भ में–डॉ. मीना जाधव	17–18
भूमंडलीकरण, बाजार और वीरेंद्र जैन का साहित्य– प्रो. डॉ. नानासाहेब गोरे	19–21
साहित्य और समाज – डॉ. रंजना यदुनंदन चावडा	22–25
समय, समाज और संत साहित्य –डॉ. अलका नारायण गडकरी	26–29
भारतीय साहित्य और पर्यावरण चेतना (कहानी के विशेष संदर्भ में) – डॉ. शिल्पा दादाराव जिवरग	30–32
संत साहित्य का सामाजिक एवं सांस्कृतिक पक्ष – डॉ. बलवीर सिंह	33–36
महाकवि प्रसाद के काव्य में मानवीय संवेदना – डॉ. कृष्ण बिहारी रॉय	37–42
अनुवाद का राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्वरूप – डॉ. शेख मोहसिन शेख रशीद	43–45
उत्तरशती : नारी विमर्श की अवधारणा – डॉ॰ जयश्री वाडेकर	46–48
महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा पुणे की 'राष्ट्रवाणी' का हिंदी को योगदान–प्रा.डॉ. प्रकाश गायकवाड	49–51
हिन्दी उपन्यासों में चित्रित सामाजिक चेतना– डॉ. सुजाता जे. रगडे	52–54
दलित–विमर्श	
दूध का दाम – रूप नारायण सोनकर	55–62
दलित साहित्यः चेतना के विविध आयाम– डॉ0 एन0पी0 प्रजापति	63–72
बघेली बोली–विमर्श	
बघेली के नीव कालीन प्रमुख कवियों के व्यक्तित्व एवं कृतित्व–राजकुमार सिंह सोटिया	73–74

ISSN- 2321-1504 Nagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

संपादकीय.....

कोविड – 19 समय और समाज

आज भारत ही नहीं पूरा विश्व कोरोना विषाणु से उत्पन्न महामारी से त्रस्त हैं। विश्व में शायद ही ऐसा कोई व्यक्ति होगा जिसने कभी इस प्रकार की स्थिति का इससे पहले सामना किया होगा? ऐसे संकट की स्थिति में समय और समाज को लेकर विचार–विमर्श करना आवश्यक हो जाता हैं। एक समय ऐसा आएगा की पूरे विश्व का विभाजन कोरोना पूर्व और कोरोनोत्तर इस परिप्रेक्ष्य में होगा। इस विषाणु के उत्पत्ति के बारे में आज भी कोई सही विश्लेषण नहीं कर पाया हैं और न वैज्ञानिक रूप से प्रमाणित कर पाया हैं। हाँ चर्चा और अफवाहों का बाजार बहुत गर्म हैं। जैसे– मानव निर्मित हैं, चीन ने तैयार किया हैं, चमगादड़ से उत्पन्न हैं, वूहान के मांस बाजार से आया हैं आदि–आदि इतना तो निश्चित है कि विश्व का कोई भी देश कोना मनुष्य इससे बच नहीं पाया सभी इसके चपेट में हैं।

मात्र भारत के समय और समाज की बात करें तो स्थिति बहुत ही गंभीर है। भारत के शासन, प्रशासन और समाज ने इसे गंभीरता से नहीं लिया। जिसका नतीजा यह है कि भारत आज कोरोना से पीड़ित मरीजों के मामले में क्रमांक तीन पर आ गया है। यह हम सब की हार है इसे कबूलना ही पड़ेगा। जनवरी में जब कोरोना से पीड़ित मामले भारत में पाए जाने लगे तभी केंद्र सरकार को सावधान होना चाहिए था, पर वैसा नहीं हुआ। अमरीकी राष्ट्रपति ट्रम्प का अपने दल बल के साथ भारत आना, साथ ही जनता कर्फ्यू, ताली–थाली बजाना, दीये लगाना आदि उपायों से कोरोना से लड़ना आदि बातें इस परिप्रेक्ष्य में विचारणीय है। और फिर उसके बाद भारतीय नागरिकों का उसमें भी अधिक मात्रा में मजदूरों का विस्थापन बहुत ही दर्दनाक दास्तानों को बयान करता है। यह विस्थापन देश विभाजन की त्रासदी से कम नहीं था। आज भारतीय समाज जिस भयानक दौर से गुजर रहा है छः महीने पहले उसकी किसी ने कल्पना भी नहीं की होगी? एक बात तो निश्चित है कि सभ्यता, विज्ञान और साफ–सफाई के मामले में आम भारतीय व्यक्ति को अभी सीखना ही सीखना है। ऐसी विपदा की स्थिति में भी हमारी भारतीय संस्कृति कितनी श्रेष्ठ है यह हास्यास्पद दावा करने वाले लोग दया के ही पात्र हैं और कुछ नहीं। आज पूरे भारत में ऑनलाईन वेबिनार की जो बाढ़ सी आ गई है उसमें इसे बखूबी देखा जा सकता है।

कोरोना को हराना है कि जो तथाकथित लड़ाई शुरू हो गई थी वह आज उसके साथ ही जीना पड़ेगा पर आकर खत्म होती दिखाई देती है। वर्तमान स्थिति में कोरोना को रोकने के लिए जिस प्रकार की व्यवस्था से गुजर रहे है उससे तो कोई आशा नहीं बंधती पीड़ित मरीजों के मामले जिस प्रकार तेजी से बढ़ रहे हैं उससे तो यही पता चलता है कि भविष्य में भी इससे जल्दी निजात पाने की सम्भावना कम ही है। न कोई सरकार न नेता न बाबा न गुरु बस आशा की किरण वैद्यकीय क्षेत्र के किसी वैज्ञानिक खोज से ही है जो इस महामारी से मुक्ति दिला सकें। इसी उम्मीद के साथ इस ई अंक को तैयार करने के लिए जिन–जिन रचनाकारों ने सहयोग दिया है उन सभी का आभार व्यक्त करते हुए अंक आपके सामने प्रस्तुत कर रहा हुँ।

प्रोफेसर बलिराम धापसे

ISSN- 2321-1504 Nagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

कोरोना संकटकालः समाज और साहित्य

डॉ. आकाश वर्मा
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
असम विश्वविद्यालय, सिलचर,
असम, 788011
9435173672
hindiakash@gmail.com

महामारी का संकट इस मानव सभ्यता पर कई बार आया है और भयानक त्रासदी के रूप में आया है। ऐसे संकटकाल में भी मानवता ने हमेशा अपना बचाव किया और दुनिया को आगे बढ़ाया है। मानव सभ्यता के सामने बड़ी दिक्कत ये होती है कि जब भी इस प्रकार की कोई महामारी आती है, वह हर बार नयी होती है और तत्कालीक अथवा समकालीक भौतिक विकास और स्वास्थ्य उपलब्धियाँ, साथ ही साथ बुद्धि भी इसका हल नहीं ढूँढ पाती, लेकिन प्रयास जारी रहते हैं। प्रत्येक बार मानव और मानव समाज इसके तमाम पहलुओं और प्रवृतियों का अध्ययन करता है और अपने को नये रूप में स्थापित करता है। लेकिन हर बार उसे नया अध्ययन करना पड़ता है। शायद इसका सबसे बड़ा कारण ये है कि प्रकृति को मनुष्य अभी भी ठीक से जान नहीं पाया है, हालांकि वह अपने विजय की घोषणा करता रहता है। 2019–20 में प्रकट हुई यह महामारी अब तक की सबसे विकसित मानव सभ्यता और स्वास्थ्य सेवाओं के समक्ष प्रकट हुई है, जिसके सामने सारी स्वास्थ्य सेवायें एवं उपचार के तरीके धरे के धरे रह गये और यह महामारी पूरी दुनिया में फैलती चली गयी है। इस पर पुरी दुनिया में नये सिरे से शोध किया जाने लगा है। बहरहाल, इस महामारी ने बता दिया है कि प्रकृति के सामने आज भी मनुष्य कमजोर जीव ही है, चाहे उसने वैज्ञानिक रूप से कितना भी विकास कर लिया हो।

आज की पूरी मानव सभ्यता इस महामारी से त्रस्त है, वह चाहे अमीर वर्ग हो या गरीब वर्ग या फिर मध्यम वर्ग। हम विचार करें तो इस महामारी ने अचानक से विस्तार लेना शुरू किया और मानव सभ्यता समझे न समझे, तक तक पूरी दुनिया को अपने प्रभाव में ले लिया। इस आपदा से हमारे चारो ओर ऐसी जटिल स्थिति उत्पन्न हुई कि किस प्रकार उबर पायेंगे इसका हल अभी तक नहीं मिल सका है। सबसे पहले हम विचार करें तो पायेंगे कि यह आपदा अमीर वर्ग के सहारे पूरी दुनिया में फैलती है। हवाई जहाज से फैली है, क्योंकि एक देश से दूसरे देश जाने के लिए साधन सम्पन्नता बहुत आवश्यक है। इस प्रकार की यह पहली महामारी है, जो उस वर्ग द्वारा फैली जो अपने को रईस, अमीर, सभ्य और विचारशील मानते रहे। जो खर्चीली पढ़ाई, घूमने–फिरने या फिर शौकिया या फिर पार्टीयों के लिए विदेशों की ओर गये थे। कम से कम भारत की तो यही स्थिति है। इस कोविड महामारी के बारे में एक और बात कही जा सकती है कि अधिकांश देश, विशेष रूप से वे देश जिनका आर्थिक, राजनीतिक, सामरिक स्तर पर दुनिया पर वर्चस्व बना हुआ है, अत्यन्त कमजोर एवं दयनीय स्थिति में पाये गये। कोरोना विषाणु के बारे में कहा जा सकता है कि प्राकृतिक नहीं है। इसके पनपने में कहीं न कहीं मानव की भूमिका दिखायी दे रही है, जिसको चीन द्वारा छिपाया और नकारा जा रहा है। हालाकि चीन इसको स्वीकार नहीं कर रहा। तर्क दिया जा सकता है कि जो प्राकृतिक वायरस होते हैं, वे जिस स्थान विशेष पर विकसित होते हैं अथवा पनपते हैं, वे उसी स्थान और उसके आसपास जीवित होते हैं। तापमान, मौसम, आसपास के वायुमण्डल इत्यादि का इन पर गहरा असर पड़ता है। वे किसी और स्थान पर जाते हैं तो जीवित नहीं रह सकते या इतने कमजोर हो जाते हैं कि उनका प्रभाव नगण्य हो जाता है। अव्वल तो वह जीवित ही नहीं रह सकता। किन्तु यह विषाणु (कोविड–19) तो दुनिया के प्रत्येक मौसम में, तापमान में जीवित रह रहा है, विकसित भी हो रहा है। इसलिए यह विचारणीय है कि यह प्राकृतिक न भी हो। यह केवल किसी विषाणु के लिए ही नहीं दुनिया के प्रत्येक जीव के लिए भी सत्य है। पेड़–पौधे या जन्तु बड़े संघर्ष के साथ दूसरे स्थानों पर सुरक्षित रह पाते हैं। यह पूरी दुनिया के जीव वैज्ञानिक के लिए शोधात्मक चुनौती के रूप में सामने आया है। यूरोप और कई अमेरिकी देश इस बात को मानते हैं कि इसको बनाया गया है क्योंकि यह हर प्रकार की स्थिति में जीवित रह रहा है और हर प्रकार के तापमान पर सक्रिय है।

***

ISSN- 2321-1504 Nagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

ऐसा प्रयोगशाला में विकसिक जीव ही कर सकता है। हालांकि कि अभी यह सिद्ध नहीं हुआ है। यह पहले चीन से निकल कर पूर्वी एशिया में फैलता है, फिर यूरोप में तबाही मचाता है, उसके बाद यह अमेरिका में भयानक हाहाकार मचाये है।

अब यह धीरे–धीरे भारत में भी अपना विस्तार कर रहा है।

यह ऐसी महामारी है जिसने से सबको अपने प्रभाव में ले लिया है, कहीं भेद नहीं किया है। राजपरिवार से लेकर, राजनीतिक नेता तक। अमीर वर्ग से लेकर गरीब वर्ग तक। मालिक से लेकर मजदूर तक। कहने का अर्थ ये कि इसने यह साबित किया कि सभी मनुष्य समान हैं और वह मात्र मनुष्य है और कुछ नहीं।

मनुष्य अपने बीच चाहे कितना भी भेद कर ले, कितना भी धर्मों में बँटवारा कर ले या कितनी ही विचारों एवं मान्यताओं में बँट जाये। इसके लिए सभी समान है। हालांकि इस कोरोना से भारत जैसे विशाल जनसंख्या वाले देश में गरीब तबका और मध्यवर्ग ही अधिक प्रभावित हुआ है। इसका सबसे बड़ा कारण आर्थिक संरचना है।

मध्यवर्ग इसलिए क्योंकि इस वर्ग से कुछ लोग नौकरी करने वाले होते हैं और अधिकाँश व्यवसायी होते हैं। इसमें भी कुछ ही बड़े व्यवसायी और अधिकाँश छोटी पूँजी वाले व्यवसायी होते हैं। इन छोटी पूँजी वाले व्यवसायियों का भी कामकाज ठप पड़ गया। हमारे देश की बहुत बड़ी आबादी इसी वर्ग में आती है। इससे सबसे अधिक जो पीड़ित वर्ग है, वह है मजदूर और किसान। हालांकि ध्यान से विचार करें तो देखेंगे कि इस वर्ग को महामारी का भय कम है। ये अपने जीवन को बचाये रखने के लिए अधिक परेशान है। शहरों के अमीर लोग अधिक डरे हैं क्योंकि उनके पास जीवन के साधनों की उपलब्धता है। निम्न एवं मजदूर वर्ग अपनी भूख एवं प्यास से अधिक त्रस्त है। उसको हर हाल में जीवन को बचाये रखने के लिए घर से बाहर निकलना ही पड़ेगा। ऐसे में जब अचानक से शहर बन्द हुए तो उनके सामने जीवन का संकट खड़ा हो गया। पैसे मिलने बन्द हो गये तो रहने का संकट उत्पन्न हो गया। इन क्रमशः आते संकटों से लाखो–करोड़ों लोग वापस अपने गावों की लौटने लगे। जैसे भी हो वे अपने घर जाना चाहते रहे क्योंकि वह पहले जीवन को बचाना चाहता है। वह जब भूख से जीत जायेगा तो बाद में बिमारी से लड़ लेगा। अतः इस महामारी से शहर के लोगों को अधिक भय है, हालांकि यह भी निश्चित है कि इससे गाँव–देहात के लोग अछूते नहीं रहेंगे। स्थिति यह है कि यह संकट भारत के मजदूरों पर विपदा की तरह आया। उनके काम बन्द हो गये। उनके पास पैसे नहीं। शहरों ने उन्हें इस संकट की घड़ी में नकार दिया। रोजगार समाप्त होते ही लोग अपने गाँव की ओर लौट पड़े। यह जो शहरी सभ्यता और औद्योगिक सभ्यता उनको आश्रय नहीं दे सकी, इस पर विचार होना चाहिए। इस निम्न वर्ग के लोगों के साथ इन देश के बड़े–बड़े शहरों ने केवल अपनी जरूरतों को पूरा किया बल्कि उनका मनचाहा शोषण भी किया और जैसे ही आपदा प्रकट हुई, शहर ने अपने घरों को बन्द करके इनको ठुकरा दिया। ये आज के समाज का यथार्थ है। शहरों ने केवल इनके मेहनत को लूटा और अपना विकास किया। हमारे सामने देश के सारे शहर है। हर शहर अमीर और बड़ा होता जा रहा है। इसमें गाँव से पहुँचे गरीब मजदूरों की भूमिका अधिक है। हमारी स्मृति में जितने भी शहर आयेगें वे सभी इन्हीं मजदूरों की बनाई नींव पर टिके हैं। गरीब मजदूर गाँव से गरीब आता है और गरीब ही वापस घर की ओर लौटता है। ऐसा ही सपना 1947 में भारत की जनता द्वारा देखा गया था। जैसे ही आजादी आयी सारे सपने ओझल हो गये। एक विस्थापन उस समय हुआ और एक विस्थापन 2020 में हुआ। मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि 1947 के विस्थापन (एक जगह से दूसरी जगह जाने वाले) से अधिक संख्या में लोग इस वर्ष विस्थापित हुए हैं। हालांकि इस समय लोगों को अपना घर छोड़ने के बजाय अपनी घरों की ओर लौटना पड़ा। करोड़ों–करोड़ लोग और प्रत्येक शहर से लोग, अपने पुस्तैनी घरों की ओर, गाँवों की ओर लौट गये। यह सब देखना बहुत त्रासद रहा। कुछ पैदल, कुछ जैसे–तैसे और कुछ बाद में रेलवे द्वारा चलायी जा रही स्पेशल रेलगाड़ियों द्वारा। ऐसी स्थिति में, एक बार फिर करोड़ों की संख्या में भारत की साधारण जनता के सपने उनकी आँखों से ओझल हो गये। वजह चाहे जो भी गिनाया जाये पर इस संकटकालीन भारतीय समाज का यथार्थ यही है। एक ऐसे समाज का निर्माण हो सकता है अथवा होने वाला है जिसके लोग कहेंगे– कि आधी रोटी खायेंगे पर शहर नहीं जायेंगे। ऐसी स्थिति में तब क्या होगा शहरों का। आगे यह भी हो सकता है कि शहरों को वे हाड़तोड़ मजदूर शायद न मिले जिनके सहारे शहरों ने अपनी गति पायी थी। हालांकि अपना देश इतनी बड़ी आबादी वाला देश है कि पेट पालने के लिए लोग किसी भी कीमत पर कोई भी काम करने के लिए तैयार मिलेंगे।

***

ISSN- 2321-1504 Nagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

अब अगर हम ध्यान से विचार करें तो पायेंगे कि लोगों के सामने कोरोना स्वयं एक समस्या के रूप में दिखायी दे रहा है, तो दूसरी ओर इस कोरोना के चलते प्रकट हुई अनेक समस्यायें हैं। पहली समस्या तो आपदा है जिससे हमें लड़ना ही पड़ेगा लेकिन दूसरी समस्या मनुष्य की अपनी ही बनाई हुई है। यह मानव द्वारा ओढ़ी गयी समस्या है। ओढ़ी गयी समस्या इसलिए क्योंकि मनुष्य की अनियंत्रित बुद्धि एवं लालच ने उसके सामने संसाधनों का ढेर लगा दिया। जिनको प्राप्त करने के लिए प्रत्येक मनुष्य ने अंधी दौड़ लगा दी, चाहे वह जिस भी आर्थिक स्तर पर था।

इस ओढ़ी गयी समस्या की ओर सबसे पहले महात्मा गाँधी ने संकेत किया था। उन्होंने लगभग सौ वर्ष पहले अपनी पुस्तक हिन्द स्वराज के माध्यम से इस तरह के संसाधनों से बचने का संदेश, सुझाव मानव सभ्यता को दिया था। इसके माध्यम से उन्होंने मानव को संयमित, मितव्ययी, संतोषी तथा सहज एवं स्वच्छ जीवन जीने के लिए प्रेरित किया था। आधुनिकता के नाम पर अथवा विकास के नाम पर रेलगाड़ी, मशीन, औद्योगिक विकास, वकील, डॉक्टर आदि का विरोध किया था। महात्मा गाँधी का मानना था कि आधुनिकता मानव जाति के लिए एक महामारी की तरह है। वह एक बिमारी है जो बहुत कुछ तबाह एवं वर्बाद कर सकती है। हम विचार करें को वही आज दिखायी दे रहा है। आधुनिकता ने इन्सानों के भीतर लालच भरा। सपनों के पिटारों को जनम दिया। सुख–सुविधाओं एवं संसाधनों के जुटाव की अधी दौड़ में शामिल किया। विकास एवं तकनीकी प्रयोग, शोध के नाम पर प्रकृति के साथ खिलवाड़ करना आरम्भ कर दिया।

और फिर अचानक उसी मानव सभ्यता के विकास के नाम पर एक विषाणु विकसित हो जाता है जो पूरे मानव जीवन को संकट में में धकेल देता है। ऐसे में यह विचारणीय है कि पिछले सौ वर्षों से मानव ने जो कुछ अर्जित किया था, उसे एक महामारी के चलते दाव पर लगना पड़ जाता है। जो मनुष्य कई पीढ़ीयों से संचित करता चला आ रहा था, वह सबकुछ बिना मूल्य खोने की कीमत पर आ जाता है। हम बीसवीं सदी के विचारकों को देखें तो महात्मा गाँधी ही हैं जो आधुनिक विकास को आपदा की दृष्टि से देखते हैं तथा इस मानव सभ्यता को आसुरी सभ्यता कहते हैं। यह महात्मा गाँधी ही हैं अपनी पुस्तक हिन्द स्वराज में मानव समाज को अति तकनीकी विकास से दूर रहने की सलाह देते हैं। हालांकि मानव सभ्यता उनकी सहजता एवं सरलता को कहाँ मानने वाली थी। उनके विचारों के उलट मानव सभ्यता ने इतनी गति प्राप्त की कि आज मनुष्य ने मान लिया था कि उसने प्रकृति को अपने बस में कर लिया है। परन्तु वर्तमान विषाणु ने विकास की स्थिति को फिर से परिभाषित करने पर विवश कर दिया है। अब यह तय करना होगा कि आज की जो तथाकथित प्रगति है, वह प्रगति है भी कि नहीं। पहली बार नेता, विचारक, वैज्ञानिक, विज्ञान और जीव विज्ञान बेसहारा और लाचारी के स्तर पर आ गये हैं।

बहरहाल इसके अलावा, जिस प्रकार से इस बहुत तेज गति की दुनिया पर एक जोरदार ब्रेक लगा है, उसनें लोगों के सामने जीव प्रवाह के नये स्वरूप भी रखे हैं। उसने मानव की तमाम कार्य निष्पादन एवं गतिविधियों के स्वरूपों को भी बदल दिया है। जीवन व्यवहार तथा सोचने विचारने के तरीकों को भी बदल दिया है। मानव इसकी कल्पना भी नहीं कर सका था कि इतने कम संसाधनों के साथ, इतने कम आपाधापी के साथ जीवन को सरलतम तरीके से भी चलाया जा सकता है तथा बिना किसी प्रतियोगिता के काम भी किया जा सकता है। शिक्षण में, आनलाईन शिक्षण एक विकल्प के रूप में सामने आता है, जो प्राथमिक स्तर से लेकर विश्वविद्यालयी स्तर तक किया जा रहा है। घर से आवश्यक कार्यालयी काम किये जा रहे हैं। जहाँ तक संभव है लोग अन्य वैकल्पिक तरीकों से काम कर रहे हैं। हालांकि यह दुनिया की यह वैकल्पिक व्यवस्था है जिसे आपद–धर्म की तरह अपनाया गया है। लेकिन संभव है कि सरकारें और कार्यालय, कार्यगति बढ़ाने के लिए इसको स्थायी रूप से अपना लें। हालांकि यह मात्र संभावना है। हम जानते हैं कि आर्टीफिशियल इन्टेलीजेंस की अवधारणा 1990 के दशक से बनने लगी थी। आज इसका रूप हमारे सामने था–गूगल असिस्टेंट, सीरी, एलेक्सा जैसे न जाने कितनी तकनीकें हमारे जीवन को नियन्त्रित करने में लगी हैं। हम आने वाले समय के समाज बल्कि अभी के समाज के बारे में विचार करें तो पायेंगे कि भले ही पूरी दुनिया पर कुछ दिनों का प्रतिबन्ध काल चल रहा है लेकिन जैसे ही यह सब कुछ ठीक होगा दुनिया का स्वरूप और तेजी से तकनीकी पर निर्भर करेगी। आगे मानव समाज पूरी तरह से तकनीकी आधारित हो जायेगा क्योंकि अभी हम तकनीकी के इस्तेमाल के उच्चतम स्तर पर हैं और इसक लाभ को प्रत्यक्ष रूप से देख रहे हैं।

***

ISSN- 2321-1504 Nagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

हम देख सकते हैं कि यह जो महामारी छूने से फैल रही है तो छुआछूत पूरी दुनिया में प्रसार करेगा। यह हमारे देश में फैली छूआछूत की परिभाषा को बदलकर वैश्विक स्तर पर नये रूप में सामने लायेगा, जिसकी चिन्ता जाति विशेष से न होकर स्वास्थ्य चिन्ताओं से जुड़ेगी। हमारा समाज इस रूप में बदलता जायेगा कि हमारे सामने फैला नायकत्व का स्वरूप किसी खेल, सिनेमा, विचारधारा आदि से होकर जीवन की सुरक्षा करने वालों के बीच से बनेगा। नायकत्व का बना बनाया ढाँचा अपने असलियत के साथ सामने आ रहा है। यह एक प्रकार से मोहभंग जैसा संक्रमणकाल चल रहा है, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति भीतर ही भीतर विचारशील है। व्यर्थताबोध, जीवन सत्य और मानव यथार्थ यहीं उसके सामने प्रकट हो रहा है। कुल मिलाकर यह संकटकाल समाज के नये मूल्यांकन के दौर से गुजर रहा है। मजदूर वर्ग अपने अस्तित्त्व पर विचार कर रहा है, मध्यवर्ग सीमित संसाधनों के सहारे जीवन को बचाये रखना चाह रहा है तथा उच्च वर्ग हालांकि सोच तो अपनी पूँजी के लिए ही रहा है किन्तु उसकी निर्भरता लोगों पर ही निर्भर करती है। वह बाजार की ओर देख रहा है। बाजार लोगों की जेब की ओर, किन्तु लोगों की जेब अनेक कारणों से तंगी के दौर से गुजर रही है।

प्रथम विश्वयुद्ध के बाद अमेरिका की आर्थिक स्थिति इसलिए मजबूत होनी आरम्भ हुई क्योंकि वहाँ कि सरकार ने आर्थिक नीतियों में बदलाव करते हुए जनता को अधिक धन उपलब्ध कराना शुरू किया। यह उपलब्धता कर्ज के रूप में नहीं थी, सम्पत्ति के रूप में थी। लोगों के हाथ से जितना पैसा बाजार में उतरेगा, पूँजीपतियों और सरकार को उतना ही लाभ होगा। इसके लिए लोगों के पास धन होना चाहिए। भारत में निम्न और मध्यवर्ग फिलहाल तंग है। यह कोरोनाकाल का सबसे बड़ा संकट है। इसलिए उच्च वर्गीय पूँजीपति भी अपने उद्देश्य नहीं पूरे कर पा रहा। वर्तमान मनुष्य केवल अपनी जरूरतों पर ही अपना धन व्यय करना चाह रहा है। कहने का अर्थ ये कि वर्तमान संकट के बीच भारत में सभी वर्ग अभी बेहतर स्थिति में नहीं है।

साहित्य पर बात करने से पहले एक बात हमें जान और समझ लेना चाहिए साहित्य समाज निर्माण से पहले व्यक्ति निर्माण का साधन होता है। ऐसे व्यक्तियों का समूह ही समाज के निर्माण की प्रक्रिया को आगे बढ़ाता है। कहने का अर्थ ये है कि जिस प्रकार हिन्दी साहित्य समाज के निर्माण में लगा है उससे न तो उससे कोई सामाजिक असर पड़ रहा है और न ही श्रेष्ठ साहित्य का ही निर्माण हो रहा है। इसे बदलना होगा। वस्तुतः तो समाज को, लिखे जा रहे हिन्दी साहित्य से कोई फर्क ही नहीं पड़ता क्योंकि उसका सामाजिक, सांस्कृतिक अथवा भारत के किसी दार्शनिक विचार के विकास में कोई योगदान नहीं होता। न ही लोक को इससे कोई लेना देना होता है। यह विकास में कोई योगदान नहीं तात्पर्य यह कि आर्थिक गतिविधियों को केन्द्र में रखते हुए लिखा जा रहा हिन्दी साहित्य मुश्किल से हजार–पाँच सौ लोगों तक ही पहुँचता है। वह भी केवल आकादमिक गतिविधि अथवा रूचि रखने वाले लोगों तक, जो अध्ययन अध्यापन में लगे हैं। उसी पर चर्चा करते सौ–दो सौ लोग हिन्दी साहित्य की दिशा तय करने लगते हैं। वर्तमान समय में लोक तक हिन्दी साहित्य की पहुँच नहीं है, और एकदम से नहीं है। लगभग पचास करोड़ हिन्दी भाषियों के बीच हिन्दी साहित्य कितनों तक पहुँचता है यह विचारणीय प्रश्न है। जबकि हम अगर वैश्विक स्तर पर देखें तो अन्य भाषाओं का साहित्य तथा अपने देश में ही अंग्रेजी का साहित्य लाखों लोगों तक पहुँचता है जिनका अकादमिक संसार से कोई लेना देना नहीं होता। हमें इस पर विचार करना होगा। हमें हिन्दी साहित्य लेखन की वैचारिकी को बदलना होगा। हम जानते हैं हमारी साहित्यिक परम्परा संस्कृत से होते हुए आज तक पहुँची है। अन्य के दुख को देख कर जो करूणा निर्मित होती है वहीं साहित्य बनता है। वाल्मिकी के भीतर क्रौंच की पीड़ा ने प्रेरित किया तो रामायण रचा गया। उस साहित्य में क्रौंच की पीड़ा राम की पीड़ा के रूप में प्रकट होती है। विचार कर सकते हैं कि जरूरी नहीं कि जो पीड़ा महसूस की जाये वही प्रकट हो। वर्तमान हिन्दी साहित्य लेखक इस प्रवृति को भूल सा गया है। वह सीधे–सीधे क्रौंच की पीड़ा को प्रस्तुत करके अपनी इतिश्री समझ लेता है। यह स्थिति 1950 के बाद के साहित्य में आती है।

यह कोरोना काल हिन्दी साहित्य के लिए परिवर्तनकारी रूप में आया है, माना जा सकता है क्योंकि यहाँ से लोगों की संवेदना, स्वभाव एवं चरित्र पर परिवर्तनकारी प्रभाव पड़ा है। लोगों की वैचारिकता में बदलाव आ रहा है। संभव है कि यह सबकुछ तुरन्त न दिखे किन्तु इसके दूरगामी परिणाम होंगे। इस कोरोनाकाल ने संवेदनशील रचनाकारों के भीतर हजारों मजदूरों की पीड़ा, लोक की संवेदना आदि द्वारा क्रोंच के वेदना की तरह काम कर दिया है, जो समय के साथ प्रकट होगा। इस काल ने लोगों जीवन पर गहरे तक असर किया है। यहाँ से अनेक साहित्य का निर्माण होने वाला है। वही भविष्य का साहित्य भी होगा।

***

ISSN- 2321-1504 Nagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

साहित्य अपनी प्रेरणा के साथ साथ यह बताता है कि मानव जीवन किन किन स्थितियों से गुजर के आया है। कोरोना ने ऐसी स्थिति पैदा कर दी कि लोग आसपास भी नहीं आ सकते। इसका असर सम्बन्धों पर पड़ा है, भावनाओं पर पड़ा है। लोगों के चरित्र पर भी पड़ा। लाकडाउन के चलते लोगों के बीच कहीं कड़वाहट बढ़ी है तो आपसी रिश्तों में मधुरता भी आयी है। लोगों ने एक भयावह समयचक्र को देखा है। यहाँ कहा जा सकता है कि एक ही प्रकार का साहित्य समाज की पूरी विविधता को समाने नहीं रख सकता है। आज कोरोना के संकट में बच्चें सर्वाधिक संकट में है। उनकी पढ़ाई, उनका बचपन सब कुछ संकट में है। मजदूर वर्ग के बच्चे तो सर्वाधिक संकट में हैं क्योंकि उनके सामने भोजन की भी समस्या है। ये सब मिल के साहित्य की पृष्टभूमि तैयार कर रहे हैं। साहित्य त्वरित प्रतिक्रिया नहीं है। हमारे चारो ओर के मजदूरों, सामान्य लोगों पर, राजनीतिज्ञों पर व्यंग्य भी लिखा जायेगा। यह संभव है कि उनके द्वारा लिखा जाये जो कि लेखक नहीं है। यह बहुत आवश्यक है कि लेखनी किसी तयशुदा हाथों से बाहर निकले और लोक तक पहुँचे। शायद तभी संभव है कि हिन्दी का साहित्य केवल अकादमिक चर्चा का विषय न रहे और सामान्य लोगों के बीच भी जाये।

अंत में हम विचार कर सकते हैं कि जिस प्रकार से महामारी का विस्तार हो रहा है, संसार नये नये विचारों को ग्रहण कर रहा है। वह अपने विकास एवं प्रवाह को बनाये रखने के लिए अपनी तकनीकियों के स्वरूप को नये रूप में इस्तेमाल करने लगा है अथवा प्रयास कर रहा है। कहने का अर्थ यह है कि मनुष्य के पास पर्याप्त संसाधन एवं उपाय हैं।

जीवन की आवश्यकता और उसकी उपयोगिता का भी अहसास है, किन्तु मनुष्य ने कभी उस विचार नहीं किया। उसके सामने ही सबकुछ है, किन्तु वह एक मायाजाल में उलझा हुआ संसार की तीव्रतम गति से अपने आप को नियन्त्रित कर रहा था। उसके प्रवाह में बह रहा था। वह अपने आपपास की चीजों को और किस प्रकार से इस्तेमाल कर सकता है इस पर विचार नहीं कर रहा था। अब वह नये विकल्पों एवं स्वरूपों की ओर विचार कर रहा है। इस कोरोनाकाल ने इसका विशेष ज्ञान कराया। महामारी ने अहसास दिलाया कि जीवन की गति इतनी तेज न भी हो सहज तरीके से संसार को चलाया जा सकता है।

किसी भी प्रकार की समस्या नहीं आयेगी। सारे तकनीकी विकास हमारे सामने हैं, औद्योगिक उत्पाद हैं, जीवन भी है। इनके बीच से आपाधापी को निकाल दिया जाये तो संसार को सुन्दर तथा प्रकृति के साथ सामन्जस्य बना के रहा जा सकता है।मनुष्य सदियों से प्रकृति का दोहन करता आया है। यह महामारी जैसे भी आयी हो इस पर बहस चलती रहेगी, लेकिन मनुष्य की क्षमता के सत्य को उजागर कर देती है, जैसा कि हमेशा से होता आया है। हालांकि मानव सभ्यता ने संघर्ष किया और अपने को स्थापित किया। अब उसे नये सिरे से मानव जीवन की आवश्यकताओं, नैतिक जिम्मेदारियों एवं कार्यप्रणाली तथा आर्थिक व्यवस्था पर विचार करना होगा।

मनुष्य सदियों से प्रकृति का दोहन करता आया है। यह महामारी जैसे भी आयी हो इस पर बहस चलती रहेगी, लेकिन मनुष्य की क्षमता के सत्य को उजागर कर देती है, जैसा कि हमेशा से होता आया है। हालांकि मानव सभ्यता ने संघर्ष किया और अपने को स्थापित किया। अब उसे नये सिरे से मानव जीवन की आवश्यकताओं, नैतिक जिम्मेदारियों एवं कार्यप्रणाली तथा आर्थिक व्यवस्था पर विचार करना होगा।

***

ISSN- 2321-1504 Nagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

कोरोना वायरस और सोशल मीडिया

डॉ .नितीन बी .कुंभार
सहायक प्राध्यापक ,हिंदी विभाग
कला, वाणिज्य एवं विज्ञान महाविद्यालय,धारुर
जि .बीड (महाराष्ट्र)

वैश्विक महामारियां अपने समय और भविष्य को प्रभावित करती आई है. राजनीति और भूगोल के साथ समाज और साहित्य भी इससे अछूता नहीं रहा है. दुनिया जब किसी विपदा में घिरी है तो सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों में भी उनका असर हुआ है. कोरोना सबकी जिंदगी बदलने वाला है। यह परिवर्तन साहित्य की दुनिया में भी दिखेगा। वस्तुतः साहित्य का संसार मूलरूप से लेखकों, प्रकाशकों और पाठकों से मिलकर बनता है। इसमें लेखक और पाठक जहाँ इसका बौद्धिक क्षेत्र निर्मित करते हैं, वहीं प्रकाशकों के लिए इसका वितरण और वाणिज्य महत्वपूर्ण होता है। अगर इनमें से कोई भी एक कड़ी अपनी भूमिका को लेकर ईमानदार न रहे तो साहित्य का संसार प्रभावित होगा। अब कोरोना वायरस किस प्रकार इस दुनिया में खलबली मचा रहा है, इसे देखना दिलचस्प होगा।

हिंदी साहित्य के भक्त कवि रहीम ने कहा है कि–रहिमन विपदा हूँ भली, जो थोरे दिन होय। हित अनहित या जगत में, जान परत सब कोय।

कोरोना के सन्दर्भ में रहीम की उपरोक्त पंक्तियाँ पुर्णतः सार्थक प्रतीत हो रही हैं। कोरोना का प्रारंभ चीन के वूहान शहर से हुआ है, चीनी सरकार युद्ध स्तर पर इस महामारी से लड़ रही है, भारत सहित अनेक पूर्वी देश संकट के इस समय में चीन के साथ खड़े हैं वहीँ पश्चिमी मीडिया कोरोना के सम्बन्ध में विद्वेषपूर्ण विष वमन कर रही है, जो सर्वथा अनैतिक एवं अमानवीय है। कोविड–19 एक नया वायरस है। इसका अब तक कोई टीका नहीं बना है। लेकिन बुनियादी स्वच्छता और रोकथाम के उपाय बहुत मायने रखते हैं। भारत में केरल की काफी प्रशंसा हुई है कि उसने कोविड–19 के मामलों को कैसे संभाला है। लेकिन हर भारतीय राज्य केरल नहीं है, जिसके पास साक्षर आबादी और उत्कृष्ट स्वास्थ्य प्रणाली है। अगर इस वायरस का संक्रमण सामान्य आबादी में फैलता है, तो रोकथाम के उपाय बेहद महत्वपूर्ण होने वाले हैं, क्योंकि ज्यादातर राज्यों में स्वास्थ्य प्रणाली उतनी मजबूत नहीं है। तेज शहरीकरण ने कमजोर शहरी स्वास्थ्य प्रणालियों पर जिस तरह दबाव बनाया है, उसमें महामारी को कैसे रोकना है, सिर्फ यह जानना पर्याप्त नहीं है, लगातार सतर्कता और क्रियान्वयन ही सब कुछ है।

घर बैठे यह लोग शहर के अलावा दूसरे राज्यों के लोगों के साथ टाईअप बनाया हुआ है, जिससे कहीं पर भी किसी व्यक्ति को कोई परेशानी हो रही हो, तो उसकी जानकारी एक दूसरे के साथ शेयर की जा रही है। कोरोना संकट की इस घड़ी में हर कोई एक–दूसरे का मददगार बना है। कोई भूखे को खाना खिला रहा तो कोई आर्थिक मदद दे आश्रय दिला रहा। इन सबके बीच लोगों की जरूरत बन चुकी सोशल मीडिया के विभिन्न माध्यम भी अपने यूजर्स के मददगार बने हैं। अलग–अलग माध्यमों से उपयोगकर्ताओं को कोरोना वायरस (कोविड 19) से जुड़ी ताजी जानकारी मुहैया कराई जा रही। यही नहीं सभी बैंक समेत अन्य संस्थान भी अपने ग्राहकों को एहतियात बरतने की नसीहत दे रहे हैं।

देश में कोरोना वायरस के संक्रमण से जुड़ी जानकारी हर कोई पाना चाह रहा है। एक–एक दिन में लाखों लोग इसकी जानकारी ले रहे हैं। इसके लिए रोजाना गूगल सर्च व अन्य सोशल वेबसाइट का इस्तेमाल हो रहा है। सोशल अकाउंट भी खंगाले जा रहे। इससे उपयोगकर्ताओं को ताजा जानकारी मिल रही है। माना

सूचना का सोर्स उचित होना चाहिए

स्थानीय, राष्ट्रीय और वैश्विक संस्थाओं से कनेक्ट करें. नई जानकारी और सूचनाएँ पाने के लिए विश्व स्वास्थ्य संगठन या आपके स्वास्थ्य मंत्रालय जैसे भरोसेमंद सोर्स पर ही यकीन करें.

***

अफवाहें फैलने से रोकें:–

आपको मिलने वाले मैसेजेस पर यकीन न करें, हो सकता है कि कोरोना वायरस के बारे में आपको मिल रहे हर मैसेज में सही जानकारी न हो. दूसरे भरोसेमंद और ऑफिशियल सोर्सेस, फैक्ट चेकर्स या 1 (727) 2912606 पर कॉल करके इंटरनेशनल फैक्ट चेकिंग नेटवर्क (IFCN) के फैक्ट चेकिंग चौटबॉट से अपनी जानकारी वेरिफाई करें. अगर आपको लगे कि मैसेज में कोई भी जानकारी सच नहीं है, तो उसे फॉरवर्ड न करें।

कम्युनिटी लीडर:–

हम भी कम्युनिटी लीडर सपोर्ट प्रदान करने में आपकी मदद कर रहे हैं. जानें कि ऐसे समय में जब सभी लोग कोरोना वायरस से परेशान हैं, ऐसे में आप WhatsApp का इस्तेमाल करके अपने परिजनों के साथ कैसे जुड़े रह सकते हैं।

स्वास्थ्य सेवा पेशेवर:–

इस महामारी के दौरान जब सभी को एक–दूसरे से दूरी बनाए रखनी है, ऐसे में आप अपने मरीजों और साथ काम करने वालों से WhatsApp पर जुड़ सकते हैं जो कि इसका इस्तेमाल परिजनों और दोस्तों के साथ जुड़े रहने के लिए कर रहे हैं, अपने मरीजों से जुड़े रहें और WhatsApp का इस्तेमाल जिम्मेदारी से करें. सिर्फ उन यूजर्स से बातचीत करें, जिन्हें आप जानते हैं और जो आपसे मैसेज पाना चाहते हैं. मरीजों से अपना फोन नंबर सेव करने के लिए कहें और ग्रुप्स में ऑटोमेटेड या प्रचार से जुड़े मैसेज न भेजें. अगर आप इन आसान तरीकों को नहीं आजमाते हैं, तो हो सकता है कि अन्य यूजर्स आपकी शिकायत कर दें और आपका अकाउंट बैन हो जाए.बहुत सारे सवालों को बेहतर ढंग से मैनेज करने के लिए जरूरी जानकारी, जैसे खुलने और बंद होने का समय बताएँ, अक्सर पूछे जाने वाले सवाल स्टोर करें. हम WhatsApp Busin मे ऐप का इस्तेमाल करने की सलाह देते हैं जो कि मुफ्त में डाउनलोड किया जा सकता है।

शिक्षक:–

आप चाहे स्कूल में पढ़ाते हों या कॉलेज में, अगर पढ़ाई प्रभावित हो रही हो, तो अपने विद्यार्थियों से WhatsApp के माध्यम से जुड़ें. अपने विद्यार्थियों से जुड़े रहिए और WhatsApp का इस्तेमाल जिम्मेदारी से करें सिर्फ उन यूजर्स से बातचीत करें, जिन्हें आप जानते हैं और जो आपसे मैसेज पाना चाहते हैं. विद्यार्थियों से अपना फोन नंबर सेव करने के लिए कहें और ग्रुप्स में ऑटोमेटेड या प्रचार से जुड़े मैसेज न भेजें. अगर आप इन आसान तरीकों को नहीं आजमाते हैं, तो हो सकता है कि अन्य यूजर्स आपकी शिकायत कर दें और आपका अकाउंट बैन हो जाए।

गैर–लाभकारी संस्थान और स्थानीय सरकारें:–

इस महामारी के दौरान जब सभी को एक–दूसरे से दूरी बनाए रखनी है, ऐसे में आप अपनी कम्युनिटी से WhatsApp पर जुड़े रह सकते हैं – जिस ऐप का इस्तेमाल करके वे अपने परिवार और दोस्तों से कनेक्टेड रहते हैं अपने लोगों से जुड़े रहिए और WhatsApp का इस्तेमाल जिम्मेदारी से करें. सिर्फ उन यूजर्स से बातचीत करें, जिन्हें आप जानते हैं और जो आपसे मैसेज पाना चाहते हैं. लोगों से अपना फोन नंबर सेव करने के लिए कहें और ग्रुप्स में ऑटोमेटेड या प्रचार से जुड़े मैसेज न भेजें. अगर आप इन आसान तरीकों को नहीं आजमाते हैं, तो हो सकता है कि अन्य यूजर्स आपकी शिकायत कर दें और आपका अकाउंट बैन हो जाए.सवालों को बेहतर ढंग से मैनेज करने के लिए, बिजनेस की जरूरी जानकारी को बिजनेस प्रोफाइल में डालें और साथ ही कैटलॉग में अपनी सर्विसेस की डीटेल्स शेयर करें. हम आपको WhatsApp Busin में ऐप का इस्तेमाल करने की सलाह देंगे, इसे मुफ्त में डाउनलोड किया जा सकता है।

स्थानीय बिजनेस:–

इस संक्रमण के चलते आपको काफी चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है और ऐसे में अपने बिजनेस को मैनेज करना काफी मुश्किल साबित हो सकता है. WhatsApp पर अपने ग्राहकों से जुड़े रहें. वे इस ऐप का इस्तेमाल अपने परिजनों और दोस्तों से जुड़े रहने के लिए भी कर रहे हैं अपने ग्राहकों से जुड़े रहिए और WhatsApp का इस्तेमाल जिम्मेदारी से करें. सिर्फ उन यूजर्स से बातचीत करें, जिन्हें आप जानते हैं और जो आपसे मैसेज पाना चाहते हैं. ग्राहकों से अपना फोन नंबर सेव करने के लिए कहें और ग्रुप्स में ऑटोमेटेड या प्रचार से जुड़े मैसेज न भेजें. अगर आप इन आसान तरीकों को नहीं आजमाते हैं।

***

कोरोना महिमा

प्रा. धन्य कुमार जिनपाल बिराजदार
65 कासार सोसाइटी, आई. एम. एस. के पास,
पुराना सोलापुर, सोलापुर, महाराष्ट्र 413008
मोबाइल 9423330737
ईमेल djbirajdar@gmail-com

रोज की तरह मैं उस दिन भी घूमने गया था। गाँव के बाहर लगभग तीन किलोमीटर दूर ....। पर उस दिन सबके साथ मैं भी चकित रहा। यूं तो सुबह–सुबह घूमने वाली हमारी टोली में पांडे, यादव, मुल्ला तथा पोतदार ही साथ में होते हैं। हम पांच–छः मित्रों का गिड्डा .... बुढ़ापे में भी उछल कूद करते हैं। यादव प्राणायाम शुरू करते हैं तो किसी छोटे भाथे की तरह आवाज आती है। आंखें बंद करके भी मैं हंसी को रोक नहीं पाता। "वैद्य जी! डिस्टर्ब मत करना प्लीज !" अंग्रेजी में उनका वाक्य भारतीय प्राणायाम का विरोध दर्शाता। लगभग बीस मिनट प्राणायाम करने के बाद हम सभी आध्यात्मिक तथा सामाजिक चर्चा करते हुए घर की ओर लौटते। .... घर की लौटते हुए अचानक ठिठक गए.... अजनबी लोगों के अजीब शब्द सुनाई दे रहे थे,

" कोरोना माई! कोरोना माई!!
बोलो अब हमें कौन सताए!
कौन सताए हमें कौन सताए
कोरोना माई! कोरोना माई!!
मेरी हो मइया किरपा करे
दीन दुखियों का दुख तू हरे
दीन दुखियों का दुख हरे तो
बीमारी जड से उखड जइयो
कोरोना माई! कोरोना माई!! "

सुनते ही मास्क ठीक लगाते हुए पांडे जी ने पूछा, " यहाँ तो पहली बार ऐसी पूजा होती नजर आ रही है। "

" पांडे जी! पूजा के बाद प्रसाद के रूप में इम्युनिटी पावर बढ़ाने का प्रसाद भी मिलेगा।" यादव के शब्द सुनते ही सभी हंस पड़े। हंसते–हंसते हमारे पैर उसी दिशा में कदम बढ़ा रहे थे। हम सभी की जिज्ञासा थी, उनकी पूजा देखें ताकि किस मंदिर में पूजा हो रही है। यूं हमने खामोश रहना तय किया था ताकि उनकी पूजा में अवरोध न आए। झाड़ – झांखर भरी पगडंडी से होते हुए हम उस पूजा स्थल पर पहुंच गए। देखते तो क्या मंगल कलश में पानी, थाली हल्दी, कुमकुम , बादाम, सुपारी, लौंग, फूल, कपूर, धूप से भरी थी। किसी महिला के हाथ में शंख और किसी के हाथ में घंटी!

हमारे पहुंचते ही उनकी आवाज़ धीमी हो गई। सिर पर पल्लू संभालते हुए किसी स्त्री ने गर्दन हमारी ओर करते हुए इतना ही कहा ," भैया जी! आप भी चाहते हो तो फूल चढ़ा सकते हो। लेकिन दूर से....। "

"अरी सुमंगला, यह क्या कह रही हो, बुढ़ों ने स्नान भी तो नहीं किया।" आवाज परिचित लगी, पर हमारी ओर पीठ होने के कारण पहचान नहीं पाए।

***

ISSN- 2321-1504 Nagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

हम सभी ठीक से मास्क लगाते हुए दर्शकों की भूमिका निभाते रहे। कोरोना को उन्होंने देवी तक बनाने की हिम्मत की थी। पांच औरतों में एक आवाज तो परिचित लग रही थी पर सिर के साथ आधा चेहरा भी पल्लू से ढका होने के कारण पहचान नहीं पाया। "अच्छा हुआ भगवान ने....सॉरी 'कोरोना मैया' ने मास्क के बदले चेहरा ढकने के लिए पल्लू तो दिया है।" मैं मन– ही–मन सोच रहा था।

गाँव के बाहर बरगद के पेड़ के नीचे किसी पत्थर के सामने बैठकर पूजा करती औरतों को हम सब ने पहली बार सुबह सात बजे देखा था। मुल्ला जी और पोतदार जी का ध्यान पूजा की ओर था, पर मेरा ध्यान परिचित आवाज की ओर था।

पूजा चल रही थी कि गाँव की पांच – छः औरतों का आगमन हुआ, फिर भी पूजा कर रही औरतों में से किसी ने भी गर्दन मोड़कर पीछे देखने का साहस नहीं किया।

कांपते हाथों से पता चला कि पंडिताइन के रूप में कोई वृद्धा अपनी भूमिका निभा रही है। पत्थर पर पानी उंडेलने के बाद हल्दी, कुमकुम चढ़ाया गया, फूल चढ़ाए गए, बादाम – सुपारी भी चढ़ाए गए। दीया जला रहे थे कि हवा का झोंका आया और उन्हें हमारी याद आई।

" भैया! मैच बॉक्स हो तो देना। सारी तीलियाँ खत्म हो गई हैं।" परिचित आवाज ही थी.... पर हम में से किसी के पास मैचबॉक्स नहीं था। फिर भी मुल्ला जी ने उन्हें थोड़ी देर रुकने के लिए कहा और गायब हो गए। मैं कुछ समझ नहीं पा रहा था। देर से आई औरतों में से एक के हाथ में भोग था। भोग चढ़ाने के लिए लाई थाली से आती सौंध मुझे बेचैन कर रही थी। सुबह के आठ बज रहे थे। रोज के नाश्ते का समय भी हो गया था। मैंने यादव जी की ओर देखा। "वैद्य जी, थोड़ी देर रुकिएगा। भोग चढ़ाकर जाएंगी तो आखिर हमें ही तो मिलेगा प्रसाद।" चुटकी काटते हुए यादव जी ने कहा। मैं अपनी हंसी रोक नहीं पाया।

"मेरी कोरोना मइया, तेरी हो दया
कौन हमें देगा ऐसा यह साया।।
मेरी ओ मइया! मेरी ओ मइया!!
हो जाए हमरी लंबी उमरिया
कोरोना मइया। कोरोना मइया।।"

उनकी प्रार्थना हम सभी सुन रहे थे कि मुल्ला जी किसी किसान की झोंपड़ी से मैचबॉक्स ले आए ले आए। उनके हाथ से मैचबॉक्स लेते हुए मुझे परिचित आवाज का परिचित चेहरा नजर आया। मिसेज किशनचंद....सरपंच की पत्नी!

"भाभी, आप इधर सब के साथ पूजा करने के लिए....।" मेरे शब्दों को बीच में ही रोकते हुए मिसेस किशनचंद ने कहा," अरे हां वैद्य जी... दो–चार दिन पहले वनिता के सपने में कोरोना मइया आई थी। मइया के रूठने से ही दुनिया में मरीजों की संख्या बढ़ती जा रही है।"

उनके अंधविश्वास का उत्तर मेरे पास नहीं था फिर भी मैंने कहा," पर भाभी अपने गाँव में तो मरीज नहीं है, फिर भी यह पूजा ?"

"अगला ठोकर खाए पिछला बुध पाए, दूसरे के अनुभव से ही आदमी अकलमंद बनता है वैद्य जी! मुंबई में कितने पढ़े–लिखे लोग हैं जो मुंबा देवी की पूजा करते हैं, करनी का फल वे भुगत रहे हैं। खैर मानना कि वनिता के सपने में कोरोना मइया आई थी और हमने यह पूजा करना तय किया।"

***

ISSN- 2321-1504 Nagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

"पर सरपंच साब को तो...."

"तुम पुरुष क्या जाने ये बातें, बस हमेशा डिंग हांकते रहते हो। शेखी बघारने से काम नहीं बनता है वैद्य जी।"

कोरोना विषाणु इन महिलाओं की चपेट में आकर कब माई का रूप ले चुका है हम में से कोई समझ नहीं पाए थे, किंतु तभी किशनचंद की पत्नी के साथ आई बुढ़िया ने अपने सिर पर टोकरी रखी और पेड़ की परिक्रमा करती रही। चार–पांच परिक्रमा लगा रही थी कि दौडती हुई कोई बालिका आई और उसने बुढिया से कहा, "दादी माँ, अम्मी ने अभी–अभी आंखें खोली हैं और प्रलाप करते हुए तुम्हारे साथ कोरोना माई का भी नाम ले रही है। तुम्हें घर बुलाया गया है, जल्दी चलना।"

"देखा मैंने क्या कहा, यह कोरोना माई की करुणा है कि मुन्नी की माँ होश में लौट रही है।"

"हां...हां....कोरोना माई की करुणा है। बोलो कोरोना माई की...."

"जय!" एक साथ सभी ने जय जय कार की।

तभी सरपंच की पत्नी हमारे पास आ गई। बाकी औरतों के चेहरे मैं ठीक से पहचान नहीं सका....पल्लू से ढके थे.... ऐसा पहली बार हुआ था। सरपंच की पत्नी का कहना था कि पूजा करने से कोरोना माई कृपा करेगी और गाँव कोरोना मुक्त हो जाएगा। हमें इतना तो पक्का मालूम था कि मुंबई–पुणे से लौटे लोगों को गाँव के विद्यालय में रखा गया है।

चौदह दिनों के लिए। उनमें से तो किसी के भगवान को प्यारे होने का समाचार नहीं मिला था। फिर भी पूजा का अर्थ हम समझ नहीं पाए।

हमारे समझने से पहले ही दीया जलाते हुए पूजा संपन्न कर सभी औरतें गाँव की पगडंडी पर कदम बढ़ाती रहीं। सबसे आगे सरपंच की पत्नी थी। वह उनके साथ आठ–दस कदम चलते हुए वापस हमारी ओर लौट पड़ी। हम कुछ समझ नहीं पाए, फिर भी हमारे पास आते ही सरपंच की पत्नी ने कहा,

" भैया जी! आप यह कुछ समझ नहीं पाते। हम में से चार तो गाँव की मेंबर और मेंबर की पत्नी हैं। पूजा के बाद यह प्रसाद गाँव में सभी को बांटा जाएगा। और (ऊंची आवाज में) याद रखना आप इस कोरोना के झमेले में पढ़ना मत। लॉकडाउन खुलते ही चुनाव है। कुछ दिन पहले हमने गाँव में गेहूँ – चावल बांटा था। जनता का हमें समर्थन है और हमारी यह आगामी चुनाव की तैयारी है। आप सभी रिटायर्ड सरकारी नौकर हो, बस अपने–अपने घर का विचार करना। पंद्रह – बीस वर्षों से करते आ रहे हैं सत्ता का कारण आप जैसे दो–चार पढ़े लिखे नहीं बल्कि गाँव की नादान – अनपढ़ जनता है। आई बात समझ में!" सरपंच की पत्नी के दो कदम आगे बढ़ाते ही सामने से सरपंच और दो मेंबर हमारी ओर आते हुए नजर आए। हम सबने एक साथ प्रार्थना की, "कोरोना माई! तुम ही नादान औरतों को माफ करना। हम इनके कोरोना भेद जानने के लिए बेताब हैं, चुनाव में जरूर दर्शन देना। हे कोरोना माई! गाँव के विकास की लाज तुम ही रखना।" हम सबकी नजर पूजा स्थल की ओर थी। सरपंच और मेंबर की आहट सुनते ही हमने एक साथ इतना ही कहा, "कोरोना माई की जय! कोरोना माई की जय!!" हमारी जय जय कार सुनते ही सरपंच ने भी बिल्कुल हमारे पास आकर हंसते हुए कहा, "कोरोना माई की जय!"

***

ISSN- 2321-1504 Nagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

कहानी

वायरस

डॉ. अनिता एस. कर्पूर
लेखिका एवं सहप्राध्यापिका, हिन्दी विभाग,
वासवी मंदिर रास्ता, जैन कॉलेज–सीजीएस ,बेंगलूरु।

आज अचानक अस्पताल की चहल पहल के बीच शबाना को बचपन के दिन याद आते है। उसकी अम्मी ने उसे बताया था कि शबाना के जन्म लेने के बाद घर में कोई भी खुश नहीं था। जैसे–जैसे शबाना बड़ी होती गई वह बाहर सबके साथ खेलने जाती थी। जोर–जोर से हँसती थी। हर बात पर उसको टोका जाता था। उसके अब्बू हमेशा कहते थे कि 'शबाना लड़कियों की तरह रहना सीखो। परदा भी करलो। शबाना अपने अब्बू से पूछती क्यों अब्बू हमें क्यों परदा करना है? उसके अब्बू उसे समझाते थे कि वह उसे दुनिया की नजरों से बचाना चाहते है। वे कहते है कि हमारी शबाना लाखों में एक है। शबाना बहुत ही सुंदर है। पता है रुमाना बेगम यह तो विश्व सुंदरी है। शबाना मेरा गुरुर है।

शबाना ने अपने अब्बू की बात सुनकर सोचा कि, अब्बू सही कह रहे है और उसने जोर से हँसना छोड दिया और परदा भी करने लगी। अब्बू की हर बात उसके लिए लकीर बनती गई। अब स्कूल खत्म करते ही उसे आगे पढ़ना था। अब्बू ने आगे पढ़ने से मना कर दिया था। उसने अम्मी से पूछा कि, क्यों मैं आगे नहीं पढ़ सकती। मैंने आप लोगों की सारी बात मान ली है। आगे भी मैं आपकी इज्जत का खयाल रखूँगी। किसी भी हालात में उसके अब्बू नहीं माने।

एक दिन सुपर मार्केट में उसकी मास्टरनी की मुलाकात रेहमान साहब से होती है, वे उन से शबाना के बारे में पूछती है, शबाना को किस कॉलेज में दाखिला करवाया। पढ़ने बहुत तेज और सुशील बच्ची है रहेमान साहब।

रेहमान जी ने कहा, सोच रहे है। लड़की आगे पढ़कर क्या करेगी। वैसे भी उसे चूल्हा–चौका ही करना है। वह अपनी अम्मी से कुछ घर के काम ही सीख ले। अरे! रेहमान साहब, आप किस समाज की बात कर रहे है? क्या पता यह पढ़ाई जिंदगी में उसे काम आ जाए। आप भी ना आज भी पुराने रेहमान ही रहे है। आप बताइए अगर मैंने पढ़ा नहीं होता तो क्या ऐसे मैं काम कर सकती थी। जिंदगी में पढ़ना भी जरुरी होता है। आपको पता ही है कि मेरे शौहर नहीं रहे। अब मैं बैठकर रोती या फिर अब्बु के लिए परेशानी बन जाती। मैं नहीं चाहती कि शबाना की जिंदगी भी ऐसी हो। लेकिन खुदा न खास्ता कुछ जिंदगी में ऐसा हो जाय तो उसे अपने पैरों पर खड़ा होने का हक है। आप भी ना! मेरी बात पर गौर फरमाइयेगा, कहते हुए फरीदा बेगम वहाँ से काम के लिए निकल पड़ती है।

रेहमान के कानों में फरीदा बेगम की बातें गूँज रही थी। फिर उन्होंने शबाना को बुलाकर कहा, देखो तेरा दाखिला मैं अल्ला मिन कॉलेज में करवा रहा हूँ, तुम्हें मन लगाकर पढना है। सुना है, वह लडकियों का ही कॉलेज है। सुन! तुम्हें हमारी इज्जत का खयाल रहे। शबाना बहुत खुश होकर अब्बू का शुक्रिया अदा करती है और वादा करती है कि वह कभी गलत काम नहीं करेगी जिससे अब्बू को चार बातें दूसरों से सुननी पडें। कॉलेज में उसकी मुलाकात शम्मा से होती है। दोनों एक ही कक्षा में बीकॉम की पढ़ाई कर रही है। दोनों में गहरी दोस्ती होती है। शम्मा के घर वाले स्वतंत्र विचारों वाले थे। वे शम्मा को किसी भी काम के लिए आपत्ति नहीं करते थे। शम्मा को खुद ही कुछ काम करने पसंद थे। वह भी परदा रखती थी। उसको किसी ने नहीं कहा था। वह भी दिखने में सुंदर थी। शबाना का तो क्या कहना था? वह पढ़ने भी अच्छी थी और प्रतिभाशाली भी थी। उसे तकनीक ज्ञान भी था। शम्मा को इतना तकनीक के बारे में पता नहीं था। एक दिन शबाना को फेस बुक पर एक लड़के ने दोस्ती के लिए दरख्वास्त की थी। शम्मा के मना करने के बावजूद उसने दोस्ती को कबूल किया। उसका बचपना ही था। उसने धीरे–धीरे बात करना प्रारंभ किया। उसे स्वपनिल पसंद आने लगा था। उसने फेसबुक पर ही फोन नंबर लिया, फिर बात चीत का दौर शुरु हुआ और दोनों एक–दूसरे के करीब आते गए।

***

ISSN- 2321-1504 Nagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

एक दिन उन दोनों ने मिलने के बारे में सोचा और जगह भी तय कर दी। शबाना ने सोचा कहीं कुछ गलत न हो जाए। शबाना के सोचने के मुताबिक ही हुआ। स्वप्निल ने शादी का प्रस्ताव रखा। शबाना ने कहा भी देखो, मैं मुसलमान हूँ और तुम हिन्दू दोनों के घर वाले नहीं मानेंगे। अब्बू को मैं क्या कहूँगी? उससे अच्छा है कि हम दोनों अलग हो जाय। स्वप्निल किसी भी तरह नहीं माना। हमारे धर्म अलग है तो क्या हो गया? हम इन्सान ही तो है।

शुरु में ही हमें पता था कि हम दोनों अलग–अलग धर्म से है। जब दोस्ती की थी तब यह सब नहीं सोचा था तो अब क्या डरना। जो भी होगा देखा जाएगा। तुम चिंता ना करो। कहते हुए स्वप्निल शबाना के कंधे पर हाथ रखता है। मैं तुम्हारे घर पर आकर अब्बा जान से बात करुँगा। ठीक है, जैसे तुम सही समझो। मेरे अब्बा जान बहुत गुस्सैल किस्म के इन्सान है। कहते हुए शबाना उसी दिन स्वप्निल को अपने घर ले जाती है। स्वप्निल को साथ में देख कर रेहमान तो आगबबूला हो गया।

वह जोर से चिल्लाते हुए कहने लगे, अरी ओ खातून देख तो हमारी लाडली किस के साथ आई है। इसी बात का मुझे डर था। वही होना था और हो गया। मैंने उसे लड़कियों के कॉलेज में दाखिला करवाया। कोई भी फर्क नहीं पड़ा। शबाना मौके की नजाकत को देखकर चुपचाप अपनी अब्बु की बात को सुन रही थी। स्वप्निल भी वहाँ था। उसे अजीब लगा कि उसके अब्बु ने पूछा तक नहीं कि क्यों आए हो? यूँ भड़क गये। फिर भी स्वप्निल ने हिम्मत कर के कह दिया कि वे शादी करना चाहते है इस लिए उनकी इजाजत चाहिए। गुस्से में अब्बु ने शबाना का हाथ पकडकर बाहर दरवाजे की ओर खींचकर ले गए वह चिल्लाती रोती सारी बातें कह रही थी।

रेहमान साहब ने उसकी बातें भी नहीं सुनी और कहा, आज के बाद इस घर में तुम्हारे लिए कोई जगह नहीं तुम हमारे लिए मर चुकी हो। अरी ओ ! खातून, शबाना की अम्म्मा आज के बाद तुम उसका इस घर में जिक्र नहीं करोगी। गुस्से में वह घर के अंदर चले गये। रुमाना बेगम आंगन में दरवाजे के पास खड़े रो रही थी।

शबाना स्वप्निल के साथ वहाँ से चली गई। दूसरी ओर स्वप्निल के घर में भी वही हुआ। अब दोनों ने तय किया कि अब वे दोनों दूसरे घर में रहेंगे। शबाना गर्भवती हुई। स्वप्निल की खुशी दुगुनी हुई। ऐसे ही शबाना के दिन भी बीतते गये। उसका नवाँ महीना चल रहा था। वे डॉक्टरनी को दिखा कर आए थे।

सब कुछ ठीक चल रहा था। अचानक पूरे देश में महामारी फैल गई थी। स्वप्निल भी घर से काम कर रहा था। यह युद्ध किसी व्यक्ति से नहीं बल्कि एक वायरस से थी। जो आदमी को अंदर से खा जाता है। अब देश को उस बायरस के खिलाफ लड़ना है। कई लोग मारे गए है। प्रधानमंत्री नहीं चाहते कि लोग मारे जाए। यह सिर्फ भारत देश में ही नहीं बल्कि पूरी दुनिया में फैल गया है। एक छोटे से वायरस ने पूरी दुनिया को हिला दिया है। यह वायरस चीन देश से आया हुआ है, ऐसा लोग मानते है। जहाँ से भी हो लेकिन लोगों को मार रहा है। इसका कोई तोड़ नजर नहीं आ रहा था। उस वायरस का नाम कोरोना है। हमारे प्रधानमंत्री ने सोचा इसका मतलब कोई रोड़ पर ना निकले। सबको उन्होंने घर पर रहने के लिए आदेश दिया है। फिर भी कुछ सफाई का ध्यान रखना जरुरी है, ऐसा भी उन्होंने कहा है।

एक दिन शबाना ने कचरा फेंकने के लिए दरवाजा खोला। उसे दरवाजे के बाहर एक कागज पडा दिखाई दिया। उसने कागज उठाया और बाहर फेंकने गई। बस और वह खाँसने लग गई। तुरंत स्वप्निल उसे डॉक्टरनी के पास ले गया और उसे अस्पताल में भर्ती करवा दिया। डॉक्टरनी साहिबा सारी जाँच करवा रही थी। समय ऐसा था कि एक तो गर्भवती स्त्री, उस पर कोविड नाम का वाइरस का डर डॉक्टरनी को था।

डॉक्टरनी साहिबा के आते ही शबाना चौंक कर उठ जाती है, अरे! आप डॉक्टरनी साहिबा? यह चहल–पहल कैसी है? लोग क्यों रो रहे है? क्या हुआ है? मेरा बच्चा तो ठीक है ना? उसे तो कोई परेशानी नहीं हुई है न! स्वप्निल कहाँ है? डॉक्टरनी साहिबा ने सयम लेते हुए कहा, आपको कुछ नहीं हुआ है। स्वप्निल को दवाई लेने भेजा है, बस आता ही होगा। हमारी शबाना बेगम के बच्चे को कुछ हो सकता है। तुम आराम करो। तुम्हें आराम की जरुरत है। दूसरों की परवाह नहीं करना। तुम आराम करो। नर्सइन का खयाल रखना। मैं इन के शौहर से मिलकर दवाई लेकर आती हूँ।

***

शबाना निश्चिंत होकर सोने का प्रयास करती है। वह एक बुरा सपना देखती है। वह देखती है कि, उसका बच्चा खेलते हुए फिसल जाता है और माँ–माँ कहकर पुकारता है। वह उसे बचाने के लिए दौड़ती है। वह कान्हा संभल कर कान्हा–कान्हा कहते हुए उठ जाती है। नर्स उसका हाथ थाम लेती है। फिर वह रोते हुए अपने बुरे सपने के बारे में नर्स को बताती है। तुम्हारे बच्चे को कुछ नहीं होगा। लगता है तुम उसके बारे में बहुत सोच रही हो। शबाना को सच में लगा कि वह नाहक ही परेशान हो रही है। वह बाहर के शोर को देखकर नर्स से सवाल करती है कि बाहर इतना शोर गुल क्यों है? कहते हुए नर्स उनका तकिया ठीक करती है। फिर नर्स उसकी बात को अनसुना कर के कहती है, आप यह दवाई ले लीजिए।

सब ठीक हो जाएगा। शबाना दवाई लेने के बाद फिर से उससे वही सवाल करती है, नर्स ने बताया, अरी !...मेडम यह अस्पताल है। चहल–पहल तो रहेगा। कभी कोई खुश होता है तो कोई दुःखी होता है। यहाँ तो सब चलता ही रहता है। आपको तो पता ही है कि आजकल ऐसी महामारी फैली है कि लोग मर रहे है ।

उसकी कोई दवाई नहीं है। हमारे प्रधानमंत्री भी लोगों को बचाने की लगातार कोशिश कर रहे है। अब लोगों को खुद भी समझना चाहिए। आजकल तो जिनको यह बीमारी हुई है, वही इसे फैला रहा है। सोच रहा है कि, मैं तो मर रहा हूँ तुम भी मरो। बहुत गलत बात है न! इंसान इतना खुद गर्ज कैसे हो सकता है? इंसान अपनों को ही नष्ट करने पर तुला है। उन्हें मात्र कुछ नियमों का पालन करना होता है। वे लोग नहीं कर रहे हैं। जिसका प्रभाव बच्चों पर भी पड़ रहा है। लोग थूक लगाकर चीजों को बेच रहे है। उनका उद्देश्य एक मात्र दूसरों में भी यह बीमारी फैलनी चाहिए। दूसरे मर भी जाए तो उनको कोई लेना–देना नहीं है। सच में घोर कलयुग आ गया है। अब तो लगता है प्रलय होकर ही रहेगा।

शबाना उसकी बातें सुन रही थी। अचानक बीच में उससे पूछती है, आपने सच कहा कि पूरे देश में लोकडाउन चल रहा है। हमने तो यह भी सुना कि प्रधानमंत्री सब गरीबों की मदद के लिए राशन भी दे रहे हैं। हमारे प्रधानमंत्री बहुत अच्छे है। लगता है मानो वह देश के लोगों को ही अपना परिवार मानते है। बात कर ही रहे थे कि नर्स को अपनी बहिन कमला का फोन आया। उसने कहा, शबाना जी आप आराम कीजिए मैं अपनी बहिन से बात करके आती हूँ। उसकी बहन कमला फोन पर रो रही थी। नर्स उसे सांत्वना देते हुए कह रही थी कि, मत रोना। हर एक का नसीब अच्छा नहीं होता। तुम जीजा को क्यों नहीं समझाती हो? तुम्हें क्यों मारते है? उनका क्या अधिकार है? अगर पैसे नहीं है तो हमारे प्रधानमंत्री जो मदद कर रहे है, उसे लेना चाहिए। मानते है कि मुश्किल की घड़ी है। टल जाएगी, तुम चिंता मत करना। शबाना को उसकी बाते सुनकर नींद नहीं आती है। वह नर्स को बुलाकर पूछती है कोई परेशानी है क्या? नर्स ने कहा, जी वो मेरी बहिन के पति ऑटो चलाते है। अब इस लोकडाउन में कोई भी नहीं आ रहा है। कमाई नहीं हो रही है। तो–तो शबाना ने पूछा, तो क्या हुआ है? कहते हुए एक बार जोर से साँस लेती है। तुरंत नर्स ने उनका तकिया ऊपर करते हुए कहा, आप बात मत किजिए, मैं बताती हूँ। वो मेरी बहिन को मार रहे है। कह रहे है कि तुम्हारे पिताजी के घर चली जाओ मेरे पास तुम्हें खिलाने के लिए रुपये नहीं है। वह भी क्या करे? हमारे पिताजी भी बड़ी मुश्किल से जीवन गुजार रहे है। मैं भी रुपयों को लेकर परेशान हूँ। खैर इसका कोई इलाज नहीं है। महामारी ने इंसान को हर तरह से खोखला कर दिया है। सब पैसा दे रहे हैं लेकिन किस हद तक यह लोग गरीबों की मदद कर पाएँगे पता नहीं? नर्स बता ही रही थी कि शबाना को प्रसव का दर्द आया। शबाना को बुखार भी था। उसके सारे बदन में दर्द भी हो रहा था। नर्स मुझे पेट में बहुत दर्द हो रहा है। आप डॉक्टरनी साहिबा को बुलाइए। स्वप्निल अभी तक नहीं आया। नर्स ने बताया कि उन्हें बाहर बैठने के लिए कहा है। आप धैर्य रखिए। तुरंत शबाना को प्रसव की जगह लेकर जाते है।

बच्चा पैदा होते ही रोता है थोडी देर बाद डॉक्टरनी को पता चलता है कि बच्चे को बुखार है। बच्चे को सांसे लेने में भी तकलीफ हो रही है। बच्चे को बचाने की पूरी कोशिश डॉक्टरनी करती है। स्वप्निल भी डॉक्टरनी के पीछे ही रहता है। वह भगवान से प्रार्थना भी करता है। मानो! बच्चे की जिंदगी उतनी ही थी । अंत में इतनी कोशिश के बावजूद बच्चा मर जाता है। शबाना होश में आते ही अपने बच्चे के बारे में पूछती है, पता चलता है कि बच्चा महामारी का शिकार हो गया। शबाना को कुछ नहीं हुआ, वह स्वस्थ है। उसका बच्चा मर गया। सुनते ही शबाना के पैरोंतले जमीन निकल जाती है। वह गुमसुम हो जाती है। स्वप्निल उसे रुलाने की कोशिश करता है। स्वप्निल भी दुःखी है। एक विषाणु ने उसकी जिंदगी तहस–नहस कर दी है। किसे दोषी ठहराये शबाना? किस्मत या विषाणु को। बच्चे के मरने का सदमा शबाना बर्दाश्त नहीं कर पाती है।

***

ISSN- 2321-1504 Nagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

'उठ! किस लिए उदास है तू'

डॉ.प्रेम जी.
महाराष्ट्र, जिला– लातूर।

अभी मंजर है मायूसी का जरूर,
विषाणु ले रहा परीक्षा तेरी, हार मत,
योद्धा है तू हिम्मतवाला,
हिम्मत की तलाश कर...

पुलिसकर्मी, सरहदों के सिपाही और ज्ञानदाता गुरुजी,
देख इनके आज नेक व्यवहार,
क्यों हताश है? क्यों है ये दशा तेरी?
किसानों ने बोए बीज सा हौसला रख,
मृत्यु का तुझे कैसा डर?
योद्धा है तू हिम्मतवाला,
हिम्मत की तलाश कर...

परिवर्तन संसार का नियम है,
अपने दिन भी पलट कर आएंगे,
जिंदा है तू दुआँ कर,
मृत्यु के द्वार पर जो उनको दवा कर,
भारतीय सभ्य संस्कृति अपनी,
इंसानियत से इंसानियत का फर्ज अदा कर,
वक्त है फसलों का,
हौसला तेरा बुलंद कर,
योद्धा है तू हिम्मतवाला,
हिम्मत की तलाश कर...

बांधकर कफन सर पर,
निकले अपने घर से जो डॉक्टर,
नर्स,सफाई काम वाले उनकी सोच,
शमशान में भी जिंदगी की पकड़े मशाल है,
सलाम उनके कर्तृत्व को कर,
योद्धा है तू हिम्मतवाला,
हिम्मत की तलाश कर...

डर मत ऐसे विषाणूओं से,
जो रास्ते में पहाड़ बनकर खड़ा है,
जिसका जीवन अस्वच्छता और गंदगी के बिना अड़ा है,
तुझे तेरे वजूद की कसम,
तोड़ दे यह गंदगी की बेड़ियां,
डटकर मुकाबला कर,
योद्धा है तू हिम्मतवाला,
हिम्मत की तलाश कर...

उठ! किसलिए उदास है तू,
अभी मंजर है मायूसी का जरूर,
विषाणु ले रहा परीक्षा तेरी,
डर मत, हार मत,
योद्धा है तू हिम्मतवाला,
हिम्मत की तलाश कर... हिम्मत की तलाश कर...।

भूल गये थे हम

भगवान धांड़े

भूल गये थे हम
उनसे सुनकर अच्छा लगता था
जब वे कहते कोई फर्क नहीं होता घोडों और गधों में
कितनी अच्छी सोच थी उनकी समरसता कि
हम यू हीं हमें गधे समझते थे
उनके बापजादों के कहने पर
और उनका करते थे आदर
सुरज के रथ के घोडे समझ कर

हर बार अनुभव हुआ यह कि
उनकी कथनी करनी में है अंतर
ख्याल रखते थे वे सदियों से
नस्ल के दानापानी का
और हम बोझ ढहते रहते
उन चालाक भूदेवों का
भूल गये थे हम कि
गधे तो गधे सही
अपने दानापानी के लिए
करना है हमें प्रहार
उनके दातों पर अपने लातों का

***

ISSN- 2321-1504 Nagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

प्रोफे॰ डॉ॰ संजय जाधव, परभणी महाराष्ट्र

नीति का पुनर्पाठ

संदेह के घेरे में आज
तुम्हारे आस्था के पत्थर
चेतना के युग में
तथागत का प्रासंगिक स्वर
धारणा की शरण में
शाश्वत मुक्तता कहा
उद्भ्रांत शब्दों के आवर्तनों में
निर्वाण की निश्चिंतता कहाँ
विवेक की अग्नि परीक्षा में
सम्यक सत्व ही शेष
शोर का दामन थामकर
धारणा के हिमालय पर
कब फहराया जाता
ध्वज महावस्त्रों का
मछली बाजार के दलाल
चिल्ला चिल्ला कर
कर रहें विज्ञापन
शहर की हर टहनी पर
चिपके बापू के रंगीन पोस्टर्स
उपग्रह निरंतर परिक्रमित
आस्था की रेसीपी परोसते
धर्म,श्रद्धा,आत्मा–परमात्मा,
जीव, जगत, मुक्ति, आनंद
टोणा–टोटका सडांध।
ब्रह्मचारी...?
सुझाते हैं
कामशक्ति बढ़ाने के
आजमाये हुये नुस्खे
दिन–रात फैलाते प्रदूषण
संमोहन का इंद्रजाल
टूटेगा जरूर!
धारणा के स्वर बदलेंगे
करुणा चक्र का प्रकाश
विवेक चेतना से संपृक्त
समता से आच्छादित
स्वतंत्र आकाश
मैं देखता हूँ साफ
प्रत्येक अंध गुफा–कीलों पर
लहराती पताका
फैलाती प्रज्ञा का प्रकाश !

शीतनिद्रा

मेरे मौन का अर्थ
तुम्हारे पापों पर
कनात–सी तन जाना
कतई नहीं
और न ही समझ लेना
कर लिया है मैंने
अंधेरे से कोई
अर्थपूर्ण समझौता।
विवशता की बंजर भूमि में
कब उगते हैं
मनोवांछित गुलाब
यह मेरी सूझबूझ ही कि
स्वयं को झोंक दिया
शीतनिद्रा के आपात्काल में
बिना किसी भूमिका के
सफल नहीं होती
क्रांति व्यष्टि–समष्टि की
लड़ी जाती हैं मानस में
हजारों लड़ाइयाँ
प्रत्येक लडड़ाई के पहने
बिछा होता है
व्यूह दुष्टचक्र का
शतरंज की बिसात पर
आज केवल प्यादा ही शक्तिशाली
वही बन सकता है वजीर
जी होता है दल्ला
सत्ताधिशों जनानखाने का।
ठीक है...
अभी गुंगां की बस्ती
निद्रिस्त है।
सूरज की पहली किरण
भर देगी उसमें ऊर्जा का
अजस्त्र स्रोत
तब तुम देखना
रथी–महारथियों तक के लिए छिपने
दो गज जमीन
नसीब नहीं होगी।

***

ISSN- 2321-1504 Nagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

बदलते परिदृश्य में साहित्य की भूमिकाः पसायदान के विशेष संदर्भ में

डॉ. मीना जाधव
जवाहर क.वि.वा. महाविद्यालय, अणदूर, महाराष्ट्र

महाराष्ट्र में तेरहवी सदी में एक महान संत–कवि हुए जिनका नाम है संत ज्ञानेश्वर द्य जिन्होंने पूरे महाराष्ट्र में भ्रमण कर भागवत धर्म की स्थापना की। जो नाथ पंथ और वारकरीसं प्रदाय से संबद्ध है। जिन्होंने तत्कालीन साहित्यिक भाषा संस्कृत के स्थान पर लोक प्रचलित मराठी भाषा में ग्रंथ संपदा लिख कर सामान्य लोगों तक गीता का ज्ञान पहुंचाया। संत ज्ञानेश्वर कवि नामदेव के समकालीन थे। उन्होंने भावार्थदीपिका अर्थात ज्ञानेश्वरी, अमृतानुभव ,चांगदेवपासष्टी, हरिपाठाचे अभंग आदि काव्य रचनाएं लिखी है। ऐसे संत श्रेष्ठ ज्ञानेश्वर जी महाराष्ट्र की अमूल्य निधि है।

ज्ञानेश्वरी या भावार्थ दीपिका में कुल अठारह अध्याय है। अठारहवें अध्याय के अंत में संत ज्ञानेश्वर ने 'पसायदान' लिखा है । यह 'पसायदान' विश्वात्मा से मांगा गया प्रसाद यादान है द्य सत्र ह अध्यायों में उन्होंने उसी भगवत्गीता कावर्णन किया है, जो श्रीकृष्ण ने महाभारत के युद्ध में अर्जुन को अपना विश्वरूप दिखा कर कही थीद्यअर्जुन को इस ब्रम्हांड और जीवजगत के सत्य का ज्ञान करा, कर्म की श्रेष्ठता प्रतिपादित की थी लेकिन अठारहवे अध्याय के अंत में आए 'पसायदान' को एकाध्यायीयानी एक अध्याय गीता कहते हैं द्य संपूर्ण गीता का ज्ञान उन्होंने अत्यंत संक्षेप में साररूप में व्यक्त किया है द्य गीता का महत्ज्ञान अनेक टिकाओं के वृहद अध्यायों में भी नहीं समापाया उसे अत्यंतसरस, सरस, सहज, सुलभतरी के से संत ज्ञानेश्वर मराठी भाषा में मात्र नोओवी में प्रस्तुत कर देते हैं। 'पसायदान' रुपी यह गीता महाराष्ट्र के प्रत्येक नर–नारी को, बालक–बालिका को, आबाल–वृद्धों को कंठस्थ है द्य इतना ही नहीं उसकी एक पंक्ति अपने आप में इतना गहरा अर्थ रखती है कि सुक्ती के रूप में वेमार्ग दर्शक बनती हैद्य मैं जिस संस्था से संबंध हूं उसका घोष वाक्य उसी 'पसायदान' की पंक्ति है– दुरितांचेतिमिरजावो– अर्थात ज्ञान के तिमिर में जो है उन के जीवन का अंधकार नष्ट हो। इस पंक्ति का यदि विवेचन किया जाए तो यह शोध आलेख पूर्ण हो सकता है। लेकिन में संपूर्ण 'पसायदान' की महती को हिंदी भाषियों को बतलाना चाहती हूं अतः संक्षेप का सहारा लूंगी आज के बदलते परिदृश्य में संतों की भूमि का निर्विवाद है। उनके विचार हमारे लिए ही नहीं तो संपूर्ण विश्व के लिए मार्ग दर्शक सिद्ध हो रहे हैं। मनुष्य की संकुचित हो रही वृत्ति, मानव धर्म का ह्रास, प्रकृति का विनाश, मूल्यहिनता, उदारीकरण के नाम पर बढ़ता बाजारी करण, संवेदनशीलता आदि कई ऐसे प्रश्न हैं जो हमारे वर्तमान को तो झकझो रही रहे हैं। लेकिन हमारे भविष्य की चिंताए भी बढ़र हे हैं। ऐसे में ज्ञानेश्वर का 'पसायदान' हमारे लिए एक दीपस्तंभ के समान हैं।

ज्ञानेश्वर 'पसायदान' का आरंभ करते हुए इस वांग्मय यज्ञ से प्रसन्न हो कर वरदान मांगते हैं। यह वरदान वे अपने गुरु निवृत्तीनाथ जिन्हें वे विश्वात्मा कहते हैं उन सेमांगते हो कहते हैं। इन अठारह अध्याय के रूप में उन्होंने जो वांग्मयी यज्ञ कि या है उससे संतुष्ट होकर वे प्रसाद देवें द्य और यह दान उन्होंने स्वतः के लिए नहीं मांगा है। आज की स्वार्थ भरी दुनियां में प्रत्येक व्यक्ति फल की कामना करता है। यदि वह कोई कर्म करता है तो फल की इच्छा रखता ही है परंतु कई महा भागतो 'निष्कामकर्म' का आशय बिना काम के लगा कर ही फल की प्राप्ति चाहते हैं या ज्ञानेश्वर दान रूप में क्या क्या चाहते हैं ?

अगली ओवी में कहते हैं जोकल, है कुटिल, है उन की कुटिलता नष्ट हो अर्थात जो दुष्ट है उनके अंतः करण की दुष्टता समाप्त हो और इतना ही नहीं तो उनकी सत्कर्म करने की रुचि बढ़े सारी प्राणी मित्र भाव से रहे जिससे सभी जीवो का कल्याण हों।

आज का समाज संस्कार हीनता की ओर बढ़ रहा हैं। स्वार्थ और वासनांध होकर खल वृत्ति पोषित हो रही है द्य महात्मा गांधी जी ने कहा था पाप से घृणा करो पापी से नहीं।

***

ज्ञानेश्वर संत वचन ऐसे दृष्टों को नष्ट नहीं करते बल्कि उन के जीवन में परिवर्तन लाते हैं। वे कहते हैं कि हे विश्वात्मा दूरितयानी असत्य,पाप के अंधकार का नाश हो आज्ञान नष्ट हो। और स्वधर्म सूर्य का उदय हो। मनुष्य यदि अपने मानव धर्म का पालन करें तो सत्कर्म ही करेगा और विश्वधर्म सूर्य के प्रकाश से आलोकित होगा। उस आलोक में जिसकी जो कामयाब होगी वे सभी पूर्ण होगी द्य सत्कर्म करने वाले की कामना पूर्णतायोग्य ही होगी।

वे दान मांगते हुए कहते हैं सभी पर कल्याण की वर्षा हो, जिससे सभी जन हित में कर्म रतर हेंगे और उन्हें निरंतर ईश्वर निष्ठा सज्जनों का सहवास मिलता रहे। रहीम भी कहते हैं– 'रहीम संगत साधु की जो गंधी की बास, जो कछु गंधी देन हीं तो भीबास सुबास '–सज्जनोंकी, ईश्वर में आस्था रखने वालों की, यदि संगति रहे तो सद्गुणों का विकास होता रहेगा और मानव सत्कर्म कर जनकल्याण ही करेगा। ऐसे सज्जन साक्षात कल्पतरू से सुसज्जित वन के समान है, साक्षात चिंतामणि के ग्राम समान है जो मन की इच्छाओं को बिना व्यक्त किए ही पूर्ण कर देते हैं। यह संत जन अमृत के सागर है। ज्ञानेश्वर संत–सज्जनों को कलपतरु चिंतामणि और अमृत का सागर कहते हैं जो जन सामान्य को उक्ति रूप अमृत का पान कराते हैं

इन संतों को पहचानने के भी कुछलक्षण होते हैं जिसे व्यक्त करते हुए ज्ञानेश्वर कहते हैं द्य यह तो विदित है कि चंद्रमा पर कलंक है, सूर्य तप्त कर देने वाला होता है लेकिन संत रूपी चंद्र निष्कलंक होते हैं। मार्तंडयानी सूर्य समान तेजस्वी होते हुए भी तापहीन होते हैं क्यों किय हैं सूर्य ज्ञान का है जो अज्ञान को नष्ट कर साधक के जीवन में शीतलता लाता है। ऐसे संत जन सभी के लिए निकटवर्ती संबंधी के समान होते हैं जो केवल उस का हित चाहते हैं।

ज्ञानेश्वर कहते हैं यदि ऐसे संत जन सामान्य लोगों के संगस गे संबंधी हो जाए तो इससे अधिक क्या कहे मानव मात्र तीनों लोकों में सारे सुखों से परिपूर्ण हो कर उस आदि पुरुष की अखंडित उपासना में रत हो जाएं । यहां सुख से आशय भौतिक सुख से न हो कर परमात्मा की प्राप्ति से प्राप्त होने वाले परमसुख से हैं। साधक उस चरम सुख को पाकर आदी पुरुष के भजन में रहते हो। सगुण हो या निर्गुण, संत हो या सूफीस भी ने अंततोगत्वा उस के पुरुष की भक्ति की ही बात की है। पूर्ण संत नवधा भक्ति का मार्ग बतलाते हैं। ग्रंथों का श्रवण ,वाचन, मनन से साधक आत्मउन्नति की ओर बढ़ता है द्य तभी ज्ञानेश्वर कहते हैं विशेषतः ऐसे लोग जीन के लिए ग्रंथ ही जीवन हो जाए। यह ज्ञानेश्वरी ही उनका जीवन बन जाए तो ऐसे साधक, दृष्ट और अदृष्टयानि प्राप्त और अप्राप्त ऐसे भोग, सुख–दुख दोनों पर विजय प्राप्त करें।

ज्ञानेश्वर यह प्रसाद यानी 'पसायदान' अपने विश्वात्मा गुरु निवृत्तिनाथ से मांगते हैं। और श्री विश्वेश्वर निवृत्तिनाथ संतुष्ट होकर यह दान देते हैं। ईश्वर दान को प्राप्त कर ज्ञान देव यानी ज्ञानेश्वर परमसुखी होते हैं। इस प्रकार ज्ञानेश्वर अपनी वांग्मय यज्ञ की परिपूर्ति पर 'पसायदान' प्राप्त कर ज्ञानेश्वर पर मानंदी होते हैं। यह बात विशेषध्यान देने की है कि ज्ञानेश्वर ने 'पसायदान' स्वहित में नहीं तो विश्वकल्याण की भावना से मांगा है। 'पसायदान' सामान्य लोगों के लिए मोक्षमार्ग की कुंजी है । सामान्य भाषा में सरसता और सरलता से दिया परम ज्ञान है जो उनकी मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करता है। इस बदलते परिदृश्य में जहां मानव अपने मानवधर्म का त्याग कर पशुतुल्य बनते जा रहा है, कर्मयोग को भूल रहा है और स्वहित प्रमुख हो गया है वहां मराठी–हिंदी संत साहित्य पुनः प्रासंगि हो गया हैं। ज्ञानेश्वर रचित 'पसायदान' आज प्रासंगिक तो है ही बदलते परिदृश्य में साहित्य की भूमिका भी बखूबी निभा रहा है। उसमें सह भाव भी है और सहित का भाव भी है इत्यलम्

***

ISSN- 2321-1504 Nagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

भूमंडलीकरण, बाजार और वीरेंद्र जैन का साहित्य

प्रो. डॉ. नानासाहेब गोरे
प्रोफेसर एवं अध्यक्ष
हिंदी अनुसंधान केंद्र,
जे. ई. एस. महाविद्यालय, जालना. ४३१२०३
मो. ९४२२२१९१८३

वीरेंद्र जैन आधुनिक हिंदी साहित्य जगत के सशक्त साहित्यकार है। उन्होंने अपनी रचनाओं में समकालीन समाज की चिंताओं को समसामयिक युगबोध के परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करने की कोशिश की है। आम आदमी के जीवन से जुड़े हर पक्ष को उन्होंने अपनी संवेदनाओं का विषय बनाकर सृजन संसार की गरिमा को बढ़ाते हुए आम आदमी की व्यथा–कथा के पक्षधर के रूप में साहित्य जगत में अपनी एक विशेष छवि निर्माण की है। उनके रचना संसार में आए व्यक्तियों के विभिन्न स्वरूपों के संदर्भ में अशोक कुमार शर्मा लिखते हैं, "आम आदमी से जुड़ा जीवन का कोई भी पक्ष ऐसा नहीं है जिस पर इन्होंने लेखनी न चलाई हो। आधुनिक व्यक्ति की चिंता और चिंतन, उसकी इच्छाएँ और महत्वाकांक्षाएँ प्रेम और यौन संबंध, उसका अलगाव, अकेलापन और अजनबीपन, आम आदमी की कुंठा, संत्रास और घुटन, स्वार्थपरता आदि सभी पक्ष इनके कथा–साहित्य में अभिव्यक्त हुए हैं। वर्णव्यवस्था, महानगरों का यांत्रिक जीवन, राजनीतिक मूल्यों का विघटन, प्रशासनिक मूल्यों में आई अव्यवस्था, आर्थिक वैषम्य, सांस्कृतिक बदलाव, धार्मिक विकृतियाँ और सभ्यतागत आचरण आदि आधुनिक युगबोध से जुड़े सभी पक्षों की अभिव्यक्ति इनकी रचनाओं में हुई है। युवा पीढ़ी की आकांक्षाएँ, व्यस्तताएँ, आक्रोश, बिखराव, मर्यादाओं का अतिक्रमण, यौन संबंधों के प्रति ललक–सभी का तो इनकी रचानाओं में उद्‌घाटन हुआ है।

वीरेंद्र जैन ने भूमंडलीकरण के परिणामों, परिनीतियों तथा प्रभावों का संवेदनात्मक अंकन अपनी रचनाओं में किया है। भूमंडलीकरण की आवश्यकता हमारे देश को थी या नहीं यह काफी दिनों तक चिंता, चिंतन एवं बहस का विषय रहा; बावजूद इसके यह विश्व की एक अत्यावश्यक आवश्यकता के रूप में उभरकर आई प्रक्रिया होने के कारण अन्य देशों ही की भाँति भारत भी इसके शिकंजे से बच न पाया। यह एक क्रांतिकारी प्रक्रिया थी जिसने भारत की अर्थव्यवस्था ही नहीं समाज, संस्कृति, सभ्यता, राजनीति, धर्म, शिक्षा के साथ–साथ मानसिकता को भी उसकी गहराई तक प्रभावित किया। आज तक का इतिहास रहा है कि भारत में बाहर से जितनी भी चीजे आगत हुई उन्होंने हमारे समाज जीवन के किसी एक अंग मात्र को ही प्रभावित किया। इसके पूर्व भारत बाहरी धर्म, दर्शन, राजनीति, समाज चिंतन, सभ्यता, राजनीतिक विचारधाराओं के संसर्ग से देसी विचारधाराएँ प्रभावित होती रही है परंतु यह प्रभाव मात्र उन दृ उन क्षेत्रों पर ही पड़ता रहा। धर्म– धर्म को, राजनीति – राजनीति को तथा दर्शन आदि दर्शन को ही प्रभावित करते रहे। परंतु भूमंडलीकरण ही एक मात्र ऐसी सर्वव्यापी, सर्वग्रासी प्रक्रिया है जिसने आर्थिक नीति के मार्ग से प्रवेश पाकर यहाँ की सभी इकाइयों को प्रभावित किया। भूमंडलीकरण की बाजाराधारित संजीवनी शक्ति पाकर जीवन की तमाम इकाइयों को वशीभूत करते हुए यहां के व्यक्तियों के अतृप्तिबोध को उकसाने, तीव्रतर बनाने तथा उसके शमन हेतु अधीर, अस्वस्थ अशांत होने की मानसिकता उद्वेलन का आतंक फैलाने में सफल रहा है। वीरेंद्र जैन ने लिखा है, "भारतीय मध्यवर्ग में बढ़ते बाजारवाद, उपभोक्तावाद तथा भोगवाद की प्रवृत्तियों के संदर्भ में इससे बेहतर स्वीकारोक्ति नहीं हो सकती। लालसाएँ आदमी को घेरे रहती हैं, कुछ प्रत्यक्ष रूप में सामने आती हैं, तो कुछ अंतस में दबी रहती हैं और अनुकूल अवसर पाते ही पूर्ति हेतु सिर उठाने लगती हैं। लगता है जैसे आधुनिकतम महानगरीय मध्यवर्ग अपनी सभी लालसाओं की पूर्ति के लिए बेताब है। इसमें दो फाड़ की नौबत आ चुकी है। एक जो खुलकर इस खुलेपन को जी रहा है और दूसरे के पास आर्थिक संसाधन कम पड़ रहे हैं। ऐसे में उसे जब मौका मिलता है तब वह इसे जीने के लिए अपनी ओर से कोई कसर नहीं छोड़ता। बाजार इस वर्ग की मजबूरी और इच्छाओं को समझते हुए हमेशा चारा फेंकने की जुगत में रहता है। वह गैरजरूरी चीजों के प्रति भी भ्रमपूर्ण लगाव पैदा कर भावनाओं का दोहन करने से नहीं चुकता एक नई उपभोक्ता संस्कृति साकार ही नहीं हो रही दिन–ब–दिन विकराल भी होती जा रही है। कुशल व्यवसायी सिर्फ माल नहीं बेच रहे, बड़ी चालाकी से विचार भी प्रत्यारोपित कर रहे हैं। उदारवाद के पीछे की चालाकी और चतुराई को उजागर करना नितांत आवश्यक हो गया है।"

***

वंचितों के पक्षधर तथा विसंगतियों के चितेरे होने के कारण भूमंडलीकरण का घातक पक्ष विरेंद्र जैन की सक्षम लेखनी का मूलाधार रहा है। 'डूब' तथा 'पार' उपन्यासों में विस्थापितों की वेदनाओं को अंकित करने के साथ ही व्यक्तियों के विस्थापन की करुण कहानियाँ भी उन्होंने बखूबी के साथ शहरी मध्यवर्गीय ढंग से चित्रित की है। 'पानी में मीन प्यासी', 'तीन दिन दो रातें', 'भार्या', 'शब्द वध', 'बहस बीच में', 'पंचनामा' आदि रचनाओं में भूमंडलीकरण के प्रभाव दृष्टिगोचर होते हैं। भूमंडलीकरण के दौर का सबसे अधिक शिकार हुआ है महानगरीय मध्यवर्गीय परिवार।

भोगवादी वृत्ति के कारण अपनी लालसाओं की पूर्ति के लिए वह निरंतर अस्वस्थ। बाजार इस वर्ग की मजबूरी और इच्छाओं को समझते हुए उन्हें अपनी गिरफ्त में लेने के लिए हमेशा तत्पर रहता है। 'तीन दिन दो रातें' उपन्यास में रवीन्द्र जैन ने इसी प्रकार के मध्यवर्गीय परिवार की अतृप्त कामनाओं वाला 'अविनाश' बाजार की गिरफ्त में आकर लूटा जाता है बाजार की लूट की प्रत्येक नीति कौशल तथा चालाकी को लेखक ने यहाँ बेनकाब किया है। कामनाओं की पूर्ति में बाजार द्वारा ठगे जाने पर भी अविनाश बाजार को दोष नहीं देता, "एम. डी. से विदा लेने से पहले अविनाश ने यह भी नहीं बताया कि मुझे न आपने ठगा न किसी तथाकथित कल्पना मोहिनी कामना या काम्या ने। मैं जितना और जैसे भी ठगा गया अपनी अतृप्त कल्पनाओं, मोहनियों, कामनाओं और काम कलुषों के हाथों ठगा गया"।

उपभोक्तावाद की शिकार समाज व्यवस्था एवं लुटेरों की अंतरराष्ट्रीय कौम की लूट नीति को बाजार के माध्यम से व्यक्त करती प्रभा खेतान लिखती है, "आज आदमी के कानों में चारों तरफ से आवाज आ रही है खरीदो और ज्यादा से ज्यादा खरीदो हर आदमी के भीतर चाहे वह स्त्री हो या पुरुष बालक हो या वृद्ध खरीददार बैठा है और बाजार उसे सोते दृ जागते कुछ खरीदने और भोगने के लिए हर क्षण उकसाता रहता है। उसके मन में शांति नहीं क्योंकि वह एक ऐसे माहौल में जी रहा है ऐसी संस्कृ ति में जहाँ बाजार निरंतर हाँक लगा रहा है हर माल बिकेगा छह आना चीजों का दाम चाहे छह आना हो या फिर छह करोड खरीद ने वाला चाहे गरीब हो या अमीर संपूर्ण रूप से उपभोक्ता बनना आज के व्यक्ति की नियति है"।

आज मनुष्य पूरी तरह बाजार के अधीन है अपनी सम्मोहन शक्ति एवं कौशल से बाजार ने मनुष्य को पूरी तरह वशिभूत किया है। विभिन्न ऑफर्स के मोह माया जाल में उपभोक्ताओं को फंसाने की साजिश आए दिन यहाँ रचि जाती है और दिन दहाड़े मनमर्जी से ग्राहक के नाते उपभोक्ता लूटा जाता है आपकी जेब में पैसा हो या ना हो तो भी बाजार की सम्मोहक शक्तियाँ विभिन्न ऑफर्स प्लान में उपभोक्ताओं को गुमराह करती हुई उसके बैंक अकाउंट तक पहुँचती है और डेबिट कार्ड, क्रेडिट कार्ड द्वारा उसके पैसे उड़ाये जाते हैं। इतना ही नहीं उपभोक्ताओं के पास पैसा न होने पर भी बाजार विभिन्न परियोजनाओं की ऑफर देते हुए लूटने की योजनाएँ बनाता है 'तीन दिन दो रास्ते' में वीरेंद्र जैन ने बाजार की इन सभी करतूतों को चित्रित किया है।

आज बाजार ने धर्म, शिक्षा जैसे मानव के मानसिक, नैतिक विकास वाले समाज तथा राष्ट्र को सुदृढ़ एवं सशक्त आत्मसम्मानी आत्मनिर्भर बनाने वाली देश की महत्वपूर्ण संस्थाओं को भी नहीं बख्शा। आज धर्म का भी बाजारीकरण हो गया है। प्रत्येक धर्म, धर्म संस्थान ने आज बाजार से साँठगाँठ कर धर्म बाजार की स्थापना की है। भक्ति की बजाय उपभोक्ताओं, भोगी भक्तों को आकर्षित करने की नई–नई तरकीबें ढूँढ़ निकाली जाती है। मंदिर आदि धर्म स्थलों पर भगवान के प्रसाद से लेकर भक्ति संबंधी संसाधनों का बाजार गर्म है। इतना ही नहीं श्रद्धालुओं को उपभोक्ता बनाकर उसे अच्छी सुविधाएं मुहैया करने की दिशा में बड़े दृ बड़े होटलों का निर्माण किया जा रहा है। इन तीर्थस्थलों के पैकेजों का निर्धारण बाजार करते हुए श्रधालुओं को नहीं उपभोक्ताओं को अपनी ओर खींच रहा है। परिणामतः अब साधु भी साधु नहीं रहे योगी भी भोगी बने हैं। 'सन्याससुख' कहानी में ऐसे ही एक साधु का चित्रण किया गया हैं, "उसने अपने घर वालों की जानकारी में बल्कि अपने पिता के सहयोग से अपना और साधु का पासपोर्ट बनवा या क्योंकि फिल्म के कई दृश्य मॉरीशस, फीजी, थाईलैंड, नेपाल वगैराह के मंदिरों में फिल्माए जाने थे। सब लोग एयरपोर्ट तक उन्हें छोड़ने आए कुछ दिन बाद उस लड़की की चिट्ठी आई उसने उस साधु से शादी कर ली है"।

आज शिक्षा का व्यवसायीकरण भारतीय समाज व्यवस्था का एक भयानक वास्तव है. एक ओर सामाजिक विषमता दूर करने के प्रयास किए जा रहे हैं तो दूसरी ओर बच्चों को बचपन से ही सामाजिक विषमता का पाठ सप्रयोग सप्रमाण पढाया जा रहा है। एक ओर शहरी अत्याधुनिक सुविधाओं से लैस चकाचौंध वाले स्कूल है तो दूसरी ओर ढंग के कमरे भी न रहने वाले राजकीय विद्यालय। जो पिता पैसा खर्च कर सकता है वहीं इन चकाचौंध वाले स्कूलों में भेज सकता है औरों के लिए तो वहाँ पढ़ना एक दिवास्वप्न हीं है।

***

महाविद्यालयिन शिक्षा तो और भी महँगी हो रही है। शिक्षा संस्थाएँ खोलकर आर्थिक लाभ लेने की होड़ अब लग चुकी है। दूसरी ओर अंतरराष्ट्रीय बाजार भारत में शिक्षा के निजीकरण को लेकर काफी आग्रही है।

इतना ही नहीं अब अंतरराष्ट्रीय विश्वविद्यालयों की भी पहल हो रही है शिक्षा के निजीकरण पर अपनी चिंता जाहिर करते हुए प्रमोद मीना अपने लेख उच्च शिक्षा की उलटबाँसी में लिखते हैं, "तमाम पूँजीवादी देश अपने यहाँ उच्च शिक्षा की बहुत सुदृढ़ सार्वजनिक व्यवस्था रखते हैं जबकि विकासशील देशों को बाध्य करते हैं कि वे उच्च शिक्षा तंत्र का निजीकरण कर दें ऐसे में सवाल यह उठता है कि यदि निजी उच्च शिक्षा संस्थानों का प्रदर्शन इतना ही उम्दा है तो यह विकसित देश अपने उच्च शिक्षा के निजीकरण की पहल क्यों नहीं करते वास्तव में विकसित देश राष्ट्रीय विकास में सार्वजनिक शिक्षा तंत्र के महत्व को भलीभाँति समझते हैं।

और इसीलिए अपनी जमीन पर निजी उच्च शिक्षा की दुकानों को बिल्कुल पैर पसारने नहीं देते जबकि विकासशील देशों को विकसित होने की दिशा में अग्रसर होने से रोकने के लिए एक साजिश के तहत् उनके सार्वजनिक शिक्षा तंत्र को मटियामेट कर देना चाहते हैं"६ वीरेंद्र जैन ने अपने उपन्यास में महँगी होती जा रही शिक्षा व्यवस्था का चित्रण किया हैं।

आज बाजार में प्रत्येक चीज खरीद–बिक्री तथा उपभोग की वस्तु है। बाजार के वास्तव की चर्चा के रूप में सरेआम आज यह कहा जा रहा है कि बाजार में आज सबसे ज्यादा बिक रही है अश्लीलता, औरत और अपराध। बदली हुई जीवनशैली के कारण जहाँ एक ओर स्त्री का आत्मनिर्भरता की ओर रुझान दिखाई दे रहा है वहीं दूसरी ओर उनकी महत्वाकांक्षाएँ भी बढ़ती चली जा रही है। इन्हीं महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति के लिए जरूरत पड़ने पर अपने जिस्म की खरीद फरोक्त के लिए वह तैयार हो रही है। अपने सौंदर्य, यौवन एवं स्त्रीत्व को सीढी बनाकर मनचाहे स्थान तक पहुँचने में सफल हो रही है इसी मनोवृत्ति के चलते महानगरों में कॉल गर्ल्स की संस्कृति भी पनपती चली जा रही है बाजार इसी का लाभ उठाते हुए किसी को स्वेच्छा से तो किसी को मजबूरि या जबरदस्ती से इस व्यवसाय में धकेलने के लिए आमादा है। 'हर जिस्म को मिलेगा ढाई आना' में जिस्माई विसंगतियों को लेखक ने प्रस्तुत किया है। बाजार के केंद्र में आज उसकी सुंदरता, उसका जिस्म है। स्त्री का अश्लील एवं मांसल प्रदर्शन अब आम बात बन गई है। वस्तु चाहे पुरुषों के उपयोग की हो या स्त्री के उपयोग की उस में स्त्री प्रदर्शित होना अवश्यंभावी एवं आम बात है। वीरेंद्र जैन ने बाजार के बीच की स्त्री का वर्णन अपने साहित्य में किया है।

उपभोक्ता, बिक्रेता एवं बाजार की नवाधुनाथन संस्कार संस्कृति का लेखक ने संवेदना के स्तर पर बहुत ही गंभीर चिंतन प्रस्तुत किया है। बाजार ने व्यक्ति के प्रत्येक कार्य विचार जीवन शैली तथा सोच को प्रभावित किया है। आज हमें बाजार में जाने की आवश्यकता नहीं हर घर–घर में और मोबाइल के माध्यम से घर के प्रत्येक सदस्य के हाथ में बाजार है और निरंतर उपभोक्ताओं को अधिक से अधिक उपभोगी बनाने के लिए प्रयासरत है। एक परिवार में भी हम परिवार के सदस्य के रूप में कम और बाजार के ग्राहक के रूप में अधिक रहते हैं। छोटे बच्चे भी मोबाईल पर आनेवाले विज्ञापनों को देखकर एक ग्राहक बनने की प्रक्रिया में अनायास जुड़कर विभिन्न चीजों की माँग में जुटे हैं। व्यक्ति परिवार समाज राष्ट्र पर बाजार की वहशियानी छाया को लेखक अपने साहित्य में प्रभावी ढंग से प्रस्तुत करने में सफल हुए हैं।

संदर्भ :–

1 : https://www-pustak-org/index.php/books
2 : https://www-prabhatbooks-com/author/virendra-jain.htm
3 : तीन दिन दो रातें – वीरेंद्र जैन पृ. २००
4 : बाजार के बीच : बाजार के खिलाफ दृ प्रभा खेतान पृ.१६२
5 : भार्या – वीरेंद्र जैन पृ.४७
6 : समयांतर, जनवरी २०१५ – सं. पंकज बिस्ट पृ.१८

***

ISSN- 2321-1504 Nagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

साहित्य और समाज

डॉ. रंजना यदुनंदन चावडा
संपर्क – हिंदी विभाग,
देवगिरी महाविद्यालय, औरंगाबाद
मो. 9923096614

मानव जीवन और समाज में संसार सर्वोच्च है. इसी कारण साहित्य, कला, ज्ञान, विज्ञान, दर्शन, धर्म आदि स्थूल या सूक्ष्म संसार में जो कुछ भी है, वह सब जीवन और मानव समाज के लिए ही है, यह एक निर्विवाद सत्य है. उससे परे या बाहर कुछ भी नहीं मानव एक सामाजिक प्राणी है. वह व्यक्ति या समूह के स्तर पर जो कुछ भी सोचता विचारता और भावना के स्तर पर संजोया करता है, वही सब लिखित या लिपिबद्ध होकार सहित्य कहलाता है इस प्रकार कहा जा सकता है कि, साहित्य वस्तुतः जीवन और समाज से भावसामग्री लेकर, अपने शरीर या स्वरूप का निर्माण कर फिर वह सब जीवन और समाज को ही अर्पित कर देना, लेन–देन की यह प्रकिया साहित्य और समाज के आपसी संबंधों को प्रायः स्पष्ट कर देती है। जब से मानव ने सोचना–विचारना, पढ़ना, लिखना और अपने आपको दूसरों पर प्रगट करना सीखा है तभी से साहित्य और समाज में आदान–प्रदान की यह प्रक्रिया चल रही है और निरंतर चलती रहेगी, इस दृष्टि से साहित्य और समाज का संबंध चिरंतन कहा जा सकता है।

साहित्य समाज का दर्पण है युग की घटनाएँ साहित्य में प्रतिबिंबित होती हैं युगजीवन प्रतिबिंबित होने से साहित्य और समाज का अन्योन्याधिष्ठित संबंध स्वतः सिद्ध है, साहित्य ही किसी समाज की अच्छी–बुरी दशा, उन्नति–अवनति, उत्थान–पतन का चित्र होता है। सामाजिक प्राणी होने से मनुष्य अपने लिए एक सुंदर समाज की रचना हेतु जो चिंतन–मनन करता है, उससे साहित्य के क्रमिक विकास को बल मिलता है समाज में मनुष्य के एकाकीपन से उत्पन्न उदासीनता को साहित्य में मनोरम क्षणों में बदल देने की क्षमता रखता है, साहित्यकार का जीवन उसके अपने समाज में ही व्यतीत होता है, वही जीवन के अभावों से जूझता और भावों में आनंद प्राप्त करता है, सुख–दुखात्मक परिस्थितियों और घटनाओं से संघर्षरत रहता है. मानव जो कुछ अपने आसपास देखता, सुनता है उससे प्रभावित हो उसे सूक्ष्मता से ग्रहण करता है एवं पुनः अपनी संवेदना का मेल कर उसे मूर्त रूप देता है. मानव की संवेदनाओं का लिखित लेखा–जोखा ही साहित्य कहलाता है. सामान्य जन ऐसा नहीं कर सकते. एक लेखक,या कवि में ही ऐसी अनोखी क्षमता होती है, कि वह अपनी लेखनी से उस प्रतिक्रिया को प्रकट कर सकता है और उस आत्मानुभूति को सामाजिक अभिव्यक्ति बना देता है।

समान विचारों और एक जैसी परंपराओं वाले मानव समुदाय को समाज कहा जाता है इसी आधार पर भिन्न–भिन्न समाजों, समुदायों के संगठन हमें भिन्न–भिन्न स्थानों, देशों में देखने को मिलते हैं इन समुदायों की परंपराएँ, विचार–धारा, रीतिरिवाज, पहनावा, खान–पान, विचारने–सोचने का ढंग आदि प्रायः समान होते हैं साहित्य किसी भी समाज अथवा समुदाय विशेष के लिखित अथवा अलिखित अनुभवों का संग्रहीत रूप है. अभिप्राय यह है कि साहित्य किसी समाज की ज्ञान–राशि का संचित कोश है किसी विशिष्ट समाज में जन्मा साहित्यकार अपने समाज के रीति–रिवाजों, खान पान, विचारधारा आदि को मुख्य रूप प्रदान करता है, यही उस समाज का साहित्य कहलाता है। साहित्यकार द्वारा प्रणीत साहित्य उसके निर्माणकर्ता के मर जाने पर भी अमर रहता है इस प्रकार साहित्यकार स्वयं काल–कवलित हो जाने पर भी अपनी जाति, अपने समाज का कालातीत बना जाता है. साहित्यकार द्वारा विचरित साहित्य से समाज प्रभावित होता रहता है और उससे मार्ग–दर्शन प्राप्त कर अपने को सुखी और समृद्ध बनाने का प्रयत्न करता रहता है साहित्य और समाज का अनन्योन्याश्रित संबंध है समाज की उन्नति–अवनति के साथ साहित्य उन्नत और अवनत होता रहता है। साहित्य की उत्कृष्टता समाज की उन्नति है और साहित्य की निकृष्टता का मूल समाज की अधोगति है, प्रमाणार्थ प्राचीन इतिहास के पृष्ठों को लिया जा सकता है मौर्य और गुप्त काल का भारत जिस रूप में उन्नत, प्रगतिशील था, भारतीय साहित्य भी उतना ही महान और श्रेष्ठ था. (उसके विपरीत, कामुक, मद्यपी, कायर, परमुखापेक्षी, किंकर्तव्यमूढ़ और पराजित हो गया था) आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी जी ने साहित्य को ''ज्ञानराशि का संचित कोश कहा है.'' वास्तव में साहित्य समाज का मस्तिष्क है. इस रूप में देश, जाति, राष्ट्र तथा विश्व की उन्नति के महत्वपूर्ण साधनों का साहित्य निर्देशक सिद्ध होता है. युगों से चले आए विचार संचयन के लिखित रूप को ही साहित्य कहते है, आचार्य शुक्ल साहित्य में कविता को समाज के लिए एक दिव्य अनुभूति प्रदान करने वाली शक्ति स्वीकार करते हैं, जिससे पाठकों के हृदय का विस्तार होता है. शुक्ल जी का विचार है कि केवल मनोरंजन ही कविता का लक्ष्य बन गया तो कविता विलास की सामग्री मात्र रह जाएगी।

***

यदि वाग्जाल मनुष्य को दुर्गति, हीनता और परमुखोपेक्षी दुर्गुणों से न बचा सके, आत्मा को तेजोदीप्त न कर सके, ह्रदय को संवेदनशील न बना सके, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी उसे साहित्य कहने में संकोच करते हैं. आचार्य नंददुलारे वाजपेयी, श्री. गुलाबराय व डॉ. नगेंद्र मानते हैं कि साहित्यकार को आत्मानुभूति के प्रकाश का पूरा अवसर मिलना चाहिए तभी उससे लोक हित हो सकेगा।

पाश्चात्य विद्वान डिक्केंसी ने साहित्य के मुख्य दो रूप स्वीकार किये हैं. एक ज्ञान का साहित्य (Literature of Knowledge) और दूसरा शक्ति का साहित्य (Literature of Power) साहित्य के इस दूसरे रूप को ही ललित साहित्य कहा गया है। जो यहाँ पर हमारा विचारणीय विषय है ज्ञान के साहित्य के अंतर्गत गणित, भूगोल, इतिहास, राजनीतिशास्त्र, अर्थशास्त्र, ज्योतिश, विज्ञान आदि वे सारे विषय आते हैं जो इस भौतिक संसार में जीवन जीने के लिए परम आवश्यक हैं और यथार्थ जीवन जीने की कला सिखाते हैं. संसार में मानव–जीवन और समाज की सारी स्थूल प्रगतियों का आधार ये ही विषय है। इसके विपरीत शक्ति का साहित्य या ललित साहित्य का सीधा संबंध सूक्ष्म भाव जगत की अभिव्यक्ति के साथ रह सकता है. मानव समाज की समस्त कोमल, कांत हार्दिक भावनाएँ, जो आनंद का कारण तो बनती ही हैं, जीवन समाज का दिशानिर्देश भी करती है उन सबका वर्णन ललित या शक्ति का साहित्य के अंतर्गत हुआ करता है. कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास, निबंध आदि सभी विषय इस शक्ति के साहित्य के ही अंग माने गए है स्पष्ट है कि चाहे ज्ञान का साहित्य है और चाहे शक्ति का साहित्य दोनों का मूल स्त्रोत मानव–समाज ही है दोनों प्रकार के साहित्य का मूल उद्देश्य या प्रयोजन उसे आनंदमय बनाना है. जो साहित्य ऐसा नहीं कर पाता उसे साहित्य न कह कोरा शब्द–जाल ही कहा जाता है. इस प्रकार का शब्द–जाल अधिक समय तक जीवित नहीं रह पाता।

युगों–युगों से रचे जा रहे साहित्य का विश्लेषण करने के बाद निस्संकोच कहा जा सकता है कि आरंभ से लेकर आज तक जितना भी साहित्य, जिस किसी भी युग का था विशेष काल–खंड में रचा गया है, वह उस युग के कालखंड के जीवन और समाज की भावनाओं को प्रत्यक्ष रूपसे प्रतिबिंबित करता है. इसी कारण साहित्य को हम समाज का दर्पण (Literature is the Mirror of Society) कहते हैं. काल और विकास क्रम से वैदिक–काल में मानव–समाज का जीवन प्रकृति पर आश्रित था। तब के साहित्यकारों ने अपने भागवत वर्णनों के द्वारा प्रकृति के वन, नदी, पर्वत, आदि विविध रूपों को देवत्व प्रदान कर दिया जिसे हिंदी साहित्य का आदिकाल कहा जाता है. 'उस युग में युद्धों और वीरता प्रदर्शन की प्रधानता थी, अंतः प्रमुख रूप से इन्हीं भावों को प्रगट करने वाला साहित्य रचा गया यही बात अगले भक्तिकाल, रीतिकाल आदि अन्य कालों के बारे में भी कही जा सकती है. यही भावविचार–साम्रगी लेकर कोई साहित्यकार उसे अपने ढंग से सजा–संवारकर और उपयोगी बनाकर कविता–कहानी आदि के रूपों में पुनः समाज को लौटा दिया करता है. साहित्य को पढ़कर हम किसी देश और उसके किसी युग–विशेष की परिस्थितियाँ आदि का सहज ही अनुमान लगा लिया करते है। जहाँ साहित्य समाज से सामग्री लेता है, वहाँ उसका मार्गदर्शन भी किया करता है. हम इस प्रकार साहित्य और समाज दोनों का सम्बन्ध अन्योन्याश्रित स्वीकारा जाना चाहिए और सभी स्वीकार करते भी है।

संसार में अनेक प्रकार के प्रभावों की चर्चा की जाती है, उन सब सें साहित्य का प्रभाव अचूक और प्रभावी माना गया है। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के अनुसार तीर तोप और गोली में भी वह शक्ति नहीं जो कि साहित्य में छिपी रहा करती है. ये चीजे केवल शरीर पर ही प्रभाव डालती है। जबकि साहित्य ह्रदय पर प्रभाव डाल उसकी दिशा ही बदल दिया करता है. ऐसी स्थिती में यह आवश्यक हो जाता है कि हम अच्छे साहित्य की ही रचना का अध्ययन करें. उस रचना के लिए सामाजिकता की अच्छाइयाँ सामने आना बहुत आवश्यक है. अच्छा समाज और अच्छा साहित्य मिलकर ही जीवन को उन्नत और समृद्ध बना सकते हैं इन तथ्यों के आलोक में हम यही कहना चाहते हैं कि साहित्य और समाज दोनों एक दूसरे के दर्पण हैं. दोनों का मूल्यांकन उन्हें अलग–अलग रखकर नहीं किया जा सकता। जरूरत इस बात की है कि दर्पणों को साफ–सुथा रखा जाए ताकि हमारी सूरत अच्छी नजर आ सके।

प्रश्न उठता है कि साहित्य और समाज में कौन श्रेष्ठ है? साहित्य की उन्नति–अवनति से समाज प्रभावित होता है अथवा समाज के ऱ्हास–विकास से समाज बनता बिगडता है? इस प्रश्न का एक टूक उत्तर दे सकना सहज नहीं है, इसके लिए साहित्य–सर्जन की प्रक्रिया और समाज पर होने वाले उसके प्रभाव को समझना होगा।

***

साहित्यकार अपने साहित्य का निर्माण समाज में रहकर समाज में रहने वाले सामाजिकों के लिए करता है साहित्य सर्जन के समय कलाकार अपने आपको समाज से अलग नहीं रख सकता। वह भी समाज का एक अंग है और समाज के प्रत्येक क्रिया–कलाप और प्रत्येक गतिविधी से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता, समाज में रहकर वह जो देखता और अनुभव करता है, उसे वह अपनी कलम कूँची से अंकित कर देता है। उसमें उसकी कल्पनाशीलता का भी योग रहता है। स्पष्ट है, साहित्य समाज का दर्पण है, किंतु वह दर्पण समाज के बिना अंधा किंवा आकर्षणहीन है. साहित्य समाज से सामग्री लेता है और समाज साहित्य से प्रेरणा ग्रहन करता है दोनों का अन्योन्याश्रित संबंध है। दोनों एक दूसरे के पूरक है उस तत्वों को उदाहरणों प्रकरणों द्वारा और अधिक स्पष्ट किया जा सकता है प्रमाणार्थ हिंदी के वीरगाथा कालीन साहित्य को ले उस समय सर्वत्र पारस्पारिक द्वेश, ईष्या, कलह का बोलबाला था। समाज युद्धों में रत था आपसी मन–मुटाव और द्वेश से समाज में अस्थिरता व्याप्त थी। वातावरण अशांत था परिणामतः तत्कालीन साहित्य युद्ध गाथाओं, गृह कलह की कथाओं से भरा पड़ा है। साहित्य में घोड़ों की टापों, तीर कमानों की टंकारों, तलवारों की खनक सर्वत्र दृष्टीगत होती है अभिप्राय यह है कि इस काल की अशांति कलह और राजाओं की युद्ध–लिप्सा को हम साहित्य में चित्रित हुआ पाते हैं इस समय में रचित 'खुम्माण–रासो,' 'बीसलदेव–रासो,' 'विजयपाल रासो,' 'पृथ्वीराजरासो' आदि रासों ग्रंथों के उस काल की सामाजिक, राजनीतिक, और धार्मिक स्थिति का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है।

समाज में जाति–पाति, वर्गभेद आदि का बोलबाला था धर्म–अधर्म की लड़ाईयों में समाज कई श्रेणियों उपश्रेणियों में विभक्त हो गया था। जन–जन में मन–मुटाव और घृणा का विश व्याप्त था। अतः साहित्य में इसी प्रकार का स्वर अनुगूजित है संत कबीर के उपदेश हमारे उक्त मत का प्रमाण है, उनकी वाणी में बाह्याचार, जपमाला, छापा–तिलक, माला कंठी, बांग–नमाज, पत्थरपूजा, विधी–विधान, रोजा, तप–तर्पण आदि का विरोध स्पष्ट देखा जा सकता है. कुछ उदाहरण पठनीय है।

'पाथर पूजै हरि मिले तो मैं पूजू पहाड़।
था तो तौ चक्की भली, पीस खाए संसार ।
''कांकर पाथर जोरी कै, मस्जिद लई चुनाई।
ता चढि मुल्ला बाँग दे, बहरा हुआ खुदाई'
'जप माला छापा तिलक सरै न एकै काम।
मन काँचौ नाचे व था साँचे राँचौ राम ।'
'दिन भर रोजा रहत है, रात हनत हैं गायी।
यह तो खून वह बंदगी कैसी खुशी खुदायी'

समाज की भक्ति अनुरक्त की झाँकी मीरा, सूर और तुलसी के साहित्य में मिलती है.

मीरा

मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरो न कोई।
जाके सिर मोर मुकुट मेरो पंति सोई।
'ऐरी मैं तो प्रेम दीवानी मेरा दरद न जाणे कोय।।
मीरा के प्रभु पीर मिटेगी, जब वैद साँवरिया होय।
सिया राम मय सब जग जानी।
करिहौं प्रमाण जोरि जुग पानी ।

अट्ठारहवी शताब्दी तक आते–आते समाज विलास और कामुक हो गया था। राजा और बादशह ऐश्वर्य और वैभव के मद में अंधे हो गये थे समाज में विलासिता का बोलबाला था। अभिजात संस्कृति के नाम पर केवल विलास और प्रदर्शन की प्रकृति शेष रह गई थी। महलों में रखेलियों और परिचारिकाओं के खनकती चूड़ियाँ–नूपुरों के झंकारे झंकृत हो उठी थी. मद्यपान, द्यूत–क्रीडा और विलास का जोर था. समाज की गति का चित्र साहित्य में वर्णित किया।

***

सेज है सुराही है, सुरा है और प्याला है।
सुबाला है दुशाला है विशाल चित्रशाला है।

समाज के अनुरूप साहित्य में घोर श्र ंगारिकता के दर्शन होते हैं. साहित्य में समाज की श्र ंगार–कृति को सहज ही देखा–परखा जा सकता है.

काल झूलै उर में, उरोजनि में दाम झूलें।
याम झूलै प्यारी की अनियारी आखियान में।

हिंदी के रीतिकालीन साहित्य को पढ़कर कोई भी तत्कालीन समाज की दशा का अनुमान लगा सकता है। इसके उपरांत उन्नीसवीं–बीसवीं शताब्दी में समाज सुधार के आंदोलनों का सूत्रपात हुआ नारी के उत्थान, धर्म के आदर्श, मानव के मूल्य, प्राणी के कल्याण, देश के उत्पात जाति के कल्याण, और राष्ट्र के पुनः निर्माण का स्वर गूंज उठा। फलतः साहित्य ने करवट बदली और उसने समाज के स्वर में स्वर मिला कर राष्ट्र निर्माण में अपना योगदान दिया, स्पष्ट है कि साहित्य में जो कुछ लिखा गया वह समाज का दर्पण बन गया।

साहित्यकार द्रष्टा भी है और स्त्रष्टा भी वह आँखें खोलकर समाज को देखता है और पुनः उसके शोधन का उपाय करता है अपनी कल्पना की विलक्षण शक्ति से वह भविष्य का निर्माण करता है, समाज का मार्गदर्शन करता है. कल्पना से समाज को आदर्श की ओर प्रेरित करता है. समाज साहित्य से प्रेरणा और जीवन ग्रहण करता है।

समाज मानव का पुंज रूप है. मानव का समूह ही समाज कहलाता है. साहित्य मानव अनुभवों और विचारों का संग्रह है. अतः दोनो का आपस में अन्योन्योश्रित संबंध है. एक दूसरे के बिना अधूरा या अस्तित्वहीन है. एक का विकास दूसरे का स जन और एक का ऱ्हास दूसरे का मरन है।

InHK

1) हिंदी साहित्य का इतिहास – डॉ. नरेंद्रकृकृ

2) आज का हिंदी साहित्य – ांवेदना और दृ टी– डॉ. रामदरश मिश्र.

3) निबंधायन– डॉ. केशवदत्त रुपाली.

4) विचार और विश्ले ाण – डॉ. नगेंद्र

5) हिंदी के प्रतिनिधी कवि – डॉ. मिश्र.

***

ISSN- 2321-1504 Nagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

समय, समाज और संत साहित्य

डॉ. अलका नारायण गडकरी
सहयोगी प्राध्यापक, हिंदी विभाग,
शिवाजी महाविद्यालय, कन्नड,
जि. औरंगाबाद
ई–मेल– alkajadhav9010@gmail.com
मो. 9403169010

भारत संतों की तपो भूमि है। इसलिए हमारे इस देश में अनेक भाषाओं में संत साहित्य की समृद्ध परम्परा रही है। मध्ययुगीन कालखंड में लिखा गया संत साहित्य आज भी प्रासंगिक है। सम्प्रति अनेक विद्वान विभिन्न दृष्टियों एवं दृष्टिकोण से इस अनुसंधान एवं अध्ययन कर रहे हैं। जैसे कि संतो के वैज्ञानिक, व्यवहारिक, सामाजिक, पर्यावरणीय, वैश्विक आदि पक्षों पर अनुसंधान कार्य हुआ है, हो रहा है। 'साहित्य समाज का दपर्ण' होने के कारण उसमें समाज का प्रतिबिंब होता है। समाज में घटित हर घटना का सुक्ष्म निरीक्षण–परीक्षण उसमें अंकित होता है। रवीन्द्र कुमार सिंह कहते है कि– "साहित्य की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वह अपने परिवेश को केवल प्रतिबिंबित ही नहीं करता, वरन उसे परिवर्तित भी करता है। अपने इस रूप में साहित्य समाज की गतिविधियों में हस्तक्षेप भी करता है। अतः समाज और साहित्य का सम्बन्ध द्वन्द्वात्मक होता है। जिस प्रकार साहित्य पर समाज का दबाव होता है, उसी प्रकार समाज पर साहित्य का दबाव बराबर बना रहता है। कबीर, तुलसी, प्रेमचंद आदि युगीन समाज को केवल प्रतिबिम्बित ही नहीं करते बल्कि उसके निर्माण में भी अपनी कारगर भूमिका का निर्वाह करते है।"[1] स्पष्ट है कि, भारतीय संत साहित्य कालजयी है, वह अनेक वर्षों से दिशादर्शन कर रहा है। अतः यह भारतीय साहित्य की अनमोल धरोहर है। "इस साहित्य का अध्ययन करना नितांत आवश्यक है क्योंकि दस–सौ वर्षों तक दस करोड़ कुचले हुए मनु यों की बात मानवता की प्रगति के अनुसंधान के लिए केवल अनुपेक्षणीय ही नहीं बल्कि अवश्य ज्ञातव्य वस्तु है।

सदियों से समाज में व्याप्त अनैतिकता, अंधविश्वास, दृष्ट प्रथा परंपराओं, सामाजिक विषमताओं को नष्ट करने का प्रयास संत करते आये है। कबीर के पूर्व संत नामदेव थे। कबीर ने नामदेव के भक्तिधारा का परिवहन किया है। भक्ति में साम्य होते हुए भी अभिव्यक्ति शैली में अंतर होने के कारण नामदेव की अपेक्षा कबीर की बानी का तत्कालीन जन–मानस पर अत्याधिक प्रभाव हुआ। कबीर व्यावहारिक और वैचारिक दृष्टि से लोक–परम्परा के अन्वेषक रहे है। उन्होंने धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विसंगतियों का पर्दापाश कर विभिन्न धर्म और समाज में व्याप्त विसंगतियों पर प्रहार किया है। उनका उद्देश्य महज विशाल मानवतावादी समाज निर्माण करने का था। इसलिए कबीर अपने समय में जितने प्रासंगिक थे, उतने ही आज है। आज हम इक्कीसवी सदी तथा वैश्विक युग में जी रहे हैं। जिसमें मानवीय मूल्य कहीं भी दिखाई नहीं दे रहें। जहाँ मूल्य नहीं होते, वहाँ समतामूलक मानवतावादी समाज का होना कैसे संभव हो सकता है? यह सवाल वैश्वीकरण की प्रक्रिया के कारण फिर से एक बार निर्माण हुआ है। इसकी सटिक समीक्षा करते हुए डॉ. संजय नवले लिखते है कि– "कम्प्यूटर शासित जीवनशैली, जमीन, फॅक्टरी , पेटेन्ट, पेड, पौधे, नमक, पत्थर यह सब ईश्वर दत्त चीजे वैश्वीकरण के कारण बाजार में बेची जाने लगी। शिक्षा जैसे पवित्र क्षेत्र में चातुर्वर्णिय व्यवस्था निर्माण हो गयी है। विवाह संस्था पर पश्चिमी विचारों का और बाजार का प्रभाव पड़ा है। विवाह के लिए आप तैयार है तो दुल्हा, दुल्हन जो चाहते हो वह बाजार में मिलने की व्यवस्था निर्माण की गयी है। विवाह के लिए आवश्यक वस्तु रेडिमेट उपलब्ध करनेवाली कंपनियाँ तैयार खड़ी है। प्रकृति को बेचा जा रहा है। एक भी नदी शुद्ध नहीं हैं। उद्योग व्यापार और मॉल यही दुनिया बनी है। पैसा है तो आदमी की कहीं जाने की चालबाजी चल रही है। पैसा नहीं है तो आपको मनुष्य नहीं कहा जायेगा। अत्याधुनिक तकनीकी शिक्षा के कारण मनुष्य यंत्र–मानव हो चुका है। यंत्रवंत शिक्षा मूल्य नहीं लेती बल्कि मनुष्य को संवेदना हीन बनाती है। इसलिए हम पर्यावरण के प्रति उदासीन हो रहे है, हमें प्राकृतिक चीजों से लगाव नहीं रहा है। मनुष्य वस्तु में तब्दिल हो रहा है, उसकी ओर उपयोगितावादी दृष्टि से देखा जा रहा है।

***

विवाह जैसे पवित्रम विधी के लिए माँ–बाप की भी जरूरत संतान को महसूस नहीं हो रही है। पारिवारिक सम्बधों में अलगाव अत्याधिक मात्रा में बढ़ चुका है। नाते–रिश्ते व्यवहारिक हो गये है। मानवतावाद, त्याग, परोपकार, सत्य, सदाचार, निष्ठा, कर्तव्यपरायणता का स्थान अन्याय–अत्याचार, स्वार्थ और संघर्ष, विशमता, साम्प्रदायिकता, जातीयता ले रही है। इसलिए संत विचारों की आवश्यकता तीव्रता से महसूस की जा रही है।

आज का समाज उपभोगतावादी है। उपभोग की सारी चीजे उसके पास है किन्तु संतोष नदारद है। संतोष बाजार से खरीद कर लाने की चीज–वस्तु नहीं, वह मनुष्य के भीतर उत्पन्न होता है तथा महसूस करने की बात है। भौतिक व्यवस्था ने मनुष्य को मनुष्य की तरह रहने ही नहीं दिया है, मनुष्य यंत्र बन चुका है, संवेदनायें मरने लगी है, संवेदनाओं का मर जाना बड़ा भयानक होता है। मनुष्य समाज के भीतर रहकर भी अकेला होता जा रहा है। हम जहाँ कहीं भी जाते है वहाँ हर एक मनुष्य को भ्रमणध्वनि में कुछ खोजते हुए पाते है। जैसे कि बस स्थानक, रेल स्थानक, विद्यालय–महाविद्यालयीन परिसर में छात्र–छात्रायें या अन्य भीड़वाले स्थानों पर भीड़ में रहकर भी मनुष्य अकेला हो गया है। इसी प्रकार पारिवारिक एवं सामाजिक रिश्तों में भी दूरियाँ निर्माण हुई है। अब कोविड–19 आया है और सोशल डिस्टनसिंग के कारण सभी एक दूसरे से बहुत ज्यादा दूर हो गये है। तालाबंदी के कारण माँ–बाप, बहन–भाई के बिना विवाह और अत्यंविधि तथा अन्य सामाजिक, पारिवारिक समारोह संपन्न हो रहे है। ऑनलाईन बेविनार के माध्यम से ज्ञान घर–घर में पहुँच रहा है। नर्सरी से लेकर उच्च शिक्षा तक सभी एक ही लाईन से शिक्षा ले रहे है– ऑन लाईन। जिस देश की शिक्षा पद्धति गुरुकुल से आरंभ हुई थी। वहीं आज इंटरनेट के माध्यम से हो रही हैं। ऐसे में कबीरजी का दोहा याद आये बिना नहीं रहेगा।

"गुरु बिन, ज्ञान न उपजै, गुरु बिन मिलै न मोष।

गुरु बिन लखै न सत्य को गुरु बिन मिटै न दोश।।"

सद्यस्थिती में हमारे गुरु कंम्प्युटर मोबाईल ॲप है, जो हमें यांत्रिक शिष्य के रुप में याद रखते है। जिनके पास अच्छा कंम्प्युटर मोबाईल, अच्छी रेंजवाला इंटरनेट कनेक्शन है उसे ही ज्ञानप्राप्त होगा, जिनके पास उक्त सुविधायें नहीं होगी, वे ज्ञान से दूर ही रहेंगे। स्पष्ट है कि कालचक्रानुसार फिर से बहुजन समाज अज्ञान के अंधकार में फँस जाएगा। सुविधा संपन्न वर्ग ज्ञानसंपन्न होकर पुरानी वर्णव्यवस्था तैयार करने में सक्षम होगा। आत्मनिर्भर भारत का चित्र हम–आप देखेंगे। "निर्धन आदर कोई न देई। लाख जतन ओहू चित्त न धरेई जो निर्धन सरधन कै जाई। आगे बैठा पीठि फिराई।"[5] आर्थिक दृष्टि से संपन्न–विपन्न हो रहा है। इस स्थिति को बदलने के लिए संत साहित्य की आवश्यकता महसूस हो रही है। गौतम बुद्ध के "बहुजनहिताय, बहुजन सुखाय।" का नारा बुलंद करने आवश्यकता है। ज्ञान के सिवाय किसी का हित नहीं होता इसलिए सुख की प्राप्ति भी नहीं होती है। ज्ञान परम आवश्यकता है समाज की। भारतीय समाज व्यवस्था में निम्नवर्ग के लिए सोशक डिस्टंनसिंग पहले से ही मौजूद थी। जिसे खत्म करने के लिए मध्यकालीन कवि तथा संतो ने भरसक प्रयास किये। कुछ हदतक समाज परिवर्तन हुआ भी किन्तु समाज व्यवस्था से जाति प्रथा पूर्णतः नष्ट नहीं हुई वह आज तक चलती आ रही है। तथा स्वतंत्रता के 70 सालों बाद भी इस देश में जातिप्रथा की जड़े मजबूती से गड़ी हुई है। वैश्वीकरण का भी कुछ असर नहीं हुआ। लेकिन संत वाणी से जो कहा गया है वह आज असरदार सिद्ध हो रहा है। सभी मानव एक समान है। सभी के शरीर में खून एक जैसा सभी के समान अवयव हैं फिर भी जाति–भेद क्यों? कबीर जी कहते है–

"एकै बूँद, एक मलमूतर, एक गुदा।

एक जोती से सब उतपना, कौन बामन कौ सुदा।।"[6]

***

आज कोविड–19 महामारी के चेतनाहीन विषाणू ने यह स्पष्ट किया है कि विश्व के सभी मानव एक है। सभी की शरीर रचना एक जैसी है। अतः कोविड–9 का विषाणू जाति–पाँति देखकर हमला नहीं कर रहा है। या इससे किसी भी वर्ग (उच्च, मध्य, निम्न) वर्ण (श्वेत–अश्वेत) का मनुष्य नहीं छुटता है, जो उसके सम्पर्क में आता है। अर्थात गरीबी–अमीरी का भेद भी उसने नष्ट कर दिया। संत रविदास का कथन बहुत ही प्रासंगिक है–

"ऐसा चाहौ राज मैं, जहाँ मिले सबन को अन्न।

छोट बडो सभ सम बसै, रविदास रहे परसन्न।"[7]

वैश्विक महामारी कोविड–19 के कारण समस्त विश्व में संत्रास, भय का वातावरण निर्माण हुआ है। जो लोग शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ आदि के लिए गाँव की ओर निकल पड़े है। कई लोग पैदल, कई अन्य सुविधा को अपनाकर ट्रेन से या बस जो सुविधा सरकार द्वारा प्राप्त हुई उससे गाँव पहुँच चुके है। कई ने सफर में ही दमतोड दिया, तो कुछ ट्रेन से कुचलकर मर गये। गाँव में जाकर सुरक्षित जीवन जीने का सपना, सपना ही रह गया। रोटी की तलाश में आये हुए लोग निद्रित अवस्था में ही चिरनिद्रित हो गये। जीवन क्षणभंगुर है। इस उक्ति का स्मरण हर घटना ने कर दिया हैं। कबीर की वाणी से

"पानी केरा बुदबुदा, अस मानुस की जात।"

एक दिना दिप जाएगा, ज्यों तारा परभात।।"[8]

मनुष्य जीवन क्षणभंगुर है, वह पानी के बुलबुले के समान क्षण में नष्ट हो जाता है। इसलिए कबीर लोगों को जागरूक करते हुए कहते है कि–

"काली करता अबहि, अब करता सुइ ताल।"

पाछैं कछु न हाइगा जौ सिर पर आवै काल।।"[9]

मनुष्य ने समय की उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए जीवनयापन करना चाहिए। न जाने कल क्या हो जाए, भूकंप आ जाए, सुनामी की लहरें फिर उठे या फिर कोविड–19 जैसी महामारी आ जाए, जैसे की आज हम सब उसका सामना कर रहें है। कौन घड़ी कैसी आयेगी किसी को भी पत्ता नहीं, इसलिए मनुष्य ने जो है उसी में सुखी जीवन जीना चाहिए।

"चुन चुन चिड़िया महल बनाया लोग कहे घर मेरा है।"

न घर मेरा न घर तेरा चिड़िया रैन बसेरा है।"[10]

आधुनिक जीवन शैली ने प्राकृतिक संपदा को नष्ट करने का बीड़ा उठाया है। हवा दूषित, पानी दूषित, अन्न उत्पादन में रासायनिक खाद की मात्रा अत्याधिक होने से विभिन्न प्रकार के रोग मनुष्य–प्राणीयों को जड़ रहे है। मॉल संस्कृति के विकास में मनुष्य को माल के रुप में देखा जा रहा है। उद्योग–व्यापार की बड़ी–बड़ी कंपनियों के कारण हवा प्रदूषण और जल–प्रदूषण अत्याधिक मात्रा में बढ़ चुका है। कोविड महामारी के कारण पिछले दो– तीन माह से तालाबंदी हुई और लोग शुद्ध हवा–पानी का सही अर्थ समझने लगे है। अर्थात जीवन का अर्थ इस आपदा ने समझाया है। समय रहते ही सजग होने की चेतावनी प्रकृति हमें दे रही है। हमें प्राकृतिक संपदा का जतन करना चाहिए। दुनिया चाहे कितनी भी बदल जायें। मनुष्य की मूलभूत आवश्यकता रोटी, कपड़ा और मकान नहीं बदल सकती। हाँ! उसकी अभिलाशा दिन–प्रति दिन बढ़कर इससे बड़ा मकान, पिझ्झा–बर्गर (रोटी के स्थान पर) फैशननुमा कपडे हो रही है।

***

किंतु शाश्वत सत्य यह है कि मूल्यों के बिना हुआ विकास टिक नहीं सकता। समय के साथ संस्कृति बदल सकती है जीवन–मूल्य नहीं। सत्य, श्रम, त्याग, ईमानदारी, परोपकार, मूल्यों को लेकर निर्माण हुई मानवी आबादी कभी खत्म नहीं होगी। क्यों कि इनके साथ संत विचारधारा है। आज के कोविड महामारी के दौर में मानवीय मूल्य ही कारगर सिद्ध हो रहे है। लोग अपने भविष्य का विचार न करते हुए भूखे–प्यासे लोगों को सहारा बन रहे हैं। जरूरमन्दों को जीवनावश्यक सेवायें प्रदान की जा रही हैं। मानवता धर्म की श्रेष्ठता, विश्वशांति का संदेश करोना काल में कार्यरत हमारे सभी सेवाकर्मी दे रहे है। आज मंदिर–मस्जिद, गिरजा घर सब बंद है। बिना भगवान के दर्शन किये दुनिया चल रही है। अतः संत कबीर के शब्दों में आज के समय का वर्णन बिल्कुल ही प्रासंगिक है–

"मोको कहाँ ढूँढे रे बन्दे

मैं तो तेरे पास में

ना तीरथ में ना मूरत में

ना एकान्त निवास में

ना मंदिर में ना मस्जिद में

ना काबे कैलास में

मैं तो तेरे पास में बन्दे

मैं तो तेरे पास में"[10]

स्पष्ट है कि मनुष्य के अतःकरण में भगवान है। मनुष्य ही इस सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी है। मनुष्यता ही सर्वश्रेष्ठ धर्म है। मानवता ही इस सृष्टि के संचालन में सहाय्यक है। मानवता की सीख हमें संत साहित्यद्वारा मिली है। अतः संत साहित्य निरंतर समाज का संरक्षण करेगा। संत विचार धारा समय के साथ अविरत चलेगी।

संदर्भ सूची :

1. संत साहित्य की आधुनिक अवधारणाएँ– सं. सुनील कुलकर्णी
2. हिंदी साहित्य की भूमिका – डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी
3. वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में संत साहित्य की प्रासंगिकता – डॉ. संजय नवले
4. कबीर ग्रंथावली – यामसुंदर दास
5. कबीर ग्रंथावली – यामसुंदर दास
6. कबीर ग्रंथावली – यामसुंदर दास
7. समाज सुधारक संत रविदास – डॉ. सुखवीर चौधरी
8. कबीर ग्रंथावली – यामसुंदर दास
9. कबीर ग्रंथावली – यामसुंदर दास
10. कबीर ग्रंथावली – यामसुंदर दास
11. कबीर ग्रंथावली – यामसुंदर दास

***

ISSN- 2321-1504 Nagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

भारतीय साहित्य और पर्यावरण चेतना (कहानी के विशेष संदर्भ में)

डॉ. शिल्पा दादाराव जिवरग
पंडित जवाहरलाल नेहरू महाविद्यालय, औरंगाबाद.
मो. 9421660128
ई–मेल : shilpajivrag@rediffmail.com

'हरयाली के गीत में गाता आठों याम।
कोटि–कोटि पर्यावरण तुमको करु प्रणाम।''

पर्यावरण प्रदूषण आज विश्व में चिंता का विषय है। भारत में पिछले लगभग चार दशकों से प्राकृतिक संसाधनो के असंतुलित दोहन से पर्यावरण में प्रदूषण घुलता गया है। प्रकृति ने मानव को सुखी और समृद्ध जीवन गुजारने के लिए भरपूर सौगाते दी है। जल, जमीन, अग्नि, वायु और खुले आसमान के बची संसाधन जुटाकर मानव ने अपने जीवन को वैभवशाली बनाने में जरा भी कसर नहीं छोडी है। आदिकाल से मनुष्य प्रकृति के इन उपहारों के बीच बिना किसी भेदभाव, लोभ लालच के संतोष के साथ अपने परम्परागत रीति–रिवाजों को अपनाता आया है। और अपने संस्कारों और अपनी पारम्पारिक जीवन शैली को आगंतुक पीढ़ियों को सौंपता चला आया है।

''फूल–फल कंदमूल हैं, पृथ्वी को वरदान,
इन सबको पाकर बना, मानव और महान।।''

जैसे जैसे समय बदलता जाता है, कहावतें भी अपना अर्थ खोती चली है। कहावतों का जन्म तत्कालीन परिवेश, परिस्थितियों और देशकाल के वातावरण के आधार पर होता है। पानी को लेकर भी जितनी कहावते, मान्यता और उद्धरण मिलते है उनमें भी यही देखने को मिल रहा है।

''छह ऋतु, बारह मास है ग्रीष्म–शरद बरसात।
स्वच्छ रहे पर्यावरण, सुबह शाम दिन रात।''

औद्योगिक विकास के नाम पर प्राकृतिक प्रभावों की उपेक्षा से
क्षेत्र विशेष की भौगोलिक स्थितियों में परिर्वन आता गया है और

यह परिवर्तन ही प्रदूषण का हेतु बना। औद्योगिक विकास आर्थिक समृद्धि के द्वार खोलता सुख–सुविधाओं से जुडता है। अपनी सम्मोहकता में सुख–सुविधाएँ प्राप्ति के महत्त्व को ही दर्शाती है, विनाश की वेदना को नहीं। बढ़ते उद्योगो, महानगरों के विस्तार तथा सडकों पर बढ़ते वाहनों के बोझ ने हमारे समक्ष कई तरह की समस्या खडी कर दी है। इनमें सबसे भयंकर समस्या है प्रदूषण। इससे हमारा पर्यावरण संतुलन तो बिगड़ रहा है साथ ही यह प्रकृति प्रदत्त वायु व जल को भी दूषित कर रहा है।

औद्योगिक विकास के नाम पर प्राकृतिक प्रभावों की उपेक्षा से क्षेत्र विशेष की भौगोलिक स्थितियों में परिवर्तन आता गया है और यह परिवर्तन ही प्रदूषण का हेतू बना। औद्योगिक विकास आर्थिक समृद्धि के द्वार खोलता सुख–सुविधाओं से जुडता है। अपनी सम्मोहकता में सुख–सुविधाएं प्राप्ति के महत्त्व को ही दर्शाती है, विनाश की वेदना को नहीं। पर्यावरण संरक्षण का औद्योगिक विकास से विरोध नहीं प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग में तत्कालिक आर्थिक लाभ की स्वार्थपूर्ण दृष्टि से है।

***

''खुब संपदा कुदरती, ऑखों से तू तोल,
कह रही सृष्टी चीखकर वसुंदधरा अनमोल।''

वनो की अंधाधुंद कटाई, नदियों के प्रवाह में कारखानों से उत्सर्जित पदार्थों का निष्कासन वाहनों से निकलता कूडे के ढेर, खेतों, खुले मैदानों, रेल की पटरियों के किनारे निसंकोच मल–मूत्र विसर्जन, कुडों–पोखरों, तालाबों में पशु–स्नान, कपडों की धुलाई आदि तीव्र गति से पर्यावरण को प्रदूषित कर रहे हैं। भारत में अनियंत्रित जनसंख्या वृद्धि, महानगरों का विस्तार, औद्योगिक संस्थानों द्वारा पर्यावरण संतुलन विषयक दिशा निर्देशों की अवहेलना, सरकारी और गैर सरकारी प्रबंध–निरिक्षण समितियों में व्याप्त दायित्वहीनता जन सामान्य की तदविषयक अज्ञानता आदि पर्यावरण प्रदूषण में निरंतर वृद्धि कर रहे हैं। कम संख्या में ही सही, विश्वचेतना में हिन्दी कहानियों में भी सामाजिक जीवन का यह पक्ष उभरा है। कहानिकारों ने पर्यावरण प्रदूषण के दुपरिणामों को दर्शाते हुए प्रकृति में संतुलन बनाये रखने का आग्रह किया है। परिस्थिति और पर्यावरण एक ही सिक्के के दो पहलू है। समस्त जीवों और मानव समुदायों का अस्तित्व प्रकृति के पर्यावरण पर आधारित है। नीलप्रभा भारद्वाज की ''क्योंकि वह आदमी है'' का परिंदा आदमी से कहता है कि आदमी प्रकृति को चुनौती देता है। आदमी ने वनों को काटकर बस्तिया बसाई, नगर बसाया उसने सागर किनारे बहु मंजिले भवन निर्मित किये। समय बदलने पर सब कुछ नष्ट हो गया। कालान्तर में यही परिन्दा उसी आदमी को देखता है। आदमी पुनर्निमाण में व्यस्त है। कहानी में दर्शाया गया है कि प्रकृति में संतुलन बिगडने से विनाश बढ़ता जाता है। एक दिन सबकुछ नष्ट हो जाता है। ऐसा होते हुए भी स जन रुकता नहीं। पुनर्रचना व्यक्ति का स्वभाव है। विनाश के पश्चात निम्रण होता है किंतु असंतुलन विनाश का कारण बनता ही है।

मानव का इतिहास एवं संस्कृति उनका सामाजिक एवं आर्थिक विकास और सुखी जीवन व कल्याण में उनके पर्यावरणीय प्रभावों का योग र्वविदित है। उदय सहाय की 'तीर्थमय यात्रा' में कैलाश
यात्रा की प्रासंगिकता में पर्वतीय सौंदर्य को दर्शाते हुए ऐसे सौंदर्य को अक्षुण्य बनाये रखने का आग्रह है। पर्वत उन भूगर्भीय और भौगोलिक शक्तियों, परिवर्तनों और परिणामों के प्रमाण हैं जो सृष्टि रुप में प्राकृतिक संतुलन का अंग है। पर्वत से जुडी कथाएँ, किवदंतियॉ, आस्थाएँ विश्वास आदि लोक जीवन का अभिन्ना अंग है। पर्वतीय सौंदर्य मन में मधुरता, मृदुलता, ससृणता घोलते हुए उसे शांत, स्थिर, प्रसन्न और स्वच्छ रखता है। प्राकृतिक उपादानों के ये उपहार सामाजिक जीवन को भी कुत्साओं, वीयत्सताओं और विकृतियों से दूर रखने में सहायक होते है।

दिव्या भट्ट की 'कीट भक्षी' में मृत्यु दर्शन को उभारते हुए बड़े कीडों द्वारा छोटे कीडों को आहार बनाने के तथ्य को गहराया गया है। कीडे ही कीडों का आहार बनते हैं। इस प्रकार प्रकृति अपना कीट विषयक संतुलन बनाये रखती है। कहानी में व्यक्त भाव वन्य पशु संरक्षण से जुड़ता है। सृष्टि से किसी भी पशु, कीट या पक्षी प्रषति का लुप्त होना श्रेयकर नहीं है।

सामाजिक जीवन में पालतू पशुओं और उत्पादन सहायक कीटों का जितना महत्त्व है, पर्यावरण संरक्षण में उतना ही वन्य पशुओं और जन्तुओं का है। जीव साक्षी है, कि प्रजाति विशेष के लुप्त होने से प्राकृतिक संतुलन उगमगाया है।

''मन प्रसन्नचित हो गया, देख हरा उद्यान,
फूल खिले है चार सू, बढा रहे है शान।''

डॉ. हसन रखीद खान की 'इक्कीसवीं सदी की छत' में वृक्षों के महत्त्व को गहराया गया है। कहा गया है कि वृक्षारोपण हमारी सामाजिक आवश्यकता है। कहना होगा कि भारतीय संस्कृति और सभ्यता के विकास में नदियों की जो भूमिका रही है लगभग वही भूमिका वनों और वृक्षों की रही है। हमारे ऋषि–मुनियों ने जहां नदियों के किनारे आश्रम बनाये वहीं वनों में जाकर घोर तपस्या भी की, आध्यात्मिक शक्ति प्राप्त की। वन जलवायु को प्रभावित करने के बडे कारक रहे हैं। वनों की अंधाधुंद कटाई से वर्षा कम हुई है, तापमान में वृद्धि हुई है। पर्यावरण संतुलन बिगडा है। कहानी में पर्यावरण प्रदूषण से सामाजिक जीवन में आसन्न संकट की आशंका से कहानीकार ने व क्षारोपण को इस शताब्दी की महती आवशकता बनाया है।

***

संतोष दीक्षित की 'देखते–देखते' में नदियों के प्रदूषण से नित्य बढते पेजयजल के संकट के प्रति गहरी चिंता व्यक्त की गयी है। भारत में नदियां मुख्य जल स्त्रोत रही हैं। कृषि व्यवसाय बहुतांश में नदियों के जल पर निर्भर करता है। प्रदूषण के साथ नदियां सूख भी रही हैं। कहानी में कहानीकार की स्म तियों में गंगा के किनारे बिताये जीवन के चित्र उभरते हैं। गंगा अब पवित्र नहीं रही। नगरों–गांवों का मलमूत्र, कचरा, कारखानों के उत्सर्जित पदार्थ आदि गंगा नदी में 'प्रवाहित' कर दिये जाते हैं। इस प्रदूषित जल के उपयोग से अनेक प्रकार की बीमारियां फैलती है, सामाजिक जीवन कुप्रभावित होता है। जल का प्रदूषण गंगा नदी के प्रति हमारी आस्थाओं, विश्वासों, श्रद्धा भक्ति आदि को भी उगमता देता है। गंगा नदी से जुडी हमारी कथाओं, लोकगीतों, प्रवचनों आदि पर भी प्रश्नचिन्ह लग जाते हैं। भारतीय सभ्यता और संस्कृति के अनेक अंश विवादास्पद बन जाते है। कहानी नदी जल–प्रदूषण को व्यापक सामाजिक जीवन में उभारती हुई पर्यावरण संतुलन के प्रति सचेत करती है।

मुरारी शर्मा की 'मुट्ठी भर धूल' में सतलुज नदी पर बनाये जा रहे बांध की पृष्ठभूमि में नदियों के सहज प्रवाह को बांधने से पर्यावरण संतुलन की बिगड़ती स्थितियों पर चिंता व्यक्त की गयी है। बांध निर्माण ग्रामीणों के लिए विस्थापना और पुनर्वास की समस्या भी बन जाता है। अपेक्षाओं आदि को दर्शाता है। उसकी यह चिंता साहित्य को सामाजिक समस्याओं से सीधे जोडती है। साहित्य की अन्य विधाओं की अपेक्षा कहानियों में ये समस्याएँ अधिक प्रभावात्मकता में उभर रही हैं।

डॉ. देवेन्द्र मिश्र की 'एक अनार सौ बीमार' में अनार के पौधे को लेकर उठती–गिरती भावनाओं द्वारा पर्यावरण–संतुलन पर बल दिया गया है। घर की ाल में उगे हुए अनार के पौछे को पडोस के लड़को द्वारा उखाड दिये जाने पर कथानायक व्यथाग्रस्त हो जाता है। बढ़ता हुआ पौधा मन को प्रफुल्लता से भर देता था। उसे देखकर सुख का अनुभव होता था। उसका न रहना मन में विषाद घोल देता है। कहानी पेड पौधों को प्रफुलता, प्रसन्नता, सुखानुभूति, आनन्द आदि का स्त्रोत मानते हुए प्राकृतिक सौंदर्य के महत्त्व को गहराती है। अमिताभ शंकर राय चौधरी की 'नोनाजल' में सुनामी से हुए विनाश को दर्शाया गया है। सुनामी ने तामिलनाडु के सागर तट पर बसे हुए गांवों को तहस–नहस कर दिया। मछुआरे और उनके परिवार उजड गए।

पर्यावरण चेतना केन्द्रित हिन्दी कहानियां गहरे विश्व बोध में मानव जीवन की एक ज्वलंत समस्या पर प्रकाश डालती है। पर्यावरण प्रदूषण भारत ही नहीं समस्त विश्व में चिंता का विषय बना हुआ है। कहानीकारों का इस विषय में चिंतित होना प्रस्तुत की पहचान, सम–सामायिक अपेक्षाओं आदि को दर्शाता है। उसकी यह चिंता साहित्य को सामाजिक समस्याओं से सीधे जोडती है। साहित्य की अन्य विधाओं की अपेक्षा कहानियों में ये समस्याएँ अधिक प्रभावात्मकता में उभर रही हैं।

''मानव मत खिलवाड कर, कुदरत है अनमोल,
चुका न पायेगा कभी, कुदरत का तू मोल।''

संदर्भ ग्रन्थ सूची :

1. पर्यावरण अध्ययन – डॉ. एल. एन. वर्मा, डॉ. एल. सी. खत्री, डॉ. इशाक मोहम्मद कायमखानी, मानव संसाधन विकास मंत्रालय
2. समकालीन भारतीय साहित्य – 2006, नवम्बर–दिसम्बर
3. मधुमती –अगस्त 2007
4. आजकल, दिसम्बर 2008

***

संत साहित्य का सामाजिक एवं सांस्कृतिक पक्ष

डॉ. बलवीर सिंह
पूर्व विजिटिंग प्रोफेसर,
बीजिंग विदेशी अध्ययन
विश्वविद्यालय,
बीजिंग (चीन)–100089,

प्राचीन काल से इस देश की भूमि विभिन्न रत्नों की भण्डार रही है। इसलिए इस देव भूमि ने समय–समय पर अनेक संत, पीर, फकीर, शूरवीर, सती, संतोखी एवं तपस्वी आदि महान आत्माओंको जन्म देकर मानव जीवन का उद्धारकियाहैतथा इस देश में हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, बौद्ध, जैन एवं ईसाई आदि विभिन्न संप्रदाय के लोगों की अपनी–अपनी संस्कृति एवं अनेक भाषाओं के साथ मिल–जुलकर रहते आए हैं। मध्यकालीन समय में अनेक महापुरुषों एवं संतों ने जन्म लेकर भारतीय संस्कृति तथा सामाजिक उद्धार में अपना बहुमूल्य योगदान दिया। उस समय चारों ओर अशांति, अराजकता, अव्यवस्था और अनैतिकता का बोलवाला था। बल्कि सामंती समाज और मुगलशासक दोनों ही बहुसंख्यक समाज का शोषण कर रहे थे। ऐसे में संत कबीर ने दुखित स्वर में कहा –

चलती चक्की देखि के, दिया कबीरा रोय ।।
दो पाटन के बीच में, सावित रहा न कोय ।।1

संत कबीर और गुरु नानक देव ने हिन्दू–मुसलमान दोनों को एकेश्वरवाद का संदेश दिया। उस समय भारतीय समाज अनेक जातियों में बाँट हुआ था तथा हिन्दू समाज में अत्यधिक जातीय भेदभाव, मूर्तिपूजा एवं रूढ़िवादी परम्पराओं का समावेश था। ऐसे समय पर संत कबीर, गुरु नानक देव, संत रविदास और बाबा शेख फरीद ने अपनी वाणी से जनमानस की दृष्टि से अंधविश्वास, कुरीतियों एवं जातीय भेदभाव को तोड़ने का प्रयास किया तथा गुरु नानक देव ने जातीय भेदभाव को दूर करने के लिए अपनी वाणी में इस प्रकार कहा –

नीची अंदरि नीच जाति, नीचा हूँ अति नीच ।।
नानक तिनके संगि–साथि, बड़िआ सिउ किआरीस ।।2

उन्होंने बताया कि मैं उन नीची जाति में जो बहुत ही नीचे हैं, उन्हीं के साथ हूँ। जबकि ऊँचे लोगों में मैं अपनी क्या तुलना करूँ ?जबकि एक ही धरातल पर रहते हुए लोग ऊँचे–नीचे देखे भाले जाते हैं, लेकिन उस प्रभु की वहीं पर कृपा दृष्टि होती है।

गुरु अंगददेव ने जातीय द्वेष दूर करने के लिए एक संगत–पंगत में बैठकर लंगर की प्रथा आरंभ की थी तथा गुरु रामदास ने भी जनमानस के बीच शारीरिक द्वेष को दूर करके "श्री हरिमंदिर साहिब" अमृतसर की सरोवर में स्नान करने से सामाजिक एकता को बढ़ावा दिया तथा उस समय उन्होंने भी सामंती समाज पर तीखी आलोचना की –

जाति का गरवु न करी अह कोई, ब्रह्म बिदे सो ब्राहमु होई ।।

उन्होंने बताया कि किसी मानव को जाति का गर्व नहीं करना चाहिए, जबकि जाति का अंहकार व्यर्थ ही है। जो मनुष्य ब्रहमा के ज्ञान का उच्चारण कर सकता है तो वही सच्चा ब्राहमण हो सकता है।

ऐसी स्थिति में संत कबीर के बाद गुरु नानक ने समय पर संभाला न होता, तो भारतीय समाज में बिखराव और बढ़ गया होता। अंत में गुरु नानक देव ही उनकी डगमगाती नैया की पतवार बन गए। अपने हताश जीवन से जनमानस ने आँख बन्द करके आत्म समर्पण कर दिया। उस समय महलों में रहने वाली स्त्री अत्याचारों से तृप्ति दिखाई दे रही थी,उस समय उन्होंने कहा जिन सिर सोहनि पटीआ माँगी पाइ संधूर ।।

उन्होंने बताया कि जिन सुन्दर स्त्रियों की माँगों में सुहाग का सिंदूर भरा हुआ था, वे ही अत्याचारों से अपमानित हो रही थी और उन्हें सत्य कहीं नहीं दिखाई दे रहा था। ऐसे समय में ही गुरु नानक देव ने भारतीय समाज में स्त्री और पुरुष दोनों को समानता का अधिकार दिलाया,उन्होंने बताया कि सारा संसार स्त्री के द्वारा ही जन्म लेता है और वह राजा, महाराजाओं एवं महान आत्माओं की जगत जननी भी है। इसलिए संसार में गृहस्थी जीवन चलाने के लिए स्त्री की बहुत आवश्यकता है।

***

ISSN- 2321-1504 Nagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

संत कबीर के बाद गुरु नानक देव ही भक्ति आंदोलन के कर्णधार हुए तथा उस समय का भक्ति आंदोलन अपने आप में अनुपम और अदितीय था इसलिए संत साहित्य में इन संतों ने अपनी वाणी में सामाजिक पीड़ा, वर्ण–व्यवस्था एवं बाह्यड़म्बरों के विरुद्ध आवाज उठाई।

कबीर मेरी जाति कउ, सभ को हसनेहारू ।।
बालिहारी इस जाति कउ, जिह जपिओ सिरजनहारू ।।

संत कबीर ने कहा कि प्रत्येक व्यक्ति मेरी जुलाहा जाति पर उपहास करता है,जो निम्न से निम्न जाति समझी जाती है। संत कबीर कहते हैं कि मैं ऐसी जाति पर बालिहारी हो जाऊँ, क्योंकि निम्न जाति वाले को भी परमात्मा का नाम सिमरन करने से रोक नहीं सकता, लेकिन प्रभु के गुणों का कीर्तन करने से निम्न जाति की हीन भावना दूर हो जाती है।

जिससे उस मानव का मन–तन सुखी हो जाता है।
अगै जाति न जोरू है, अगै नीउ नवे ।।6

गुरु नानक ने बताया कि परमात्मा के दरबार में न जाति है और न कोई जाति का जोर चलता है। बल्कि प्रभु के यहाँ पर ऊंच–नीच जाति का कोई भेदभाव नहीं है और न किसी व्यक्ति का वहाँ जोर चलता है। इस संसार में जिन्होंने शुभ कर्म किए हैं, उन्हें ही प्रभु के दरबार में आदर प्राप्त होता है।

साई के सब जीव हैं, कीरी, कुंजर दोय ।।7

उन्होंने बताया कि ऊँचे कुल में जन्म लेने से मनुष्य के कर्म ऊँचे नहीं हो सकते हैं। उस प्रभु ने सभी जीवों को समान बनाया है। जो मनुष्य हृदय से "रामनाम" का सिमरन नहीं करते हैं, तो उन्हें ही छूत लगती है इसलिए वही सबसे नीच होते हैं। लेकिन संत कबीर भेदभाव की दुनियाँ से परे, प्रेम के मधुर वातावरण एवं मानव जीवन को आनन्दमय बनाकर जीना चाहते थे। इसलिए उन्होंने मानव प्रेम ही सच्चा धर्म माना है।

अबलि अलह नूर उपाईआ कुदरति के सभ बंदे ।।
ईक नूर ते सभु जगु उपजिया कउन भले को मंदे ।।8

संत कबीर ने कहा है कि सारा जगत ही एक नूर से उत्पन्न हुआ है। सभी उस कुदरत के बंदे हैं, जो सारी सृष्टि में व्यापत है। ईश्वर की दृष्टि में न कोई अछूत है, उस परमपिता ने सबको समान आसन पर बिठाया है। यह धरती ही सबका आसन है तथा यह सभी को पाल–पोसकर बड़ा करती है। तब हिन्दू–मुसलमान, ऊंच–नीच कहाँ से पैदा हो गये। सभी को सत्य पर विश्वास करना चाहिए तभी उस मनुष्य का हृदय निर्मल होगा।

तीरथि नावण जाउ तीरथु नामु है ।।
तीरथु सबद बीचारु अंतरि गिआनु है ।।9

गुरु नानक देव ने कहा कि परमात्मा का नाम ही असली तीर्थ है। जिसने ज्ञान रूपी "शब्दनाम" पर विचार कर लिया है, वही संसार का सबसे बड़ा तीर्थ है।

कबीर लेखा देना सुहेला, जड़ दिल सूची होई ।।
उसु साचे दीवान महि, पला न पकरै कोई ।।10

संत कबीर ने बताया कि परमात्मा मनुष्य से सिर्फ दिल की पवित्रता की कुर्वानी माँगता है। यदि मनुष्य का दिल पवित्र हो, तो अपने किए कर्मों का लेखा देना आसान हो जाता है। इसलिए प्रभु की सच्ची दरगाह पर उसे कोई रोक–टोक नहीं कर सकता है।

***

माणस खाणे करहि निवाज, छुरी बगाइनि तिन गलितागा ।।11

उन्होंने बताया कि माँस का भक्षण करने वाले मुसलमान नमाज पढ़ते हैं और जुल्म की छुरी चलाने वाले हिन्दू जनेऊ धारण करते हैं। इससे परमात्मा के "शब्दनाम" का ज्ञान नहीं हो सकता है। इसलिए दोनों समुदाय के लोगों का हृदय पवित्र होना चाहिए।

सोचे सोचि न होवई, जे सोची लखवार ।।
चुपै चुप न होवई, जे लाइ रहा लिवतार ।।12

गुरु नानक ने बताया कि यदि मनुष्य लाख वार स्नान आदि से शरीर को पवित्र रखें, इससे मन की पवित्रता नहीं हो सकती है। मन की निर्मलता ही सच्ची पवित्रता है। सिर्फ मौन धारण करने अथवा चुप रहने से मन को शांति नहीं मिल सकती है।

कबीर मनु मुंड़िआ नहीं, केस मुंडाए काइ ।।
जो किछु कीआ सोमन कीआ, मुंडा मून्दु अंजाइ ।।13

संत कबीर ने बताया कि योगियों को सिर के बाल मुड़ाने से पहले अपने मन को मुंड़ा लेना चाहिए। क्योंकि सिर के केश मुंडाने से साधु नहीं बन सकता, जिससे मन के विकारों के मैल दूर नहीं हो सकते, ऐसे बुरे कर्म की प्रेरणा केवल मन ही करता है। इसलिए मन को मुंडाना ही सही है।

अन्न छोड़ि करहि पाखंड ।।
न सोहागणि न उह रेड़ ।।14

संत कबीर ने अन्न त्याग, नग्न रहना, मढ़ियों में रहना और मौन धारण आदि का विरोध किया है। उन्होंने "श्री गुरुग्रंथ साहिब" के इस सबद में अन्न के उपवास को पाखंड बताया है। जिस प्रकार एक स्त्री पति की सेवा करके सुहागिन हो जाती है तथा उसी तरह दूसरी स्त्री दुर्गुणों से अपने पति से विमुख हो जाती है तब वह विधवा (असुहागिन) कहलाती है।

अन्न न खाइया सादु गवाया ।।
बहु दुख पाइया दुजा भाया ।।15

जो लोग अन्न को त्यागते हैं, नग्न रहते और मौन धारण करते हैं। गुरु नानक देव ने बताया कि मनुष्य को शरीर के कष्टों से परमात्मा के स्वरूप का ज्ञान नहीं हो सकता, ये सभी उन्होंने निरर्थक माने हैं।

ऐसे जन विरले संसारे, गुरु सबद वीचारहिं रहहि निरारे ।।
आपि तरहि संगति कुल तारहि, तिन सफल जनमु जगि आइआ ।।16

गुरु नानकने कहा कि ऐसे मनुष्य संसार में विरले ही होते हैं, जिन्होंने गुरु के "शब्दनाम" को परख लिया है। वे भक्त ही परमात्मा के नाम को हृदय में बसा लेते हैं इसलिए उनका इस संसार में जन्म लेकर आना सफल हो जाता है। क्योंकि ऐसे भक्तगण स्वंय तो तरते ही हैं लेकिन वे समस्त संगति और अपने कुल को भी तार लेते हैं।

मन्दिर, मस्जिद, गुरुदारे केवणान्तर है जग दी ।।
तेरे शब्दों बकखों बख, एक मंजिल है सब दी ।।17

गुरु वाणी में ईश्वर, प्रेम और भाई–चारे की एकता को दर्शाया है। "श्री गुरुग्रंथ साहिब" में जन मानस में खड़े धार्मिक भेदभाव को दूर करने के उपाय बताये हैं, कोई धर्म अलग नहीं है, केवल उनके रूप, रंग अलग–अलग हैं। लेकिन सारे जगत में उस परमपिता परमेश्वर को अलग–अलग नामों से पुकारा जा रहा है। परन्तु सभी धर्मों की मूल मंजिल "शब्द नाम" ही है तथा सभी धर्म एक परमात्मा की ही सन्तान हैं। वही सारी सृष्टि की रचना करके स्वतन्त्र रूप में विराजमान है। मुगल बादशाह अकबर ने मुस्लिम त्यौहारों के साथ–साथ हिन्दू, पारसी आदि के पर्वों की व्यवस्था की। इस कारण भारतीय समाज में होली, दीपावली, ईद–मुहरर्म, शबेबारात आदि उत्सवों में मिल–जुलकर रहने से जाति दृव्यवस्था की दूरियाँ कम होने लगी तथा उन्होंने भारत में शिक्षा के दुवार खोलकर हिंदी, संस्कृत, उर्दू, फारसी आदि भाषाओं को अधिक महत्व दिया।

***

ISSN- 2321-1504 Nagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

अकबर के बाद जंहागीर के शासन में साहित्य, चित्रकला और संगीत के साथ नई–नई राग–रागनियाँ विकसित हुई तथा उस युग की चित्रकला में कई सांस्कृतियों का मिश्रण मिलता है। लेकिन उस समय स्वामी हरिदास, तानसेन, बेजूबाबरा आदि संगीतज्ञों ने अपने संगीत की महत्वपूर्ण छाप दिखाई है। इसलिए ये संगीतकार आज के वैज्ञानिक युग में भी महान संगीतज्ञों के रूप में जाने जातेहैं। ।

इन संत कवियों ने जन साहित्य से जन भावनाओं को जागृत करने का अथक प्रयास किया, उनकी काव्य कला में सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक सुधार का भी समावेश है। उनके काव्य में सांस्कृतिक कला,शिल्प साहित्य एवं संगीत का भी प्रभाव मिलता है। हिंदी साहित्य में संत साहित्य ने अपनी अलग धर्मिक, सामाजिकएंव सांस्कृतिक प्रभाव को दर्शाया है, जबकि भारतीय समाज में समरसत्ता को स्थापित करने में संत साहित्य सबसे बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची –

1. तेज सिंह (स) दृ अपेक्षा पत्रिका, जनवरी–मार्च–2003, पृ० – 03

2. प्रो० साहिब सिंघ दृ नितनेम टीका, पृ० – 102

3. डॉ. मनमोहन ''सहगल'' दृ गुरुग्रंथ साहिब का एक सांस्कृतिक सर्वेक्षण, पृ० दृ 51

4. भाई वाले दृ गुरु नानकदेव की जन्म साखी, पृ० दृ 439

5. प्रो० साहिब सिंघ दृ श्लोक कबीर जी टीका, पृ० – 63

6. जयराम मिश्र दृ नानक वाणी, पृ० दृ 54

7. डॉ० बलदेव वंशी दृ पूरा कबीर, पृ० दृ 29

8. श्री गुरुग्रंथ साहिब (स), पृ० दृ 1349

9. वही, पृ० – 687

10. प्रो० साहिब सिंघ दृ श्लोक कबीर जी टीका, पृ० दृ 201

11. जयराम मिश्र दृ नानक वाणी, पृ० – 348

12. प्रो० साहिब सिंघ दृ नितनेम टीका, पृ० दृ 16

13. प्रो० साहिब सिंघ दृ श्लोक कबीर जी टीका, पृ० दृ 101

14. श्री गुरुग्रंथ साहिब (स), पृ० दृ 873

15. स्वामी रामतीर्थ दृ आदि श्री गुरुग्रंथ साहिब, पृ० –55

16. जयराम मिश्र दृ नानक वाणी, पृ० दृ 654

17. W W W- Amritsar-com-

***

ISSN- 2321-1504 Nagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

महाकवि प्रसाद के काव्य में मानवीय संवेदना

डॉ. कृष्ण बिहारी रॉय
सहायक प्राध्यापक (हिन्दी)
शासकीय कन्या स्नातकोत्तर
महाविद्यालय, सीधी (म0प्र0)
मोबाइल–8085011304
ई मेल–krishnabihariverma@gmail.com

प्रसाद का अपना जीवन सुख और दुःख से झूलों पर बीता था फलतः उनके काव्य में वेदना और करूणा को, आत्म प्रकाश के कारण प्रचुर स्थान मिला। यही वेदना और करूणा मानवीय संवेदना के धरातल का निर्माण करती है। प्रसाद में स्वयं विश्व बन्धुत्व का भाव था। अतः उनका काव्य भी मानवता की अखण्ड ज्योति से प्रकाशित हो रहा है। डॉ. द्वारिका प्रसाद सक्सेना ने करूणालय से कामायनी तक प्रसाद साहित्य का विश्लेषण कर प्रसाद की निम्न मानवीय संवेदना की प्रवत्तियाँ निर्धारित की है

1. वे मानव के अन्तः प्रवृत्ति के प्रेमी है। इसी कारण उनके साहित्य में मानसिक संघर्ष, अन्तर्द्वन्द, अन्तर्मन्थन आदि की प्रधानता है।
2. वे नियतिवादी है और विश्व की नियामिका शक्ति नियति के समस्त कार्यों को स्वतंत्र मानते हुए उसे विश्व का संतुलन मानव अतिवादों की रोकथाम, प्रकृति का नियमन, मानवता की सृष्टि तथा मानव कल्याण करने वाली शक्ति मानते हैं।
3. वे देश और राष्ट्र के अनन्य प्रेमी है। इसी कारण स्थान–स्थान पर देश के अनन्त सौन्दर्य की झांकी प्रस्तुत करते हुए उसे स्वतंत्र बनाने के लिए प्रेरणा प्रदान करते हैं और पराधीनता को मानव के लिए अभिशाप मानते है।
4. वे मानवीय है और समस्त विश्व में मानव की उत्तम भावनाओं का प्रसार करते हुए सर्वत्र एकता, समता, भ्रात त्व भाव, समन्वय शीलता विश्व बन्धुत्व आदि की स्थापना करना चाहते हैं, एवं समाज की सर्वांगीण उन्नति के पक्षपाती है।
5. वे कर्तव्यवादी हैं और मानवों के जीवन की सार्थकता इसी में मानते हैं कि वे निरन्तर सत्कार्यों में लीन रहे, कर्म–फल की चिन्ता न करें तथा जीवन के अभीष्ट पल धर्म, अर्थ काम और मोक्ष के लिए सतत् प्रयत्नशील रहें।
6. वे भारतीय संस्कृत के अनन्य प्रेमी है। अतः अनेकता में एकता एवं भेद में अभेद देखते हैं तथा भारतीय ज्ञान विज्ञान को संसार से सर्वश्रेष्ठ मानते हुए भारतीय संस्कृत को संसार में सर्वश्रेष्ठ, सर्वोच्च तथा सर्वाधिक मानव–कल्याण की भावनाएं सिखाने वाली मानते हैं।
7. वे दार्शनिक है और दर्शन का व्यहारिक पक्ष ही उन्हें अधिक प्रिय है। वे ऐसे किसी दर्शन को मानने के लिए तैयार नहीं जो संसार की असत्ययता का प्रतिपादन करता हुआ मान को वैराग्य, अकर्मण्य, कर्तव्यपारान्गमुखता आदि की शिक्षा देता है।

इसी कारण वे मुख्यतः शैव–दर्शन की ओर उन्मुख हुए है जहा अपने विचारों के अनुकूल उन्हें अधिक सामग्री मिली है।[1] उक्त निष्कर्ष के आलोक में महाकवि प्रसाद के काव्य में मानवीय संवेदना की तलाश बेहतर ढंग से होगी।

'प्रेम पथिक' प्रसाद का खण्ड काव्य है अनन्य आत्मिक प्रेम का वर्णन है। किशोर अपनी 'पुतली' से विमुक्त होकर सन्यासी हो जाता है। एक समय के अन्तराल में उसका मिलन नाटकीय अवस्था में होता है। फिर दोनों एक नये संसार को बनाने के लिए उद्यत होते हैं। इस छोटे से काव्य में प्रसाद ने विभिन्न उदाहरणों में विश्व मानव को एक होन का संदेश दिया।

प्रेम पथिक में कवि ने मानवता का आरंभ राजनीति से किया है। तुलसी ने कहा है :–

सचिव वैद्य, गुरू तीन जहँ प्रिय बोलहिं भय आस।

प्रसाद ने थोड़ा परिवर्तन किया है। उन्होंने शासकों पर टिप्पणी की है। शासक उदार हो तो अखिल विश्व में मानवता का संचरण होने में देर नहीं होगी। प्रेम पाथिक मे वे कहते हैं :–

प्रिय दर्शन होकर जब मंत्री यथा विहित सब सुनता है।

हृदय खोलकर दिखलाने को कौन प्रजा प्रस्तुत न हुई?

***

नारी मन पुरुष की अपेक्षा शीघ्र द्रवित होता है, प्रसाद कहते हैं :–

क्यों हृदय कोमल होता है बनिताओं का बातां में,
करूणा–प्लावित होकर दृग झरने को भरने लगता है।

तब तक धररा पर श्रम के गीत नहीं गाये जायेगें जब तक कृषक सुखी नहीं होगें कृषक सुखी न होगें तो समाज और देश का विकास रूकेगा एवं किसी एक देश के दुःख का समस्त विश्व विपरीत असर पड़ेगा। प्रसाद ने एक सुन्दर मानव ग्राम की कल्पना प्रेम–पथिक मं की है।–

आज विश्व में निश्छल व्यक्ति बड़ी कठिनता से मिलते हैं। वैसे भी प्रत्येक व्यक्ति दो रूपों में जीता है। एक अपने लिए, दूसरा दूसरे के लिए। जिस दिन व्यक्ति अपना रूप दूसरों पर प्रकट कर देगा, अपने सच्चे हृदय को दूसरों के समक्ष खोल देगा–समस्त विश्व–मानव, मानवत के रंग सें रंग जावेगा। प्रसाद किशोर के माध्यम से कहते है :–

हृदय खोलकर मिलने वाले बड़े भाग्य से मिलते है
XXX XXX XXX XXX
मिल जाता है जिस प्राणी को सत्य प्रेममय मित्र वहीं
निराधार भव सिन्धु बीच वह कर्णधार हो पाता है
प्रेम नाव खेकर जो उसको सचमुच पार लगाता है।''[1]

प्रेम विवाह की परम्परा आधुनिक युग की देन मानी जाती है, किन्तु प्रसाद जी वर्षों पहले इस पर विचार कर चुके है। उनका चिन्तन है कि जिससे पहले कभी परिचय ही न हुआ हो उसके साथ कन्या को जीवन भर के लिए बांध देना कौन सी मानवता है?

मानवता का सौन्दर्य सबसे बड़ा है। जो चित्रकार मानव मन पर मानवता के चित्र उकेरते हैं, वे मान हैं। प्रकृति सौन्दर्य है, किन्तु उसके लिए अधिक, सुन्दर है, जिनमें मानव–भाव हैं। प्रसाद कहते हैं :–

जो पथिक होता कभी इस चाह में
वह तुरत ही लुट गया इस राह में
मानवी या प्राकृतिक सुषमा सभी
दिव्य शिल्पी के कला–कौशल।

दृश्य काव्य 'करूणालय गीति' नाट्य के ढंग पर लिखा गया है। इसमें भी कवि ने पौराणिक आख्यान के द्वारा मानव के विकास में बाधक नर बलि की समस्या को उठाया है। हरिश्चन्द्र के नरमेध यज्ञ के लिए ऋषि अजीर्गत अपने मॅझले पुत्र 'शुनः शेफ' को सौंप देते है। उस समय का कवि का मानवीय कथन दृष्टव्य है। वे इस दुष्कृत्य का विरोध करते हुए कहते हैं :–

''अपनी आवश्यकता का अनुचर बन गया
रे मनुष्य! तू कितने नीचे गिर गया
आज प्रलोभन–भय तुझसे करवा हरे
कैसे आसुर कर्म! अरे तू क्षुद्र है
क्या इतना? तुम पर सब शासन कर सके
और धर्म की छाप लगाकर न्मूढ तू।
फॅसा आसुरी माया में हिंसा जगी
अथवा अपने पुरोहित के मान की
ऋषि वसिष्ठ को, कुलगुरू को इस राज्य के।''1

***

''हिंसा भरे कर्मकाण्ड का विरोध भी करूणालय की ध्वनि है। एक करूणा दर्शन की स्थापना इसमें प्रेमपथिक के प्रेम की तर्ज पर हुई है, जिससे बौद्धों की करूणा का प्रभाव भी दिखाई देता है''[2]

विश्वामित्र वाशिष्ठ को धिक्कारते हुए कहते हैं :–
''तुम हो त्राता धर्म मनुज ही शांती के
यह क्या है व्यापार चालाया? चाहिए
यदि मनुष्य के प्राण तुम्हारे देव को
ले लो कितने लोगे ये सब सो रहे।''3

और वशिष्ठ लज्जित होते है 'शुनः शेफ' मुक्त होता है तथा विश्वामित्र के मानवीय–भाव की, कवि की मानवता क विजय होती है।

महाराणा का महत्व' प्रसाद का प्रसिद्ध खण्ड काव्य है जिसमें कवि ने अखण्ड मानवीयता की चेतना जाग्रत करते हुए, खानखाना और अकबर ने संवादों के माध्यम से मानवता को एक नई दिशा देने का सफल प्रयास किया है। खानखाना की पत्नी को राणा प्रताप का पुत्र अमर सिंह बंदी बना लेता है। जब प्रताप के सहयोगी उन्हें सलाहह देते हैं कि यह दुश्मन की स्त्री हैं उसे मार डाला जाय तो प्रताप सिंह यह करते हुए कि स्त्री ह वे अब्दुर्रहीम खानखाना की बेगम को ससम्मान मुक्त कर देते हैं। इतनी सी घटना का सुन्दर समन्वय करते हुए अकबर के मन में मानवता जाग्रत की है।

अहिंसा में मानववादी अवधारणा स्थित है, किन्तु अन्याय का प्रतिकार करते हुए, अपने कर्तव्य का पालन करते हुए मर जाना ही मानवता की श्रेणी में आता है। अपने दायित्वों का पालन करते हुए वीरोचित कार्य युद्ध में रक्षा–हित खेत हो जाना ही मानवता ही है। खण्ड काव्य के प्रारंभ में अमर सिंह अपने सैनिकों के साथ खानखाना की बेगम को बन्दी बना लेता है और उसके रक्षकों से समर्पण हेतु कहता है किन्तु भवन चमूनायक कर्तव्य की बलिवेदी में अपने प्राणों की आहुति दे देता है :–

विश्व में कर्मरत मानव, श्रेष्ठ मानव माना जाता है, कर्मयोगी मानव सदा शांति की कामना करता है।

कवि हृदय की क्यारी में मानवीयताके फूल खिलाना चाहता है। वह वसंत की प्रतीक्षा कर रहा है :–

परिश्रम करता हूँ अविराम, बनाता हूँ क्यारिओं कुंज।
सींचता दृग–जल से सानंद खिलेगा कभी मल्लिका पुंज।
न काँटों की है कुछ परवाह, सजा रखता हूँ इन्हें सयल।
कभी तो होगा इनमें फूल , सफल होगा से विश्व–अनन्त।
मूक हो मतवाली ममता, खिले फूलों से विश्व–अनन्त।
चेतना वने अधीर मिलिन्द, आह वह आवे विलम बसंत।[1]

झरना में कपि ने मानवीय प्रतीकों का भी आश्रय लिया है। कवि किरण से विश्व मानवता की किरणें बिखेर कर जन–मानस में वसंत जाग्रत करने की प्रार्थना करता है :–

कोकनद मधु धारा सी तरल,
विश्व में बहती हाहे किस ओर?
प्रकृति को देरी परमानंद,
उठाकर सुन्दर सरस हिलोर।
चपल! ठहरो कुछ लो विश्राम
चल चुकी हो पथ शून्य अनंत।
सुमन मंदिर के खोले द्वार,
जगे फिर सोया वहाँ वसँत।[2]

***

उस व्यक्ति से अधिक सम्माननीय कोई नहीं है जिसके मन में दुखियों के प्रति करूणा का भाव हो :–

दुखी कर करूणा क्षणभ हो,
प्रार्थना पहरों के बदलें।
मुझे विश्वास है कि वह सत्य
करेगा आकर तब सम्मान।1

पृथ्वी 'असीम' से मानयता का प्रकाश माँग रही है। कवि भी उसका पक्ष लेकर निवेदन करता है :–

चिरदग्ध्य दुखी यह वसुधा
आलोक मांगती तब भी
तम तुहिन बरस दो कन–कन
यह पगली सोए अब भी।
विस्मृत समाधि पर होगी
वर्षा कल्याण जलद की
सुख सोय थका हुआ–सा
चिन्ता टूट जाय विपद की।
चेतना लहर न उठेगी
जीवन समुद्र चिर होगा
सन्ध्या हो सर्ग प्रलय की
विच्छेद मिलन फिर होगा।

नर–नारी जीवन रथ के दो पहिए हैं। यदि सहयात्री कदम से कदम मिलाकर चले तो जीवन सुखमय तो हो जाता है, साथ ही पुरुष जिस लक्ष्य को प्राप्त करना चाहता है उसे पाने में आसानी होती है। फिर पाप भी पुण्य बन जाता है– ''पुण्य सृष्टि में सुन्दर पाप'–कवि कहता है :–

हे जन्म–जन्म के जीवन
साथी संस्कृत के दुख में
पावन प्रभात हो जावे जागो
आलस आलस के सुख में।
जगती का कलुष अपावन
तेरी विदग्धता पावे
फिर निरखर उठे निर्मलता
पर पाप पुण्य हो जावे।[1]

एक–दूसरे के शोषण की प्रवृत्ति ने आज मानव जाति को दो वर्गों में विभक्त कर दिया गया है। पहला वर्ग अमीर है जो विश्व में चंद लोगों का एक समूह है और दूसरा वर्ग है गरीबों का जो सब प्रकार से शोषित है। इस शोषित वर्ग के लोगों के प्रति कवि को पूर्ण सहानुभूति है। संचार का यह वर्ग ही कवि को करूणा से भर देता है और जाग उठते है उनके मानवीय भाव :–

प्रसाद के नाटकों में गीत पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है। इनमें से अनेक गीत मानवता की भावना प्रदर्शित कर अखिल विश्व की मंगल कामना के भाव लिए हैं। 'प्रायश्चित' को छोड़कर प्रसाद का ऐसा कोई नाटक नहीं है जिसमें गीत न हों। वैसे सम्पूर्ण प्रसाद–साहित्य ही अखण्ड मानवता का प्रचार करने वाला साहित्य है। फलतः उनके नाटकों के गीतों में भी मानव चेतना, प्रस्फुटित हुई है।

***

'सज्जन' में युधिष्ठित भीम से कहते हैं :–
विपति में मानव को निरेखि के,
सुखी करै चित सुमोद लेधि के।
अहैं वहीं नीच महान नार की,
तर्जो यही बात बुरे विचार की।1

स्वतंत्रता, समानता और न्याय को पाने के लिए यदि युद्ध आवश्यक है तो हो जाने चाहिए। यदि युद्ध से मानवता की संस्थापना होती हो तो युद्ध हिंसक न कहा जाएगा। भारत प्राचीन काल मे मानवता का पुजारी रहा है। भारत में चाहे महाभारत जैै युद्ध हुए है किन्तु सब मानवता की रक्षा हेतु, हुए है। स्कन्दगुप्त के रणक्षेत्र में भारत के अतीत का यशोगान हो रहा है :–

हिमालय के आँगन में उसे प्रथम किरणों का दे उपहार।
उषा ने हस अभिनन्दन किया और पहनाया हीरकहार।
उगे हम, लगे जाने विश्व लोक में फैला फिर आलोक
व्योम तम पुँज हुआ तब नष्ट अखिल संसृति हो उठी अशोक।
वहीं है शांति, वहीं है, देश, वहीं साहस है वही ज्ञान।
वहीं है शांति, वही है शक्ति, पहीं हम दिव्य आर्य संतान।
जिएं तो सदा उसी के लिए, यही अभमान रते यह हर्ष।
निछावर कर दें ने अरूणाचल–आश्रम प्यारा भारत वर्ष।[2]

''एक घूँट में प्रसाद ने अरूणाचल–आश्रम के माध्यम से उच्चश्र खल प्रेम को आँधकर निश्छल प्रेम की कल्पना की है। यहा नाटककार ने 'एक घूँट' में भी विश्व–समता की कामना कर ली है।

मधुर मिल कुंज में–
जहाँ खो गया जगत का, सारा श्रम संताप।
सुमन खिल रहे हों जहाँ सुखद सरल निष्पाप।
उसी मिलन कुंज में
तरू लतिका मिलने गले, सकते कभी न छूट।
उसी स्निग्ध छाया तले पी लो न एक घूँट।।[1]

कवि के भाव मानवता के प्रति समर्पित है। उन्होंने अपने विदेशी पात्रों को भी भारतीयता के रंग में रंग दिया है। 'चन्द्रगुप्त' में प्रसाद ने कार्नेलिया से भारत का गौरव–गान कराया है :–

अरूण यह मधुमय देश हमारा
जहाँ पहुच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा
सरस तामरस गर्भ विभा पर नाव रहा तक शिखा मनोहर
छिटवा जीवन हरियाली पर मंगल कुंटुम सारा
लघु सुरधनु से पंख पसारे शीतल मलय समीर सहारे
उड़ते खग जिस ओर मुँह किऐ समझ नीड़ निज प्यारा।

***

कबीर साई से इतना मांगते है कि कुटुम समा जऐ, मैं भूखा न रहूँ और साधु भी भूखा न जाए, किन्तु साधु तभी भूखा नहीं जाएगा जब मनुष्य को पेट भरा रहे। उसी प्रकार कोई स्वतंत्र राष्ट्र तो मानवता की मसाल तो आसानी से जला स्वतंत्रता की आवश्यकता है। तभी तो प्रसाद अलका और तक्षशिलाा के नागरिकों के साथ स्वतंत्रता का गायन कर रहे है तकि स्वतंत्र भारत मानवता के निर्माण में लगे :–

हिमाद्रि तुंग श्रृंग से प्रबंद्ध शुद्ध भारती
स्वयं प्रभा समुज्जवला स्वतंत्रता पुकारती
अमर्त्य बीर पुत्र हो दृढ़ प्रति सोच लो
पशस्त पुण्य पंथ है बढ़े चलो, बढ़े चलो।

अतः प्रसाद साहित्य में मानवीय संवेदना एवं देश प्रेम का वातावरण कभी जीवन मूल्यों में और कभी अखण्डित भाव–योजनाआं में दिखाई देता है यह संवेदना मानव की पूँजी और राष्ट्र प्रेम उसका निजी कर्तव्य। इन सबका समग्र चित्रण प्रेम पाथिक, झरना, आँसू, लहर, कामायनी, के साथ अन्य रचनाओं में दिखाई देता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ :–

1. कामायनी में काव्य, संस्क ति और दर्शन–डॉ. द्वारिका प्रसाद सक्सेना प . 45–46
2. प्रसाद जयशंकर : प्रेम–पथिक, प भठ–19
3. प्रसाद जयशंकर : करूणालय–ग्रंथावली भाग 1 प भठ–772
4. डॉ.प्रेमशंकर : हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य, प भठ–160
5. प्रसाद जयशंकर : करूणालय–ग्रंथावली 1 प भठ–772
6. प्रसाद जयशंकर : झरना–प्रसाद प भठ–17
7. प्रसाद जयशंकर : झरना, किरण, प भठ–20
8. प्रसाद जयशंकर : झरना, प भठ–66
9. प्रसाद जयशंकर : आँसू, प भठ–28
10. प्रसाद जयशंकर : आँसू, प भठ–36
11. प्रसाद जयशंकर : आँसू, प भठ–38
12. प्रसाद जयशंकर : सज्जन ग्रंथावली–भाग–2, प भठ–47–48
13. प्रसाद जयशंकर : स्कन्दगुप्त–ग्रंथावली भाग 2 प भठ–554–555
14. प्रसाद जयशंकर : एक घूंट–ग्रंथावली भाग–2, प भठ–585
15. प्रसाद जयशंकर : चन्द्रगुप्त–ग्रंथावली भाग 2, प भठ–654
16. प्रसाद जयशंकर : चन्द्रगुप्त–ग्रंथावली भाग–2, प भठ–720
17. वर्मा महादेवी : वर्मा–आधुनिक कवि की भूमिका, प भठ–120

***

अनुवाद का राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्वरूप

डॉ. शेख मोहसिन शेख रशीद
(हिंदी विभाग)
कला महाविद्यालय, बिड़किन
तहसील पैठण, जि. औरंगाबाद
मो. 9860976066
ई–मेल : dr.mohsin.rk@gmail.com

çLrkouk % अनुवाद एक विशिष्ट प्रकार का भाषाई कार्य है। अंग्रेजी शब्द 'ट्रान्सलेशन' को हिंदी में अनुवाद कहा जाता है। इसकी निर्मिती लॅटिन शब्द ट्रान्स तथा लेशन के योग से हुई है। ट्रान्स का शाब्दिक अर्थ है 'पार' और लेशन का अर्थ हुआ 'ले जाने' कि क्रिया। अर्थात ट्रान्सलेशन का अर्थ हुआ 'एक भाषा को दूसरी भाषा तक ले जाना। अनुवाद शब्द की व्युत्पत्ति 'वद' धातु से हुई है उसमें 'अनु' उपसर्ग जोड़कर 'अनुवाद' शब्द बना है। इसमें 'वद' शब्द का अर्थ है कथन और 'अनु' शब्द का अर्थ 'पीछे' याने अनुरूप। याने एक भाषा में कही गई या लिखी बात को दुसरी भाषा में समान रूप से या उसके अनुरूप फिर से कहना अनुवाद है।

अनुवाद का व्यावहारिक अर्थ 'पुन्हा कहना' या पुन्हा लिखना माना जाता है। इसमें अर्थ की पुनरावृत्ति होती है, शब्द की नहीं। 'ट्रान्सलेशन' शब्द का युत्पत्तिमूलक अर्थ 'पारवहन' एक स्थान बिंदु से दूसरे स्थान बिंदु तक ले जाना। यह स्थान बिंदु भाषिक पाठ है। इसमें भी ले जाई जाने वाले चीज अर्थ होती है, शब्द नहीं। अर्थ की पुनरावृत्ति को ही दूसरे शब्दों में और प्रकारान्तर से अर्थ का भाषांतरण अनुवाद कहा जाता है।

डॉ. भोलानाथ तिवारी अनुवाद के अर्थ में लिखते है, 'एक भाषा में व्यक्त विचारों को यथा संभव समान और सहज अभिव्यक्ति द्वारा दुसरी भाषा में व्यक्त करने का प्रयास अनुवाद है।'

डॉ. आलोककुमार रस्तोगी के अनुसार 'वस्तुतः किसी एक भाषा में कह गए कथन को दुसरी भाषा में रूपांतरित करने को अनुवाद की संज्ञा दी जाती है।' पा चात्य विचारक ए. एच. स्मिथ के अनुसार अनुवाद का तात्पर्य है, 'यथासंभव अर्थ को बनाए रखते हुए अन्य भाषा में अंतरण करना।' यहाँ स्मिथ ने अर्थ के महत्ता के साथ भाषा के रूपांतरण की कामना की है। रुसी लेखिका मेदनिकोवा के अनुसार, 'अनुवाद एक तरह से टिका–टिपण्णी करना है। मेदनिकोवा अनुवाद को समीक्षा रूप में देखती है। इन विद्वानों के अर्थ को सार रूप में समझे तो यह कहना पड़ेगा की, अनुवाद में शब्द का रूप बदल भी जाए फिर भी अर्थ में बदलाव नहीं होना चाहिए।

vuqokn dk jk"Vªh; Lo#i % भारत में अनुवाद का महत्त्व असाधारण है, क्योंकि हमें ज्ञात है की भारत में हजारों भाषाएँ बोली जाती है और सैकड़ो में इसके लिखित रूप भी मौजूद है। आजादी के बाद भाषाई विविधता तथा बहुसंख्यता के आधार पर ही प्रांतों की निर्मिति की गई। यदि एक प्रांत या प्रदेश का नागरिक अन्य राज्य के नागरिक से संपर्क बनाना चाहता है तब उसे अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इस समस्या का समाधान केवल अनुवाद के द्वारा ही हो सकता है। अन्य मुल्को में यह समस्या इतना ज्यादा उत्पन्न नहीं होती, क्योंकि जादा तर मुल्कों की स्थानिक भाषा एक ही है, लेकिन इसके विपरीत भारत में 'कौस कौस पर पानी बदलता और दस कोस पर बानी। ' जैसे महाराष्ट्र में मराठी बोली जाती है, गुजरात में गुजराती, तमिलनाडु में तमील और पंजाब में पंजाबी लेकिन इसके विपरीत इंग्लैण्ड में अंग्रेजी, चीन में चायनीज, जापान में जापानीज, अरब देशों में अरबी आदि। यदि महाराष्ट्र के व्यक्ति को तमिलनाडु के व्यक्ति से संपर्क बनाना होता है तब उसे अनुवादक मदद कर पाता है या उसे अंग्रेजी या यथा संभव हिंदी भाषा का सहारा लेना होता है।

***

 ISSN- 2321-1504 Nagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

vuqokn dk varjjk"Vªh; Lo#i % साहित्यिक अनुवाद पर टिपण्णी करे तो यह समझ में आता है की ग्रीक, लैटिन, स्पॅनिश, फ्रेंच, अंग्रेजी आदि कई भाषाओं के ग्रंथो का अन्य भाषा के विद्वानों ने अनुवाद किया। जैसे चौसर को इंग्लैण्ड के सर्व प्रथम अनुवादक माना गया। उन्होंने बोकाच्यों के कई वीरगाथाओं और पशु कथाओं धर्म–दर्शन सम्बन्धी प्रसिद्ध कृति के अनुवाद किए। यूरोपियन बर्नर्स कॅक्स्टन मार्थ चौपमन ड्राइडन विलियम, जोन्स केरी आदि कई एक अनुवादकों ने ग्रीक, लैटिन, संस्कृत, प्रकृत, अरबी तथा अन्य अनेक भाषाऒं के अनुवाद प्रस्तुत किए। शेक्सपियर के नाटकों के अनुवादों ने देश– वदेश के रंगमंच को नया रूप प्रदान किया। जो मैक्समूलर, शिलर, वेबर आदि का नाम भी इनमें शीर्ष है। रुसी साहित्यकार पुश्किन, तुर्गनेव, दोस्तोवस्की, चेकअप, गोर्की भर में फैला। अब अनुवाद का महत्त्व अत्यधिक है, क्योंकि दुनियां भर के मुल्क एक–दूजे से जुड़ गए है, हर छोटी–बड़ी घटना के परिणाम सबको भुगतना पड रहे है। इसलिए सयुंक्त राष्ट्र संघ से दुनियां भर के राजनेता जुड़ गए है। सयुंक्त राष्ट्र संघ में मौखिक या लिखित संपर्क केवल अनुवाद द्वारा ही होता है। यह अनुवाद व्यक्ति के साथ अब मशिनों द्वारा भी किया जा रहा है। मशिनी अनुवाद अब अधिक प्रभावी बन चुका है, जो कम्प्यूटर, मोबाइल तथा अन्य मशिनों द्वारा होता दिखाई दे रहा है। अब नेट पर कई ॲप अनुवाद कार्य में सहायता देते दिखाई दे रहे है अब लिखित अनुवाद के साथ मौखिक अनुवाद भी बढता नजर आ रहा है।

अनुवाद अधिक कठिन बन जाता है जब दो मुल्कों को आपस में सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक या सांस्कृतिक सम्बन्ध प्रस्थापित करना होते है। भूमंडलीकरण के दौरे में अंतर्राष्ट्रीय व्यापार हर एक व्यक्ति, संस्था, कंपनी या मुल्क के लिए खुल गया है। यदि आपस में व्यापार करना है, संपर्क बनाना तब अनुवाद आवश्यक हो जाता है और संपर्क का प्रमुख साधन भाषा है, तब अनुवाद या अनुवादक की महत्ता को कोई नकार नहीं सकता। अब हर देश का अन्य देश में राजनैतिक कार्यालय बनाया गया है, जिससे की राजनैतिक तथा व्यापारिक संबंध दृढ़ बने। इसके प्रमुख को राजदूत कहा जाता है इस राजदूत तथा इसके कार्यालय के कर्मचारियों को यह आवश्यक है की अपनी स्थानीय भाषा के साथ वे जहाँ निवास कर रहे हैं, वहाँ की भाषा भी अवगत हो। आजकल प्रमुखतः से अंग्रेजी भाषा में ही राजनैतिक कार्य किये जाने लगे है, शायद इसलिए अंग्रेजी भाषा दुनियाँ की मुख्य संपर्क भाषा बन गई है। साथ यह समझना आवश्यक है अंग्रेजी भाषा के राष्ट्र अधिकतर विकसित राष्ट्रों की श्रेणी में है। शायद उनसे अन्य विकासशील या अविकसनशील राष्ट्रों को संबंध बनाए रखने की अधिक आवश्यकता जान पडती है। प्राचीन काल से ही बाइबल जैसे धार्मिक ग्रंथ के प्रचलन से अनुवाद को प्रेरणा मिली, क्योंाकि तब धर्म, दर्शन की साहित्य अनुवाद पर अधिक बल दिया गया इसीलिए बाइबल द्वारा यूरोप के देश आपस में जुड़ गये यूरोपियन देशों में संपर्क का काम बाइबल के अनुवाद द्वारा ही हो पाया।

बौद्ध धर्म के प्रचार–प्रसार के साथ ही अनुवाद कार्य बढ़ गया, क्योंकि बौद्ध धर्म केवल भारत में ही नहीं पनपा तो वह जापान, चीन, थाइलैंड आदि देशों में विकसित हुआ।

रामायण–महाभारत जैसे हिंदू धार्मिक ग्रंथो के भी अलग–अलग रूप भारत के विभिन्न भाषाओं में अनुवादित हुए नजर आते है। जिससे हिंदू धर्म के विस्तार का सेतु मजबूत हुआ। भौगोलिक, धार्मिक तथा दूरियों एव भिन्नताओं को अपना कर समाजों को विकसित करने, सांस्कृतियों को व्यापक आधार प्रदान करने के काम में अनुवाद ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। पश्चिमी एव पूर्वी देशों में व्यापार की सफलता को हम ऐतिहासिक तर्जपर यदि देखे तो भारत का व्यापारिक संबंध पुरातन काल से ही यूरोप, अरब देशों से रहा है, इतिहास इस बात की गवाही देता है की स्थानीय औरंगाबाद जिले के प्रतिष्ठान आज पैठण का व्यापारिक संबंध यूरोप से था। यह व्यापार भाषाई विकास तथा अनुवाद की प्राथमिक स्थिति को बयां करता है।

अनुवाद कार्य न होता तो शायद एक देश अपने सीमा तक ही सिमट जाता। अनुवाद द्वारा ही संस्कृति, सभ्यता, धर्म, भाषा, व्यापार आदि का विकास हुआ, अन्यथा हर देश की संस्कृति मिट जाती, इस के प्रमाण में हम अंदमान–निकोबार द्वीप समुह के कुछ आदिवासी जातियोंको सोदाहरण ले सकते है। अंदमान–निकोबार के कई आदिवासी जातियाँ खत्म हो गई है और कई खत्म हुए जा रही है। क्यों? क्योंकि उन जाति समुह के व्यक्तियों ने अन्य आम समाज से व्यापारी, सांस्कृतिक, धार्मिक तथा भाषाई संबंध प्रस्थापित नहीं किये।

***

lkfgR; e vuokndh egÙkk % आधुनिक युग में धर्म, दर्शन, सांस्कृतिक कार्य व्यापार के साथ ही विज्ञानं, प्रौद्योगिकी, चिकित्साशास्त्र, प्रशासन, कानून, सूचना माध्यम, समाज आदि क्षेत्र विकसित हुए है। अनुवाद का प्रथम चरण यदि साहित्य को कहाँ जाए तो अतिशयोक्ति न होगी। साहित्य में अनेक प्रसिद्ध साहित्य कारों की कृतियों का समावेश हो सकता है, वह यदि कोई भाषा का लेखक हो फिर भी उसकी कृति का अन्य भाषा में अनुवाद किया गया। उसे अनुवादित कृति कहा जाता है। जैसे हिंदी के प्रसिद्ध साहित्यकार उपन्यास सम्राट प्रेमचंद की कई ऐसी साहित्य कृतियाँ हैं जिसका अनुवाद अन्य भाषाओं में आसानी से देखने को मिल जाता है। जिसमे गबन, गोदान, कर्मभूमि जैसे उपन्यास एंव बड़े घर की बेटी, ईदगाह जैसी प्रसिद्ध कहानियाँ। प्रेमचंद के साथ ऐसे कई साहित्यिकार है जिनका नाम इस पंक्ति में आ जाता है। जैसे विष्णु प्रभाकर, महादेवी वर्मा, निर्मल वर्मा, पंडित नेहरू आदि और अनंत। साथ ही हमारी स्थानीय भाषा मराठी के भी कई प्रसिद्ध लेखकों के साहित्य रचनाओं का अनुवाद हुआ है और हो रहा है जिसमें वि.वा. शिरवाडकर, वि. स. खांडेकर, पु.ल. देशपांडे, करंदीकर, महात्मा फुले, श्रीराम लागु आदि और अनंत। उर्दू साहित्यकारों में अलामा इकबाल, फरोश, प्रेमचंद, मिर्झा गालिब, फैज अहेमद फैज, मीर तकी मीर, प्रवीण शाकिर आदि और अनंत। कन्नड़ लेखक गिरीश कर्नाड जी की साहित्य कृतियाँ नागमंडल, तुगलक, हयवदन जैसी साहित्य कृतियाँ अन्य कई भाषाओं में अनुदित हुई। यहाँ समझ लेना आवश्यक है की किसी कृति का अनुवाद करते समय अनुवादक के परिवेश, भाव तथा साहित्यिक समझ आदि अनुवाद में समाविष्ट होते है। यही अनुदित कृतियाँ समयानुकूल पाठक को नयी प्रेरणा और सन्देश देती है। इस बात के आगे जाकर यदि विचार किया जाए तो यह समझ लेना आवश्यक है की वैज्ञानिक, कानूनी कृतियाँ तथा चिकित्सा शास्त्र के ग्रंथो का अनुवाद ज्यों का त्यों होना आवश्यक होता है अन्यथा अर्थ के तबदील होने की संभावना बढ़ जाती है। यदि इसमें चुक या भुल हो गई तो बड़ा हरजाना भरना पड सकता है।

vuokfnr fofHkUu lnHk % मिडिया/पत्रकारिता क्षेत्र में अनुदित साहित्य का महत्त्व अत्यधिक है। अब मीडिया ने दुनियाँ को अपनी मुट्ठी में बंद कर लिया है। दुनियाँ भर की खबरे अब कुछ क्षणों में प्रसारित की जाने लगी है। यह खबरें सम्भवता अनुवाद के बाद ही, प्रसारित की जाती है। यह अनुवाद मौखिक और लिखित दोनों भी तरह से किया जाता है। अनुवाद के साथ खबरों में सरलता, सहजता, शुद्धता और संक्षिप्तता के साथ गतिशीलता की भी आवश्यकता होती है। केंद्र तथा राज्य सरकार के कामकाज के समन्वय तथा कार्य में अनुवाद का महत्त्व अधिक है। भारत में हिंदी के साथ अंग्रेजी में केंद्र सरकार का कामकाज चलता है, इस कामकाज के उचित फल के लिए राज्यों के स्थानिय भाषा के महत्त्व को नजर अंदाज नहीं किया जा सकता, इसीलिए केंद्र सरकार को कई भाषाओं के अनुवादकों की नियुक्ति करनी होती है। यह कार्य अब मशीनी तकनीक के द्वारा भी हो रहा है। इसीलिए लोकसभा, राज्यसभा के सदस्य सदन के चलते कामकाज को समझने के लिए मशीन के द्वारा अनुवाद सुनते, नजर आते है।

lkjk'k % सार रूप में हम इतना ही समझ लें की अनुवाद कला ने अब विराट स्वरुप अपना लिया है, अनुवाद के बिना मानव विकास की कल्पना सिद्ध नहीं होगी। अनुवाद अब अपने पुरे साज–संभार के साथ राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय विकास पा रहा है, और पाएगा।

lnHk %&

1) शम्सुर फारुकी – अनुवाद एक महत्वपूर्ण कार्य – पृ क्र . 27
2) डॉ. सुरेश कुमार – अनुवाद सिद्धांत की रुपरेखा – प क्र . 20
3) डॉ. जी. गोपीनाथ – अनुवाद सिद्धांत और प्रयोग – प . क्र. 11
4) वही – 16
5) डॉ. मुरलीधर शहा/सरोदे–अनुवाद विज्ञान स्वरुप एव व्याप्ति – पृ . क्र दृ 140
6) वही – 141

***

उत्तरशती : नारी विमर्श की अवधारणा

डॉ॰ जयश्री वाडेकर
हिंदी विभाग

श्रीमती दानकुंवर महिला, महाविद्यालय, जालना (महाराष्ट्र)

iLrkouk भारतीय स्वाधीनता के पश्चात हिन्दी साहित्य में आधुनिकता आई। कालांतर में उसकी प्रतिक्रिया उत्तरशती के साहित्य में उभरने लगी। इसी बीसवीं सदी के अंतिम कालखंड या उत्तरार्ध को उत्तरशती कहा जाता है। 'उत्तरशती' यह शब्द दो अर्थों में प्रयुक्त होता है। पहला काल सापेक्ष दूसरा विचारसापेक्ष।'' किसी भी शती का उत्तरार्ध उत्तरशती कहा जाता है। उत्तरशती का कालखंड कई प्रकार के घात–प्रतिघात का कालखंड रहा है। उत्तरशती जो आपतकाल के काले अध्याय से शुरू होती है। सांप्रदायिक दंगों तथा आतंकवाद, अनेक अमानवीय क्रूरताओं आदि के पंजीं से लहू–लुहान भारतीय जनमानस का नासूर चेहरा नजर आता है। इसी चेहरे को लेकर हम इक्कीसवीं सदी की सुंदरता के सपनों का मायाजाल बुन रहे हैं तो दूसरी ओर हम विश्व की महासत्ता बनने के सपने में मशगूल है। संचार क्रांति बौद्धिक संपदा के युग में अपने अस्तित्व की जड़े तलाश रहे हैं। ''साहित्य मानव समाज की भावनात्मक स्थिति और गतिशील चेतना की अभिव्यक्ति है''1। उत्तरशती के साहित्य के केन्द्र में स्त्री विमर्श है। उत्तरशती के साहित्य में स्त्री विमर्श पूरे सप्ताह के साथ उभरा है। इसमें नारी की समस्याओं को ओर अधिकारों को लेकर संघर्ष दिखाई दे रहा है। उत्तरशती में ऐसी साहित्यिकों की पीढ़ी उभरी है। जिन्होंने इन यातनाओं को भोगा है और अन्याय अत्याचार को नए स्वर प्रदान किए हैं।

उत्तरशती में नारी विमर्श ने स्थापित मानदंडों को तोड़ा है और अपने नए मानदंड स्थापित किए हैं। उत्तरशती में नारी विमर्श की जीवंत अभिव्यक्ति हुई है। इसमें आत्मनिर्भर जीवन जीती हुई नारियों का चित्रण, समय के अनुरूप प्राचीन परंपरागत मूल्यों का परिवर्तन नहीं हुए तो उसे तोड़ने के आज की स्त्री मजबूर होते हुए स्त्री के प्रति सुधारति दृष्टिकोण घर और ऑफिस में होने वाली घुटन आदि कई पहलू पर उत्तरशती के साहित्यकारों के लेखन में स्वतंत्र अस्तित्व और अस्मिता की तलाश दिखाई देती है।

साहित्य समाज का दर्पण होता है। किसी भी युग की परिस्थितियाँ उस युग के साहित्य के स्वरूप निर्धारण में महत्वपूर्ण होती है। जीवन के साथ–साथ साहित्य में परिस्थिति की प्रतिछवि अंकित हो जाती हैं इसलिए साहित्यिक संरचना के लिए परिस्थिति एवं परिवेश आवश्यक उपादान साबित होते हैं। 'स्वर्ग के खंडहार' में जयशंकर प्रसाद ने कहा है– ''मनुष्य परिस्थितियों को अंधभक्त है।''2 उत्तरशती में समात वर्गों में बहता दिखाई देता है। जैसे उच्च वर्ग, मध्य वर्ग, निम्न वर्ग, पूंजीपति वर्ग आदि। ''टुकड़ा–टुकड़ा आदमी'' इस कहानी में माध्यम से मृदुला गर्ग ने उच्च वर्ग और पूंजीपतियों पर तीखा व्यंग किया है। मृदुला गगहानी संग्रह की 'बीच का मौसम' कहानी महानगरीय स्त्री में व्यक्ति स्वतंत्रता की छटपटाहट और स्त्री चेतना की कहानी है। उनके 'वंशज' उपन्यास में दो पीढ़ियों के वैचारिक संघर्ष के चित्रित किया है। नासिरा शर्मा के 'सबीना के चालीस चारे' इस कहानी संग्रह में गरीबी तथा अभावग्रस्तता में जीवन यापन करने वाले परिवारों की दासता कही है।

स्वतंत्र भारत के बारे में जो सपने देखे थे, वे स्वतंत्रता के एक दशक तक पहुंचते चूर हो गए। स्वाधीन भारत में राजनीतिक गठन अपने स्वार्थ सिद्धी के लिए होने लगा। राजनीति में महिलाओं का कम प्रवेश हमारी संकीर्ण विचारधारा के कारण है। ममता कालिया के 'प्रेमकहानी' उपन्यास में राजनीति के कारण लोगों का इलाज नहीं होगा, स्वाथ्र लोलुपता राजनीतियों की दिखाई देती है। मृदुला गर्ग ने 'चित कोबरा' उपन्यास के माध्यम से आर्थिक समस्या के पाठकों के सामने रखने का प्रयास किया है। महिलाओं ने आजादी की लड़ाई के दौरान राष्ट्रीय संघर्ष से अपने को जोड़ा जिससे स्वयं उनमें स्त्री–जागृति आई। जब–तक वह स्वयं विद्रोह नहीं करती तब–तक नारी की जड़ता नहीं टूटती। नारी ने अपने सोच का दायरा विस्तृत करना चाहिए।

***

आधुनिक काल में स्त्री की स्थिति को स्पष्ट करते हुए आशारानी व्होरा ने दो भागों में विभाजित किया है– सदी के प्रथम चालीस–पचास वर्षों को स्त्री–जागरण का युग कहा और स्वतंत्रता के पश्चात जो उत्तरशती युग आरंभ होता है। वह स्त्री प्रगति का युग है। भविष्य की नारी–दिशा क्या हो इसे स्पष्ट करते हुए आशारानी व्होरा ने लिखा है'' आवश्यकता है नए संदर्भो में नारीत्व के नए सिरे से परिभाषित करने की या मध्यकाल में खाई हुई प्राचीन काल की परिभाषा को वापस पाने की। नारीत्व जिसका अपना पृथक अस्तित्व है। अपना एक अहम हो, गौरव हो। अपना स्वाभिमान, अपनी उपयोगिता, अपनी सार्थकता हो, जो ना पुरूष से ही माना जाए, न पुरूष की बराबरी में अपनी क्षमताओं का अपव्यय करें। जो पुरूष का पुरूष हो। उसका मार्गदर्शन करने वाला हो। उसका सहयोग हो। घर बाहर सभी जगह, सभी क्षेत्रों में। संसार और समाज के निर्माण में दोनों की समान भागीदारी हो। भागीदारी के लिए कार्यों का स्पष्ट विभाजन और परस्पर सहयोग की स्थिति स्पष्ट हो। नारी पुरूष के संबंधों का आधार, मानवीय प्रेम सम्मान और सहकार हो। यह आदान–प्रदान स्वस्थ और कुंठा रहित हो सके। लिंग जनित पहचान के अलावा भी सी–पुरूष में सहज मैत्री–संबंध विकसित किए जा सकें। तो संसार को अनेक विकृतियों से बचाया जा सकता है।''[3]

भारतीय समाज में पचास या सो बरस पहले की नारी स्थिति में पर्याप्त अंतर आ गया है, किंतु यह भी सच है कि भारतीय समाज के वैचारिक दायरे में कोई बड़ा क्रांतिकारी परिवर्तन नहीं आ सका है। आज के दौर में नारी के उद्‌विकास को पुरूष वर्चस्ववादी समाज ने स्वीकारना भले की शुरू किया, किंतु उसकी समस्याएं कई नए रूप रंगों में दलकर सामने आ रही है। वास्तविकता नारी–वितर्श सहज एवं बौद्धिक विमर्श नहीं है, यह सामाजिक परिवर्तन का माध्यम है। यह इस बात की ओर महत्वपूर्ण संकेत करता है। कि यह दुनिया नारी के लिए शायद नहीं बनी है और अब नारी इसे फिरसे बनाना चाहती है। यह विमर्श नारी सहीत समूची मानव जाति की स्वतंत्रता का पक्षधर है। महादेवी वर्मा ने इस ओर महत्वपूर्ण संकेत किया स्त्री–विमर्श को प्रायः प्रतिशोध पीड़ित रूप में देखा जाता रहा है। जबकि वह ऐसा नहीं यह स्वयं मानवियों द्वारा अधिकार और न्याय के लिए उठाई गई स्वाभाविक आवाज है। यह आंदोलन 'पितृसत्तात्मक समाज में पल रहे स्त्री संबंधी पूर्वों ग्रहों जैसे नारी को हिनतर और भोग का साधन मात्र मानने के खिलाफ है। इसका एक और वैशिष्ट्य इस बात में है कि यह सार्वभौम भगिनीवाद (यूनिवर्सल सिस्टरहुड) के मूल मंत्र को हर वर्ग, हर नस्ल, हर देश तक पहुँचाने के लिए प्रयत्नशील है। यदि यह कहीं आक्रमक हुआ तो उसके पीछे शताब्दियों की सामाजिक जकड़न से मुक्ति की तीखी छटपटाहट कारण रही है। वहीं यह स्त्री के सामाजिक–राजनीतिक–आर्थिक अधिकारों का समर्थ घोषणा–पत्र भी बना।

नारी–विमर्श के दौर की सशक्त हस्ताक्षर प्रभा खेतान रही है। यह ऐसी लेखिका रही जिसके द्वारा सिर्फ भोगा हुआ यथार्थ लिखा गया। नारी विमर्श में उनका उल्लेख अधिक मजबूती के साथ किया जा सकता है। स्त्री परंपराओं की जकड़न और घुटन में दिखाने के साथ–साथ विद्रोह की प्रवृत्ति और समस्याओं से उबरने की व्यक्ति निष्ठ प्रयासों को भी दिखाया है। प्रभा खेतान का उपन्यास साहित्य में स्त्री के वैविध्यपूर्ण जीवन को उसके बहु आयामी चरित्र की गहरी परतों को खोलकर उसके भीतर से स्त्री की बेहतरी के लिए हर संभव प्रयास झलकता हैं इनका उपन्यास साहित्य नारी–विमर्श का मजबूत आधार स्तंभ है। नारी के व्यक्तित्व की पहचान के लिए विभिन्न आंदोलन हो रहे हैं। इस संघर्ष का एमकात्र उद्‌देश्य नारी के लिए सुखद भविष्य का निर्माण करना है। स्त्रीवादी विचारधारा पश्चिम की देन है। भारतीय स्त्रीवाद पश्चिम की देन नहीं, शुरूआत की बीज हमें इसी भूमि में देखने को मिलते हैं। मध्यकालीन संत मीराबाई स्त्री विमश्र की दृष्टि से एक क्रांतिकारी कदम ही था। डॉ॰ भारती जाधव लिखती है– ''स्त्री–मुक्ति आंदोलन पुरूष के विरोध में आंदोलन न होकर वह जुल्म जबरजस्ती की प्रवृत्ति के विरोध की लड़ाई है। सहयोग और सहजीवन, की माँग करने वाला एक आंदोलन है। समान अधिकार की माँग करने वाला और मात्र 'पुरूष' के रूप में होने के कारण उसे जो अधिकार मिल गए हैं और मात्र स्त्री का शरीर मिलने के कारण वह अधिकार न देने वाले समाज के विरोध में यह विद्राह है।''[4] नारी–विमर्श स्त्री–प्रश्नों की सशक्त अभिव्यक्ति करता है। वर्तमान समय में स्त्री के सामने अनगिनत प्रश्न खड़े हैं। उन प्रश्नों को अनेक लेखिकोओं ने साहित्य के माध्यम से अभिव्यक्त किया है।

***

 ISSN- 2321-1504 Nagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

परिवार में स्त्री की स्थिति कैसी है? समाज में प्रसाद और उनकी कार्यालय, बाजार में मीडिया में स्त्री की स्थिति कैसी है? ऐसे अनेक प्रश्नों को महिला लेखिकाओं ने उठाया है। उन प्रश्नों को समाज के समक्ष रखकर स्त्री उत्तर चाहती है।

fu"d"kZ& नारी घर और बाहर दोनों जगहों पर अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ रही है। समाज द्वारा शोषित रूप सामने आता है, तो कभी संवेदनशील नारी का साथ ये लेखिकाएँ नारी का विद्रोह रूप भी सामने लाती है। स्त्रीवादी विमर्श समानता और स्वतंत्रता का पक्षधर है। हिन्दी साहित्य में उत्तरशती के बाद स्त्रीवादी साहित्य सशक्तता के साथ उभर कर सामने आया है। साहित्य के केन्द्र में स्त्री पहले भी थी किंतु उत्तरशती के साथ उभरकर सामने आया है। साहित्य के केन्द्र स्त्री पहले भी थी किंतु उत्तरशती के साहित्य में नारी का वह रूप उभरा जो नारी–जीवन को यथार्थ रूप में प्रस्तुत करता है। आज नारी की स्थिति में आए परिवर्तन का महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि वह पुरूष के समान विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत है, चार दिवारी को छोड़कर पुरूष के कंधे मिलाकर काम कर रही है। इस तरह परिवर्तन तो हुआ परंतु इस सब के लिए उसे भीतर और बाहर टुटना पड़ा है। घर–परिवार, पति, बच्चे की जिम्मेदारी निभाते हुए नौकरी करती नारी को तिल–तिलकर सबको संतुष्ट करना ही उसकी नियति है। उत्तरशती का हिन्दी साहित्य नारी लेखन की गहनता एवं विस्तृतता का साक्षी हैं यह यथार्थ है कि नारी परिवार एवं समात के प्रति प्रतिबद्ध रही है परंतु उसकी प्रतिबद्धता उपेक्षित रही है। अपने अस्मिता की तलाश में विद्रोही स्त्री उभरकर आई है। उत्तरशती की स्त्रियाँ आर्थिक दृष्टि से स्वावलंबी होने से उनके विचारों में व्यापकता आई है। स्त्री के प्रति सुधारित दृषिटकोण समाज में निर्माण हो रहे हैं, लेकिन उसमें व्यापकता आना आवश्यक है।

lanHkZ&

1. संपादक – नगेंद्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ॰क्र॰ 44

2. प्रसाद और उनकी सुक्तिया, स॰श्री॰ शरण, पृ॰क्र॰ 47

3. भारतीय नारीःदशा, दिशा–आशारणी व्होरा– पृ॰क्र॰ 08

4. स्त्रीवाद ओर महिला उपन्यासकार, डॉ॰ वैशाली देशपांडे, पृ॰क्र॰ 274

***

ISSN- 2321-1504 Nagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा पुणे की 'राष्ट्रवाणी' का हिंदी को योगदान

प्रा.डॉ. प्रकाश गायकवाड
हिंदी विभाग

वसंतदादा पाटील महाविद्यालय पाटोदा, जि बीड.

महाराष्ट्र में राष्ट्रभाषा प्रचार–एवं प्रसार का कार्य अन्य प्रांतों की तरह पूज्य महात्मा गांधीजी की प्रेरणा से ही प्रारम्भ हुआ। महाराष्ट्र में राष्ट्रभाषा प्रचार के कार्य को 'महाराष्ट्र में राष्ट्रभाषा सभा – पुणे' की स्थापना से अभूतपूर्व सफलता प्राप्त हुई है। महाराष्ट्र में राष्ट्रभाषा प्रचार के कार्य में पत्र–पत्रिकाओं के योगदान में विशेश उल्लेखनीय योगदान महाराष्ट्र में राष्ट्रभाषा सभा पुणे की मासिक पत्रिका 'राष्ट्रवाणी' का रहा है। 'राश्ट्रवाणी' महाराष्ट्र में राष्ट्रभाषा सभा पुणे की मुख्य पत्रिका थी। इस मासिक पत्रिका का प्रकाशन बहुत संघर्शों के बाद जुलाई 1947 से प्रारंभ हुआ। इस संघर्श की स्प टता 'रा ट्रवाणी' के जुलाई 1947 के प्रथम अंक के संपादकीय निवेदन में ही मिलता है।

प्रकाशन करते हुए आज हमे विशेश आनंद और जिम्मेदारी का अनुभव कर रहें है। इच्छा रहने पर भी 20 महिनों तक कानूनी पाबंदियों की वजह से हम बेबस थे। राजनैतिक आजादी भले ही दूर ही, अखबारी दुनिया को एक लंबे अर्से के बाद पूरी आजादी मिली और 'राष्ट्रवाणी' का प्रकाशन संभव हुआ। अक्तूबर 1945 में महाराश्ट्र की प्रांतीय संस्थाने राट्रभाषा के बारे में जिन सिद्धांतों का प्रचार करना तय किया उसे पूरा करने के लिए 'राष्ट्रवाणी' जैसे साधन को पाकर हमें खुशी हो रही हैं।''(1)

अनेक संघर्षों से गुजर कर अपने आकार और कलेवर में समयानुकूल परिवर्तन कर 'राष्ट्रवाणी' जीवित रही और रंजत महोत्सव मना चूकी। हिंदी पत्रकारिता के इतिहास में यह घटना गौरवपूर्ण शब्दों में अंकित करने योग्य है। 'राष्ट्रवाणी' के संपादक श्री. गो.प.नेनेजी ने इस संदर्भ में जुलाई–अगस्त–सितम्बर 1972 के रजत जयंती विशेशांक में यह घटना गौरवपूर्ण शब्दों में इस प्रकार अंकित की है ''हमें यह लिखते हुए प्रसन्नता हो रही है कि, 'राष्ट्रवाणी' मासिक पत्रिका के पचीस वर्ष पूरे हो चूके हैं। यह एक तरह से लंबी अवधि न होने पर भी बहुत छोटी भी नहीं है। तब से लेकर आज तक कितना बदलाव हुआ है, इसकी कल्पना भाव की जा सकती है।''(2)

'राष्ट्रवाणी' राष्ट्र की वाणी हिंदी का उद्‌बोधन–'राष्ट्रवाणी' के इतिहास का विचार करते ही महाराष्ट्र के हिंदी प्रचार का सारा इतिहास आँखों के सामने घूम जाता है क्यों कि 'राष्ट्रवाणी' महाराष्ट्र के हिंदी प्रचार की वाणी रही, हिंदी प्रचार का दूसरा नाम रही। यही एक मात्र पत्रिका थी जिसने महाराष्ट्र में हिंदी का नारा बुलंद किया। इसने राष्ट्रीय प्रवृत्ति के और सभा की भाषा – नीति के विरूद्ध युद्ध छेडनेवालों के हर पैंतरे और तेवर का पर्दाफाश किया और असंख्य कार्यकर्ताओं को धैर्य प्रदान करते हुए राष्ट्रभाषा के प्रचार का मार्ग प्रशस्त किया। अपने आरंभिक युग में 'राश्ट्रवाणी' राश्ट्र की वाणी हिंदी का उद्‌बोधन थी। 'राष्ट्रवाणी' उन असंख्य लेखकों और पाठकों की अपनी पत्रिका थी जो हिंदी सीख रहे थे, सीखकर हिंदी में लिखना चाह रहे थे। मगर हिंदी की तत्कालीन पत्र–पत्रिकाओं में जिनके लिए हाशिए पर भी स्थान नहीं था। 'राष्ट्रवाणी' ऐसे लेखकों के लिए वरदान थी, उनके हिंदी अध्ययन का पुरस्कार थी। 'राष्ट्रवाणी' के तीसरे वर्श के प्रथम अंक (जुलाई 1949) के संपादकीय में संपादक श्री. गो.प. नेनेजी ने लिखी है ''राष्ट्रवाणी का उद्देश यह रहा है कि नवोदित लेखकों की अपनी प्रतिभा जागृत रखने का मौका मिले और उनके साहित्यिक विकास का मार्ग सुलभ हो। इस में थोड़ी बहुत कामयाबी जरूर मिली हैं। मगर हम उस भविष्य की ओर आँख लगाए हुए है, जब प्रतिभावान लेखक और कवि अपनी ठोस चीज देने में समर्थ होंगे।''(3)

'राष्ट्रवाणी' का विस्तार–'राष्ट्रवाणी' साहित्यिक पत्रिका भी थी और सभा का 'गंजट' भी थी जिसमें परिशिष्ट के रूप में सभा के विभिन्न विभागों, प्रचार, परीक्षा, शिक्षण, पाठ्यक्रम आदि की गतिविधियों, परिपत्रकों इत्यादि को समाविष्ट किया जाता था।

***

ISSN- 2321-1504 Nagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

फरवरी 1953 से हमारी बात शीर्शक की, एक नई प्रचार पत्रिका प्रकाशित कर 'राष्ट्रवाणी' को विशुद्ध साहित्यिक पत्रिका बनाया गया। इस प्रकार से सन् 1953 के मार्च से 'राश्ट्रवाणी' नया रूप, रंग, नया आकार लेकर अवतीर्ण हुई। वह सभा की मात्र मूख – पत्रिका न रहकर एक अखिल भारतीयस्तर की साहित्यिक पत्रिका बनी।

'राष्ट्रवाणी' की निष्पक्षता – सन् 1955 से 'राष्ट्रवाणी' की गणना हिंदी की प्रमुख साहित्यिक पत्रों में होती थी। क्योंकि दिसंबर 55 से लेकर ही अधिकतर अंकों में कमलेश्वर, मार्कण्डेय, रामोहन त्रिपाठी, रामवतार चेतन, जगदीश गुप्त जैसी हस्तियों की रचनाओं से 'राष्ट्रवाणी' गौरवाविन्त होने लगी थी। 'राष्ट्रवाणी' ने साहित्य विशयक वाद–विवादों में पड़कर भी कभी पक्षधरता स्वीकार नहीं की, उल्टे सभी विचारों, धारणाओं, मान्यताओं और साहित्यिकदलों के लेखकों का विश्वास प्राप्त किया।

'राष्ट्रवाणी' महाराष्ट्र की वाणी – 'राष्ट्रवाणी' ने हिंदी को नई पीढ़ी के अनेक लेखक, कवि, समीक्षक, शोधकर्ता दिए हैं। अनेक हिंदी साहित्यकारों ने 'राष्ट्रवाणी' का पथ प्रशस्त किया, है पर महाराष्ट्र से प्रकाशित होने के कारण मराठी के अग्रज व मूर्धन्य साहित्यिकारों के विषेश योगदान ने 'राष्ट्रवाणी' को सही मायने में महाराष्ट्र की वाणी बनाया। हिदी के प्रति उनका यह लगाव राष्ट्रीय एकता का प्रतीक हैं।

'राष्ट्रवाणी' की अनुवाद परंपरा – किसी भी भाषा तथा साहित्य के विकास में मौलिक रचनाओं का जो योगदान है अनूदित रचनाओं का योगदान उनसे किसी प्रकार भी कम नहीं कहा जा सकता। राष्ट्रवाणी के संपादक गो.प. नेनेजी ने मराठी की उत्कृष्ट रचनाओं को राष्ट्रभाशा में लाकर उनका परिचय भारतीय जनता को कराने का उत्तर –दारियत्व सफलतापूर्वक निभाया है। मराठी के जनोपयोगी लोकप्रिय साहित्य को गैर मराठी भाषियों तक पहुँचाने का संकल्प महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा ने राष्ट्रवाणी द्वारा सिद्ध किया। इस अनुवदि प्रकल्प का श्रीगणेश मराठी के अग्रज साहित्यकार गोपाल नीलकंठ दांडेकर के उपन्यास किसी एक की भ्रमण गाथा से हुआ इसकी समाप्ति पर राष्ट्रवाणी में दूसरा अनूदित उपन्यास मराठी से हिंदी में प्रकाशित हुआ श्री. ना. पेंडसेज का चट्टान का बेटा। मराठी के प्रसिद्ध नाटककार विजय तेंदूलकर के तीन अनूदित एकांकी तथा अन्य अनेक लेखकों की विभिन्न रचनाएँ कहानियाँ तथा लेख आदि समय–समय पर अनुवाद रूप में प्रकाशित होते रहे। राष्ट्रवाणी की अनुवाद परंपरा को सफल बनाने में अनुवादक साहित्यकारों का विशेश योगदान तो रहा ही परंतु राष्ट्रवाणी के प्रबंध संपादक वसंत देव तथा शैलेंद्र सिंह के प्रयास अधिक उल्लेखनीय रहे है। राष्ट्रवाणी में आलोचनात्मक लेखों की मौलिकता सदैव बनी रही। उसमें साहित्य जगत की विविधताओं एवं विविध समस्याओं को उद्घाटित करनेवाले लेख छपते रहे। ये लेख न केवल हिंदी साहित्य की समस्याओं का परिचय देते थे अपितु मराठी, संस्कृत, उर्दू व दक्षिण भारत के साहित्यकारों के बारे में पाठकों को विषेश जानकारी भी प्रदान करते थे। 'राष्ट्रवाणी' के माध्यम से हिंदी साहित्य भी इससे समृद्ध और गौरवान्वित हुआ। 'राष्ट्रवाणी' में विभिन्न साहित्यकारों तथा साहित्यिक विधाओं से संबंधित लेख छपे और खूब पढ़े गए।

छात्र तथा अध्यापकों की 'राष्ट्रवाणी' – 'राष्ट्रवाणी' के अंकों में लेखों के माध्यम से महाराश्ट्र राष्ट्रभाषा सभा द्वारा ली जानेवाली हिंदी परिक्षाओं के लिए उपयोगी साम्रगी भी छपती थी। छात्र इससे लाभान्वित होते थे। हिंदी भाषा व्याकरण संबंधी विभिन्न महत्वपूर्ण जानकारीयाँ छात्रों तथा अध्यापकों के लिए 'राष्ट्रवाणी' में प्रकाशित कर महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा ने राष्ट्रभाषा की समस्या से संबंधित लेखों का प्रकाशन तथा हिंदी को राष्ट्रभाशा के पद पर प्रतिश्ठित कराने का प्रकाशन तथा हिंदी को राष्ट्रभाषा के पद पर प्रतिष्ठित कराने का प्रकाशन तथा हिंदी को राष्ट्रभाषा के पद पर प्रतिष्ठित कराने के प्रयास सभा ने 'राष्ट्रवाणी' के द्वारा ही किए। 'राष्ट्रवाणी का यह योगदान अतुलनीय है। राष्ट्रवाणी में प्रकाशित ललित लेखन मनोहारी ढंग से बौद्धिकता का विकास करनेवाला ही रहा। नवयुग के नए गहन प्रश्नों का समाधान तथा उचित मार्गदर्शन का भी प्रयास राष्ट्रवाणी ने अपनी रचनाओंद्वारा किया। छात्रों के मार्गदर्शन में ये विशेश सहायक रहा है।

***

ISSN- 2321-1504 Nagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

'राष्ट्रवाणी' के स्थायी स्तंभ – 'राष्ट्रवाणी' के स्थायी स्तंभ भी प्रशांसनीय थे। पत्रिकाओं में प्रकाशित स्थायी स्तंभ ही वास्तव जानकारी पाठकों को देते हैं। देखा लेखा, इधर–उधर, जलते प्रश्न संपादकीय, इन्हें भी आजमाइये, हमारा साहित्य, समीक्षाये सभी स्थायी स्तंभ 'राष्ट्रवाणी' की आत्मा रहे थे। इनके द्वारा संपूर्ण भारत में घटित घटनाओं, समस्याओं, सम्मेलनों, सभाओं आदि का विवरण प्रस्तुत किया जाता था। समय–समय पर विभिन्न विषयों से संबंधित, एवं प्रकाशित किताबों की जानकारी तथा उनकी समीक्षा पाठकों के लिए प्रकाशित की जाती थी। मराठी, हिंदी एवं अन्य भाषाओं की किताबों की भी समीक्षा छाप कर 'राष्ट्रवाणी' ने आंतरभारती का स्वप्न साकार कर राष्ट्रीय एकता का परिचय दिया। राष्ट्रभाशा प्रचार, सम्मेलन, बालोपयोगी साहित्य, विज्ञान विशयक किताबें, महान पुरूशों की शताब्दी, शोकसभाएँ ये मद्रास में हो या कर्नाटक में, अहमदबाद में हो,

या इलाहाबाद में, गुजरात में हो या पंजाब में सभी घटनाओं का राश्ट्रीय ब्योरा 'राष्ट्रवाणी' अपने आप तक पहुँचाकर राष्ट्र की नींव को प्रणाम करती रही। 'राष्ट्रवाणी' महाराष्ट्र में ही नहीं अपितु भारत में हिंदी साहित्य जगत की एक प्रेरक और नियामक शक्ति रही।

जुलाई 1947 से मई 1952 महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा की रजत जयंती तक 'राष्ट्रवाणी' के लगभग 276 अंक प्रकाशित हुए। 25 वर्षों की दीर्घ एवं सफल यात्रा तय करने के बाद 'राष्ट्रवाणी' का प्रकाशन दुर्भाग्यवश रूप गया। सौभाग्य से नवंबर 1988 से महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा के स्वर्ण जयंती महोत्सव स्मारिका अंक के रूप में 'राष्ट्रवाणी' का प्रकाशन त्रैमासिक रूप में पुनःप्रारंभ हुआ। फरवरी 1999 महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा का हीरक जयंती महोत्सव संपन्न हुआ। अब तक 'राष्ट्रवाणी' त्रैमासिक का प्रकाशन जारी है। अब वह द्वैमासिक होने जा रहा है। महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा एवं 'राष्ट्रवाणी' की इस साहित्यिक महत्ता को देखते हुए 'राष्ट्रवाणी' के समस्त अंकों का समीक्षात्मक विवेचन अपने आप में एक महत्वपूर्ण कार्य है। राष्ट्रवाणी की मुख्य पहचान उसके विशेशांक हैं। 'राष्ट्रवाणी' के विशेशांको के द्वारा सभा ने भारतीय साहित्य की आंतरिक शक्ति को प्रकट किया है। इस प्रकाश से महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा की राष्ट्रवाणी पत्रिका का हिंदी के प्रचार–प्रसार में योगदान रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूचि :–

1. राष्ट्रवाणी, संपादकीय, जुलाई 1947, वर्श 1, अंक 1, प श्ठ.1.
2. राष्ट्रवाणी, जुलाई – अगस्त – सितंबर, 1972, वर्श 26, अंक 1/2/3, प श्ठ.2.
3. राष्ट्रवाणी, जुलाई 1949, वर्श 3, अंक 1, संपादकीय, प .1.
4. डॉ. रामविलास शर्मा, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, पृ.98.
5. हिंदी भाषा प्रचार एवं प्रसार में योगदन – शुभी पब्लिकेशन, कानपूर – 208021.

***

ISSN- 2321-1504 Nagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

हिन्दी उपन्यासों में चित्रित सामाजिक चेतना

डॉ. सुजाता जे. रगडे
डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा
विश्वविद्यालय औरंगाबाद–431002

प्रस्तावना :–

व्यक्ति समाज का एक महत्वपूर्ण अंग है, लेकिन जिस समाज में वह रहता है, वहाँ पर कई प्रकार की विसंगतियाँ, रुढियाँ और परंपराएँ प्रचलित रही हैं। समाज में व्याप्त हर गतिविधियों का चित्रण साहित्य में किया जाता है। हिन्दी उपन्यास साहित्य प्रवशत्तिगत परिवर्तन को पार कर वर्तमान में एक महत्वपूर्ण उपलब्धि के सोपान पर आया है। उपन्यास साहित्य अत्यंत समृद्ध रहा है। हर साहित्य अपने युग और समाज को प्रतिबिंबित करता हुआ दिखाई देता है। सामाजिक जीवन प्रगतिशील बनकर समाज व्यवस्था का विकास करता है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारतीय समाज में आमूलाग्र परिवर्तन आया है। यह परिवर्तन सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक ,धार्मिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों के माध्यम से दिखाई देता है। भारतीय समाज की सामाजिक संरचना जटिल होती है। समाज से ही व्यक्ति की सभी आवश्यकताएं पूरी होती है। जैसा समाज वैसा साहित्य का निर्माण होता है। साहित्य में समाज का प्रतिबिंब दिखाई देता है। समाज जैसा बनेगा उस प्रकार का साहित्य निर्माण होगा। हिन्दी उपन्यासों में सामाजिक चेतना का ज्वलन्त एवं मार्मिक चित्रण मिलता है। उपन्यास वह माध्यम है जिसके द्वारा उपन्यासकार अपनी रचनाओं में अपने अनुभव अपने आस–पास की परिस्थिति का मार्मिक चित्रण करता है। व्यक्ति के जीवन में आने वाले बदलाव से समाज में बदलाव आया है और जिससे समाज के बदलाव ने साहित्य, संस्कृति, कला तथा जीवन में विविध आयामों को प्रभावित किया है। वर्तमान में सामाजिक चेतना तथा मानवीय मूल्यों को बचाकर रखने का कार्य साहित्य का है इसीलिए साहित्य को पूरे समाज का पूरा प्रतिबिंब बनने का कार्य करना होगा।

सामाजिक चेतना :–

विभिन्न उपन्यासकारों के उपन्यासों में सामाजिक चेतना का मार्मिक चित्रण मिलता है।

1. शिव प्रसाद सिंह :–

शिव प्रसाद सिंह ने अपने उपन्यासों के माध्यम से समाज के विभिन्न जातियों के जटिल समाज का वर्णन किया है। उनके उपन्यास भारतीय समाज के मूल संकट की पहचान कर उनसे मुक्ति का रास्ता ढूंढ निकालते है। उनके उपन्यासों में व्यक्त सामाजिक चेतना का सबसे बड़ा मूल्य भविष्य के सार्थक संकेत मिलने में है।

शिव प्रसाद सिंह की 'गली आगे मुड़ती है' उपन्यास में सामाजिक परिवर्तन धीमी गति से होता हुआ दिखाई देता है क्योंकि इसका समाज जो है वह सांस्कृतिक–धार्मिक नगरी काशी का परम्परावादी समाज है जो सामाजिक भाक्तियों का दबाव ज्यादा रखता है। काशी के समाज में कमोवेश मात्रा में आक्रोश फूटता हुआ दिखाई देता है। वह मानते हैं कि युवा शक्ति वह शक्ति है जिसके हाथ में नयी पीढ़ी का भविष्य दिखाई देता है। वह हर चीज को नयी दृष्टी से देखते हैं। यह नयी पीढ़ी समाज में बदलाव लाने पर जोर देती हुई दिखाई देती है। उपन्यास का रामकिरत दास भ्रष्ट पुजारी है जिसने मंदिर के मठ को गुण्डों का अड्डा बना दिया है। मन्दिर में पूजा पाठ तो उसके लिए पैसों के अलावा कुछ भी नहीं है – '' कोठी पर बुरी नजर लगायी तो मैं उंगली पेसकर आँख निकाल दूँगा हाँ, मैं गुण्डों के लिए गुण्डा हूँ ,बहुत जुल्मी गुण्डा बबुआजी ,बनारस में रहते तीस–बतीस साल हो रहे हैं ,हमने यहाँ खाली मंदिर की सफाई और ठाकुर जी की आरती ही नहीं की है। कुछ और भी किया है।

***

नन्दू पण्डित ।''1 हम देख सकते है कि समाज के किसी भी तबके का व्यक्ति क्यों ना हो उसमें समूचा धार्मिक वातावरण केवल पाखण्ड बनकर रह जाता है।

वैसे तो काशी धार्मिकता का ,पवित्रता का ,प्रतिक है लेकिन 'नीला चाँद सिर्फ एक मिनट' उपन्यास में काशी जैसे अराजकता ,संघर्शों की काशी बन गई है। यहाँ पर काशी की समस्या केवल काशी की नहीं है बल्कि पूरे भारतवर्ष की समस्या बनकर हमारे सामने आती है। काशी केवल धार्मिक नगरी रही है। यहाँ सत्ता के लिए सामाजिक संघर्ष हो रहा है। इस सामाजिक संघर्ष ने समाज के निम्न वर्ग के लोगों की हिस्सेदारी को निश्चित करने की कोशिश की है। इसी लिए शिवप्रसाद सिंह ने ऐसा समय चुना है कि ''जो काशी की जनता को ,समाज को पूरी तरह भयानक उथल–पुथल से ऐसा मथ दे कि सबसे निचले वर्ग के सर्व बहिष्कश्त–चांडालों और डोमों से लेकर महिमाशाली ब्राह्मन, राजन्य, महाजन और सेठों को नग्न खड़ा कर दें। ''2 इस प्रकार से वर्तमान में सामाजिक चेतना का बदलता स्वरुप हमारे सामने आता हुआ दिखाई देता है।

2. रामधारी सिंह दिवाकर :–

रामधारी सिंह दिवाकर के उपन्यासों में सामाजिक चेतना का चित्रण मिलता है। वे मानते है कि सामाजिक चेतना मानव जीवन को अधिक मात्रा में प्रभावित करती है। राजनीति, धर्म, अर्थ सभी का केन्द्र समाज ही होता है। समाज के बिना मानव जीवन की कल्पना करना भी व्यर्थ होगा। इसी समाज को सत्ता स्थापित करने के लिए अनेक जातियों एवं जन्म आधारित व्यवसाय में बाँटा जाता है। इस संदर्भ में डॉ. लोहिया जी लिखते हैं कि, ''जन्मजात या धार्मिक वर्गीकरण, वर्णों का आवश्यक गुण नहीं है। वर्ग और वर्ण में घनिष्ठता होती है। अस्थिर वर्ण से वर्ग का बदलाव हुआ है। यही परिवर्तन लगभग सभी आन्तरिक घटनाओं की जड़ में रहता है। यह करीब–करीब हमेशा ही न्याय और बराबर के मार्गों से प्रेरित होता है।''3

रामधारी सिंह दिवाकर जी का 'अकाल सन्ध्या' उपन्यास सामाजिक चेतना को लेकर लिखा गया उपन्यास है। इसमें तत्कालीन समाज में व्याप्त सत्तात्मक प्रवशत्ति का चित्रण किया गया है। आज समाज में ऊँच–नीच की परिस्थितियों में बदलाव होता हुआ नजर आ रहा है। भारतीय स्वतंत्रता के समय जो जातियाँ चरम पर थी उनमें गिरावट आती हुई दिखाई देती है। निम्न जातियों के कुछ व्यक्ति उच्च स्थानों पर पहुँच रहे हैं। वे लोग भी वही कार्य करते हुए दिखाई देते हैं जिसके विरोध में सत्ता प्राप्त हो रही है। वर्तमान में समाज में अर्न्तजातिय विवाह को बढ़ावा मिलने लगा है जिसके कारण जातीय बन्धन धीरे–धीरे टूटता हुआ दिखाई देता है। इस बात को दिवाकर जी कजरी नाम के पात्र के माध्यम से स्पष्ट करते हैं कि, ''यह जात–पात गाँव देहात में ही इतना बसा है। जाकर देखें कोई दिल्ली में कौन किस जात में शादी करता है, इससे किसी को लेना–देना नहीं ,निमन्त्रण दो, सब आएंगे। कोई पूछेगा नहीं कि कौन किस जात का है। ई सब बखेड़ा गाँव देहात में है।''4 इससे हमें पता चलता है कि अर्न्तजातिय विवाह हो या ऊँच–नीच हो सामाजिक बदलाव गाँवों में भिन्न होता है तथा शहरों में भिन्न होता है। आज शहरों में यह दरार कुछ कम होती हुई दिखाई देती है। इससे हम कह सकते है कि दिवाकर जी ने अपने उपन्यासों के माध्यम से भारतीय समाज की जाति व्यवस्था को उजागर करने की कोशिश की है।

दिवाकर जी ने एक उच्च सरकारी पद पर आसीन व्यक्ति के घर की कहानी से सामाजिक और पारिवारिक परिस्थिति को हमारे सामने रखने की कोशिश की है। यह एक दलित अफसर के घर की स्थिति का वर्णन है। दलित अफसर के पिता सोचते है कि, ''इस पंडितवा को बहू अन्दर बुलाती है खाने के लिए अन्दर। शीशे की बड़ी–सी एक गोल टेबुल है। टेबुल के चारों तरफ पाँच–छः कुर्सियाँ लगी हुई है। एक कुर्सी पर बहू बैठेगी, दूसरी कुर्सी पर लेलहा पंडित बैठेगा। खाना परोसेगा बमबम झा और झूठे बर्तन उठाकर ले जाएगा भोला। ''5 इस प्रकार से आज भी हम सोचते है कि जिस प्रकार उच्च जाति के लोगों ने हमें सताया है उस तरह हम उन्हें क्यों नहीं सता सकते, हम चाहकर भी किसी भी व्यक्ति के साथ बुरा बर्ताव नहीं कर सकते यह हमारी सामाजिक चेतना ही है और क्या?

***

3. चित्रा मुद्गलः :–

चित्रा मुद्गल के उपन्यासों में सामाजिक चेतना का मार्मिक चित्रण मिलता है। उन्होंने अनछुए विषय को छुने की कोशिश की है। उन्होंने सामाजिक चेतना के माध्यम से वर्तमान समाज में बुजुर्गों के प्रति भी आत्मीयता, मान–सन्मान, प्यार और पसंद –नापसंद आदि का मार्मिक ढंग से चित्रण किया है। चित्रा जी ने अपने उपन्यास में बुर्जुगों की स्थिति को समाज के समक्ष जटिल समस्या और संस्कृति की बिघडती तस्वीर के माध्यम से प्रस्तुत करने की कोशिश की है।

वर्तमान में बुजुर्गों की सबसे भयावह स्थिति का वर्णन किया गया है। बुजुर्गों की स्थिति अपने ही परिवार में एक कुत्ते से भी बत्तर होती हुई नजर आती है। चित्रा जी ने इस स्थिति को समाज के सामने लाकर इस पर हमें विचार करने पर विवश कर दिया है।

वर्तमान समय में बुजुर्गों की स्थिति अत्यंत दयनीय हो रही है कमोवेशमात्रा में हमें यही स्थिति समाज में हर युग में दिखाई देती है। बूढ़े माँ–बाप की घर में कोई इज्जत नहीं रहती है वह लगभग घरवालों के लिए बोझ बनकर रह जाते हैं। इसका मार्मिक चित्रण चित्रा जी ने अपने उपन्यास 'गिलिगडु' के माध्यम से स्पष्ट करने की कोशिश की है।

वर्तमान में बुजुर्गों की समस्याओं पर साहित्य लिखा जा रहा है, तो कल समाज का ध्यान इन बुजुर्गों की ओर जाएगा तो उनकी समस्याओं के समाधान के लिए समाज भी अपनी ओर से तत्पर होता हुआ दिखाई देगा। इस स्थिति को चित्रा जी ने कर्नल स्वामी के माध्यम से स्पष्ट करने की कोशिश की है। जसवंत बाबू कर्नल स्वामी के घर से लौटते ही यह तय करते हैं कि, ''वह कानपूर लौट जाएगें और अपनी वसीयत बदलकर कानपूर की सम्पति सुनगुनिया को दे देगें। तब वह कानपूर फोन करते ही कहते हैं कि, '' हाँ, दोपहर का खाना सुनगुनिया उनके लिए बनाकर रखे। शताब्दी में वे केवल नाश्ता–भर करेंगे उन्हें क्या पसंद है–उसे पता है।''6

इस प्रकार से हिन्दी उपन्यासों में सामाजिक चेतना का चित्रण मिलता है। हिन्दी उपन्यासकारों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से समाज में व्याप्त समस्याओं को अपने उपन्यासों का विषय बनाया है जिसके कारण समाज में घटित घटनाओं को समाज के सामने लाने की कोशिश की जा सके।

संदर्भ :–

1. शिवप्रसाद सिंह–गली आगे मुड़ती है–पृ.क्र. 53

2. शिवप्रसाद सिंह–नीला चाँद : सिर्फ एक मिनट –पृ.क्र. 53

3. रविशंकर सिंह–डॉ. राम मनोहर लोहिया का सामाजिक चिन्तन–लेख–श्री प्रभु प्रतिभा शोध पत्रिका ,भाग–13 अक्टूबर–दिसम्बर 2011,पृ.75

4. रामधारी सिंह दिवाकर– 'अकाल सन्ध्या', भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली 2006, पृ.क्र. 67

5. वही– पृ.क्र. 144

6. चित्रा मुद्गल–गिलिगडु– पृ.क्र. . 144

***

ISSN- 2321-1504 Nagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

कहानी.....

नोटः दूध का दाम कहानी पिछले अंक में अधूरी प्रकाशित हुई थी। इसलिए इस अंक में कहानी को फिर से प्रकाशित किया जा रहा है।

दूध का दाम

रूपनारायण सोनकर

जब आदमी जानबूझ कर धधकती आग में कूदता है तब धधकती आग उसको जलाकर राख कर देती है। जवान स्त्री एक धधकती आग के सामने होती है। यदि पुरुष में उस आग को बुझाने लायक पानी न हो तो उसमें कदापि नहीं कूदना चाहिए।

सी–जार्ज जोजेफ एक अधेड़ उम्र के आदमी थे और पुलिस फोर्स में एक जवान थे! मिसेज सी–जार्ज जोजेफ एक कम उम्र की खूबसूरत महिला थी। उसका गठीला बदन, हिरनी जैसी आँखें, और गोलाकर नुकीले बड़े–बड़े उरोज अनायास ही अप्सराओं की याद दिला रहे थे। छः साल शादी को हो चुके थे, कोई संतान उनके घर में किलकारी करने नहीं आयी थी। उस स़्त्री का जीवन कितना कश्टमय होता है जो अपने पति की बाहो में समा नहीं पाती है। पति–पत्नी के सहवास का लुफ्त उठा नहीं पाती है। उनका घर स्त्रियों के लिए जेल नजर आता है। एक ऐसी कैद जिसकी सजा बिना किसी गुनाह के मिलती है। आदमी और औरत केवल एक बार पृथ्वी पर जन्म लेता है। कुछ लोग एक–एक क्षण का आनन्द उठाते हैं। कुछ लोग दुःख भरी जिन्दगी का एक–एक कतरा जीते हैं। ऐसी ही स्त्रियां तनाव की शिकार हो जाती है। डिप्रेशन में चली जाती हैं। मिसेज सी–जार्ज जोजेफ एक पढ़ी लिखी युवती थी। इस तनाव से निकलने का कोई न कोई रास्ता निकाल रही थी। यदि घर में पति का प्यार न मिले लेकिन बच्चे का प्यार मिल जाए तो जिन्दगी कट जाती है। लेकिन दोनों का प्यार न मिलने पर औरत की जिंदगी तबाह हो जाती है। तेज तूफान में नाव समुद्र के अन्दर डगमगाती रहती है। कभी भी डूब सकती है यदि नाव खेने वाला होशियार है तो नाव समुद्र को पार कर जाती है किन्तु छेदयुक्त नाव कभी समुद्र पार नही कर पाती।

सी–जार्ज जोजेफ अपने निवास स्थान बागेश्वर से दूर मेरठ शहर में नौकरी करते थे। तीन चार माह बाद घर आना होता था। पति का इतने दिनों बाद घर आना कोई मायने नहीं रखता था। मिसेज जोजेफ की प्यास बुझ नहीं पाती थी। अकाल पड़ने से जैसे खेत फट जाते है। मिसेज जोजेफ की जिन्दगी सूखकर फट गई थी। अकाल के बाद जब पानी की बौछारें पृथ्वी पर पड़ती हैं तो आग निकलती है। पृथ्वी गीली नहीं हो पाती है जब तक लगातार मूसलाधार वर्षा न हो।

मिसेज जोजेफ के तनाव को देखकर डाक्टरों ने कहा कि आप लोग एक छोटे लड़के को गोद ले लें। हिन्दू परिवारों की वनिस्बत ईसाई परिवारों में भेदभाव, छुआछूत नहीं होता है। कोई भी हिन्दू अपने बच्चे को गोद नहीं देना चाहता था। गोद देने वाली संस्थाओं से सम्पर्क किया। असहाय बच्चों की सहायतार्थ समिति, मेरठ, उ0प्र0 ने एक डेढ़ साल के बच्चे को मि0 एण्ड मिसेज जोजेफ को नियमानुसार गोद दे दिया। गोदनामा रजिस्ट्रार ऑफ हिन्दू विवाह, मेरठ के कार्यालय में रजिस्टर्ड कराया गया। जैसे बसंत ऋतु में चारों तरफ हरियाली ही हरियाली दिखायी पड़ती है, पेड़ों में फूल खिल जाते हैं, उसी तरह मिसेज जोजेफ की जिन्दगी खिल गई थी। उनका तनाव दूर हो गया था। उन्होंने महसूस किया कि इससे बढ़कर इस धरती पर और कोई दूसरा सुख हो ही नहीं सकता है, जब आमों के पेड़ में फल पक जाते हैं तो आम अपने आप धरती पर चूने लगते हैं। डेढ़ साल के बच्चे को जब उन्होने अपनी छाती से लगाया, तब मिसेज जोजेफ के स्तनों से दूध अपने आप उतर आया।

दूसरी ओर डॉ0 जैन सेक्सोलॉजिस्ट से सी–जार्ज जोजेफ अपनी नपुंसकता का इलाज करावाना शुरू कर दिया। डेढ़ साल लगातार इलाज के बाद उसकी कुछ कमजोरी दूर हो गयी। उसने मिसेज जोजेफ की गोद में एक अपना पुत्र व पुत्री डाल दिया। तीन फूलों के खिलने से पूरा घर महक गया। मिसेज जोजेफ पहले से ज्यादा जवान व सुन्दर दिखने लगी। गोद लिए बच्चे का नाम लारेंस जार्ज, निजी बच्चे का नाम पीटर जार्ज और लड़की का नाम मारिया जार्ज रखा गया।

लारेंस जार्ज व मारिया जार्ज ने बी0ए0 तक शिक्षा प्राप्त की। पीटर जार्ज केवल हाईस्कूल तक ही पढ़ पाया।

***

पीटर जार्ज शहर के आवारा लड़कों की संगत में बिगड़ गया। धूम्रपान का आदी हो गया, शराब की लत लग गई, ड्रग्स भी लेने लगा, कोई कमाई नहीं करता था। केवल घूमने–फिरने, ताश खेलने में अपना वक्त काटता था। लारेंस जार्ज व मारिया जार्ज को एक अंग्रेजी स्कूल में टीचर की नौकरी मिल गई। उन्हीं दोनों के पैसों से घर चलता था। पीटर छीन–छपटकर दोनों की अधिक से अधिक तनख्वाह ले लेता था। मिसेज जार्ज पीटर को उसकी हरकतों के लिए बुरा भला कहती थी और कोई न कोई काम करने के लिए दबाव डालती थी।

कहते हैं कि जिस आदमी को हराम की रोटी मिल रही हो तो उसको कमाई की रोटी में स्वाद ही नहीं आता है।

मिसेज जार्ज ने कहा–"पीटर तुम दिन–रात आवारागर्दी करते हो कुछ काम किया करो। तुम्हारी जिन्दगी कैसे कटेगी?

"मैं तुम्हारा अपना बेटा हूँ। मेरे हक को छीनकर आपने लारेंस को गोद ले लिया उसकी तनख्वाह से कुछ तो भरपाई करने दो।"

माँ बिगड़ कर बोली– "भविष्य में दोबारा ऐसी बात मत करना बेटा, पीटर लारेंस तुम्हारा बड़ा भाई है।"

मारिया बिगड़ कर बोली– "पीटर तुम्हें शर्म नहीं आती है, ऐसी बातें कहते हुए।"

"शर्म तो तुम लोगों को आनी चाहिए। एक डोम को मेरा भाई बना दिया है।"

माँ बिगड़ कर बोली– "यदि जबान से एक शब्द भी और निकाला तो मैं तुम्हारी जबान काट लूंगी।"

"माम हकीकत यही है।"

मारिया ने कहा– "क्या डोम इसांन नहीं होते हैं?"

"होते हैं, नीच जाति के होते हैं। दूसरों के घर की सफाई करने वाले होते हैं। दूसरों का मल–मूत्र साफ करने वाले होते हैं।"

लारेंस बोला– "पीटर मैं केवल इतना जानता हूँ कि मैं तुम्हारा बड़ा भाई हूँ। यदि मैं डोम हूँ तब भी मैं एक मानव हूँ आज कल डोम, मिनिस्टर, आई.ए.एस., बड़े–बड़े उद्योगपति, कलाकार, वैज्ञानिक और प्रोफेसर हैं। जहां तक इस जाति द्वारा सफाई करने की बात है, तो हिन्दुस्तान की सभी जातियां सफाई का कार्य कर रही हैं। "लारेंस यह कह कर सिसक रहा था। जैसे बरसात में घर से छप्पर से बड़ी–बड़ी बूँदे टपकती रहती हैं उसी तरह उसकी आंखों से आँसू टपक रहे थें वह ऐसा महसूस कर रहा था कि जैसे बादल फट गया हो और उसके तेज पानी में वह बहता चला जा रहा हो, बड़े–बड़े पत्थरों से टकराते हुए। पीटर ने मारिया से छः हजार रूपये मांगे और कहा– "मुझे तुरन्त रूपये दे दो" मारिया ने गुस्सा होते हुए कहा– "शराब पीने के लिए और अययासी के लिए रूपये नहीं मिलेंगे।"

लारेंस को जोर से गुस्सा आया लेकिन वह गुस्सा चुपचाप जहर का घूँट समझकर पी गया। जब लकड़ी में दीमक लग जाती है तब लकड़ी चूर–चूर हो जाती है। पीटर एक दीमक की तरह था जो घर के दरवाजों, खिड़कियों के अन्दर विराजमान था।

लारेंस अलमारी से छः हजार रूपये निकाल लाया और बोला– "लो पीटर रूपये।"

"तू ये रूपये देकर मुझ पर कोई एहसान नहीं कर रहा है।"

माँ और बहिन ने लारेंस के हाथों से रूपये छीन लिए, माँ ने कहा– पीटर इसी तरह रूपये ले कर बिगड़ गया है। यह बिल्कुल एक परजीवी की तरह है। इस जौंक को पैसे देकर अपना खून नहीं चुसवाना है, इसको जो करना है, कर ले।"

"जौंक तो तुमने खुद घर में पाल रखा है।"

मारिय ने कहा– "अपनी जुबान पर लगाम दो पीटर "

पीटर बिल्कुल एक मानव बम की तरह था, जो घर को स्वाहा करके स्वयं स्वाहा होना चाहता था। पीटर वहां से नाराज होकर आवारा लड़कों के पास चला गया, आवारा लड़के राम, कृष्ण और इन्द्र निठल्ले बैठे–बैठे जुआ खेला करते थे। इनकी महफिलें दिन–राज चला करती थी। इन तीनों सवर्ण लड़कों की आर्थिक स्थिति बहुत अच्छी थी।

***

ISSN- 2321-1504 Nagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

पीटर तीनों लड़कों के साथ ताश के पत्तों से जुआ खेलने के लिए बैठ गया, पीटर के दिमाग में खलबली मची हुई थी। उसके हाथ में आये पैसे निकल गये थे। उसकी जेब में जो रूपये थे वह हारता चला जा रहा था, पीटर अपने सारे रूपये हार गया था किन्तु वह अपने हारे रूपये किसी तरह पाना चाहता था।

राम बोला– "आपको रूपये प्राप्त हो सकते हैं। "

"कैसे"?

कृष्ण बोला– "आपको थोड़ा कष्ट उठाना होगा।"

तालाब में जलकुम्भी, कमल को ढक लेती है, जलकुम्भी का कोई भी उपयोग नहीं होता जबकि कमल फल देता है और फूल भी। उसी तरह समाज में निठल्ले, बदचलन और आवारा मानव होते हैं, जो बिल्कुल जलकुम्भी की तरह होते है, जो खिल रहे कमल जैसे इंसानों को ढक लेते हैं। उनके मन–मस्तिक में गंदगी सदैव तैरा करती है। राम, कृष्ण और इन्द्र खेल खेलना चाहते थे, जिसमें समस्त मानव जाति उस गन्दगी में डूब जाए।

इन्द्र बोला– "आपको पाँच हजार रूपये दिये जायेंगे, यदि आप अपने हाथ की हथेली में थूंके।"

सुनकर पीटर हिचकिचाया –"यारों मैं अपनी हथेली में नहीं थूक सकता।

राम ने कहा– "हम तीनों के सिवा यहां और कोई नहीं है।"

कृष्ण ने साहस बंधाया– "यह भी एक तरह का खेल है।"

"नहीं यार, यह खेल गन्दा है।"

इन्द्र ने उसका और हौंसला बढ़ाया– "किसी भी नौकरी या बिजनेस में इतनी देर का इतना अधिक धन नहीं मिलता है। गन्दगी हाथों में नहीं दिल में होती है। हाथ तो सदैव साफ होते हैं। जब गन्दगी दिल में भरी होती है तो वह दिल से निकलकर हाथों पर आ जाती है।"

पीटर पाँच हजार रूपये के लालच में अपने दायें हाथ की हथेली पर थूंक लिया और उसको हाथ की हथेली पर भरे खड़ा रहा। राम, कृष्ण, इन्द्र तीनों मुस्करा रहे थे।

कुछ मिनट मौन रहने के बाद इन्द्र ने पीटर से कहा– "यदि तुम एक और खेल खेलों तो हम तुम्हें दस हजार रूपये और दे सकते हैं।"

पीटर उत्सुकतावश बोला– "ऐसा कौन सा खेल है जिसमें मुझे दस हजार रूपये और मिल सकते है।"

कृष्ण ने इन्द्र से कहा– पीटर को दस हजार रूपये वाला खेल समझायें।"

यदि तुम अपना बैक खोलकर दिखा दो तो तुम्हें इसी समय दस हजार रूपये दे देंगे।"

पीटर सकुचाया और बोला– "यार, यह खेल मैं नहीं खेल सकता।"

तीनों ने एक साथ कहा– "यहां हम तीनों के सिवा और कोई नहीं देख रहा है, पीटर पर तो खेल है। तुम तो पहले ही अपनी हथेली पर थूंक कर पॉच हजार रूपये प्राप्त कर चुके हो। तो अपना बैक आसमान की तरफ खोलकर दस हजार रूपये और प्राप्त कर लो। आज तुम पन्द्रह हजार का जुआ जीत जाओगे।"

***

समाज में पीटर जैसे कुछ आदमी होतें हैं जो रूपयों के हथौड़ों से अपने को पीट ही डालते हैं उनका मान, सम्मान और अस्मिता लहूलुहान हो जाती है। ऐसे लोग समाज में एक मजाक बन जाते है। ऐसे लोग पहले रूपयों में से अपनी भूख मिटाते हैं फिर अपने आपको स्वयं खाने लगते हैं, समाज को ऐसे लोगों से सतर्क रहना चाहिए नहीं तो ऐसे लोग समाज को भी खाने लगते हैं।

पीटर आसमान की तरफ अपना बैक खोलकर खड़ा हो गया। यह सब देखकर पेड़ों से पत्तियो ने हिलना बंद कर दिया था पशु–पक्षी मूक बन गये थे। बेशर्म चारों थे। पीटर सबसे ज्यादा बेशर्म था। तीनों के दिमागों में फिर खुराफाती विचार उमड़ने लगे।

तीनों ने बारी–बारी से कहा– "हम लोग तुम्हें पन्द्रह हजार रूपये और दे सकते हैं, यदि तुम अपने बैक में हम तीनों से थुकवा लो।"

पीटर में शर्म बची नहीं थी। उसे घर की मान–मर्यादा का कोई ध्यान नहीं था। उसका ध्यान केवल पैसे पर केन्द्रित हो जाता है तब उसके शरीर के सारे अच्छाई के केन्द्र बन्द हो जाते हैं। उसके शरीर के अन्य केन्द्रों से पीब निकलने लगती है। जो समाज में बदबू और रोग फैलाने लगती है। तीनों ने उसके बैक में बारी–बारी से थूका।

पीटर की हरकत पूरे जिले में फैल गयी जैसे जंगल में आग फैलती है, जो भी सुनता उस पर थू–थू करता था। जब लारेंस को इस बात का पता चला तो वह तिलमिला गया। उसने राम, क भण और इन्द्र से बदला लेने की सोची। लारेंस को डेढ़ लाख रूपये का फंड मिला था, वह तीनों के पास गया और कहा– " मैं आप लोगों को डेढ़ लाख रूपये दूंगा, यदि आप तीनों हमारी एक शर्त मान लोगे।

तीनों ने कहा– "हाँ हम तीनों डेढ़ लाख रूपये के पीछे कोई भी शर्त आपकी मानने को तैयार हैं।"

"मैं आप लोगों के मुंह में थूकूंगा, प्रत्येक को पचास–पचास हजार रूपये दूंगा।

तीनों सोच में पड़ गये। तीनों बहुत बड़े अय्यास थे। राम, कृष्ण, और इन्द्र ने कुमकुम, प्रिया और मेनका नाम की तीन कॉल–गर्ल्स को रात के लिए बुलाया था।

तीनों बोले– "हमें रूपये अभी चाहिए"

गड्डियाँ देखकर तीनों में लालच आ गया। राम, कृष्ण और इन्द्र ने अपने–अपने मुँह खोल दिये। लारेंस ने तीनों के मुँह में बारी–बारी से थूका और डेढ़ लाख रूपये देकर चला गया। उसकी चाल तेज हो गयी थी। जैसे विजयी सेना अपने किले में तेजी से पहुँचती है ताकि विजयश्री की सूचना सभी को दे सके।

उधर सी–जार्ज जोजेफ को नपुंसकता बढ़ गयी थी। अब दवाईयों का उस पर कोई असर नहीं हो रहा था। वह पूर्णतः नपुंसक हो गया था। अब उसकी खिन्नता बहुत बढ़ गयी थी। नपुसंकता सभी बीमारियों से ज्यादा भयंकर होती है। लोग कैंसर और एड्स से इतना भयभीत नहीं होते हैं और न ही आत्मग्लानि महसूस करते हैं जितना अधिक नपुंसकता से महसूस करते हैं। इन जानलेवा बीमारियों को ठीक करने में इतना अधिक पैसा खर्च नहीं करते हैं, जिनता अधिक पैसा नपुंसकता दूर करने में लगाते हैं।

सी–जार्ज जोजेफ अब अपनी पत्नी और बच्चों से रूखा व्यवहार करने लगा था। अब वह अपनी पत्नी पर शक करने लगा,अतः पत्नी पर निगाह रखता था। पत्नी, बेटी और लारेंस तीनों व्यवहारिक इंसान थे, तीनों सी0जार्ज जोजेफ की कमियां जानते थे। मिसेज जोजेफ अपनी बेटी की जिन्दगी बर्बाद नहीं करना चाहती थी।

***

उसने अपनी बेटी मारिया से कहा– "बेटी, शादी के बाद बहुत पछताना पड़ता है, यदि लड़का शारीरिक रूप से कमजोर हुआ।"

बिना शरमाए बेटी बोली– "मम्मी, आप इसके लिए जो भी उपाय करेंगी मैं आपका साथ दूंगी।"

लारेंस ने हामी भरी– "आप ठोंक बजाकर मारिया के लिए लड़का चुनें। "

एक खूबसूरत लड़का सिकन्दर जो पशु चिकित्सक था। मारिया से शादी करना चाहता था। लेकिन मारिया, उसकी माँ और लारेंस भयभीत थे, कहीं वह नपुसंक न हो। माँ ने लारेंस से कहा– "इसके परीक्षण का कोई उपाय बताओं। डॉक्टर से इसके पुरूषत्व का प्रमाण पत्र लिया जाये,लड़का अपनी डाक्टरी जाँच करवाए।"

"आजकल पैसे के लोभ में डॉक्टर भी बिक कर मनचाहा प्रमाण पत्र दे देते हैं।"

मारिया ने कहा–"मैं आप पर छोड़ती हूँ, जिस तरह इसकी प्रैक्टिकली जाँच करेंगी मै आपका साथ दूंगी।"

जब मारिया और लारेंस कालेज पढ़ाने गये तब सिकन्दर को अपने घर एकान्त वाले कमरे में बुलाया और कहा– "मेरे पति नपुसंक हैं। ऐसा कोई भी पैमाना नहीं है कि वह वर की ऊपर जाँच हो सके।"

"आप क्या चाहती है? आप जिस तरह से सन्तुष्ट हो मैं वह परीक्षण करवाने को तैयार हूँ।"

"समाज में अभी तक इस तरह के परीक्षण शुरू नहीं हुए है।"

"मैं तैयार हूँ।"

"यदि आप इस परीक्षण में सफल हो गये तो मैं अपनी बेटी की शादी आपसे कर दूंगी। "

शायद धरती पर होने वाला यह पहला परीक्षण था। इसमें समाज की सड़ी–गली मान्यताएं ध्वस्त हो रही थी। वास्तव में यह एक अटपटा परीक्षण लगता था। लेकिन यह सबसे बड़ा परीक्षण था। इसमें सृष्टि के निर्माणकर्ता शामिल थे। भविष्य की नींव इस परीक्षण पर टिक गयी है।

"मैं यह परीक्षण देने को तैयार हूँ। "

कमरे के अन्दर जोर का बम फट गया था। वास्तव में वह शक्ति शाली बम था। वैटनैरी डॉक्टर परीक्षण में पास हो गया था। कुछ दिनों बाद मारिया और सिकन्दर की शादी हो गयी और अपने पति के यहाँ चली गयी, उसका पति नौकरी करता था। वहीं मारिया ने भी एक अंग्रेजी स्कूल में नौकरी कर ली।

शादी के पहले लड़की के घर वाले मिसेज जोजेफ के यहाँ लड़की के वर के साथ परीक्षण के लिए आने लगे। मिसेज जोजेफ औरत के भविष्य के लिए यह परीक्षण करने लगी। नपुंसक पति सी जार्ज जोजेफ को अपनी पत्नी पर शंका होने लगी। नपुंसक आदमी जितना अन्दर से कमजोर होता है वह बाहर से बहुत मजबूत नजर आता है। समाज के सामने वह अपनी बाहर की मजबूती से अपने अन्दर की कमजोरी को दूर करना चाहता था। वह बहाना बनाकर मेरठ नौकरी करने चला गया लेकिन एक हफ़्ते बाद रात्रि में भेश बदलकर अपने दरवाजे की कुण्डी खटखटाई, अन्दर से आवाज आई– "अभी तेरा नम्बर नहीं है।"

पति की शंका विश्वास में बदल गई। उसने दरवाजा तोड़ दिया। वहां पर मिसेज जोजेफ एक पुरूष का परीक्षण कर रही थी।

उसने कहा– "हरामजादी रंडी बन गयी है।"

वह कड़क आवाज में बोली– "तू क्या जाने रन्डी क्या होती है? " जोर की आवाज सुनकर लारेंस आ गया। उसने अपने पिता से कहा– "आप बेकार में परेशान हो रहे हैं, आप जो सोच रहे हैं ऐसा कुछ भी नहीं है।

पीटर आसमान की तरफ अपना बैक खोलकर खड़ा हो गया। यह सब देखकर पेड़ों से पत्तियो ने हिलना बंद कर दिया था पशु–पक्षी मूक बन गये थे। बेशर्म चारों थे। पीटर सबसे ज्यादा बेशर्म था। तीनों के दिमागों में फिर खुराफाती विचार उमड़ने लगे।

तीनों ने बारी–बारी से कहा– "हम लोग तुम्हें पन्द्रह हजार रूपये और दे सकते हैं, यदि तुम अपने बैक में हम तीनों से थुकवा लो।"

***

पीटर में शर्म बची नहीं थी। उसे घर की मान–मर्यादा का कोई ध्यान नहीं था। उसका ध्यान केवल पैसे पर केन्द्रित हो जाता है तब उसके शरीर के सारे अच्छाई के केन्द्र बन्द हो जाते हैं। उसके शरीर के अन्य केन्द्रों से पीब निकलने लगती है। जो समाज में बदबू और रोग फैलाने लगती है। तीनों ने उसके बैक में बारी–बारी से थूका।

पीटर की हरकत पूरे जिले में फैल गयी जैसे जंगल में आग फैलती है, जो भी सुनता उस पर थू–थू करता था। जब लारेंस को इस बात का पता चला तो वह तिलमिला गया। उसने राम, क भण और इन्द्र से बदला लेने की सोची।

लारेंस को डेढ़ लाख रूपये का फंड मिला था, वह तीनों के पास गया और कहा– " मैं आप लोगों को डेढ़ लाख रूपये दूंगा, यदि आप तीनों हमारी एक शर्त मान लोगे।

तीनों ने कहा– "हाँ हम तीनों डेढ़ लाख रूपये के पीछे कोई भी शर्त आपकी मानने को तैयार हैं।"

" मैं आप लोगों के मुंह में थूकूंगा, प्रत्येक को पचास–पचास हजार रूपये दूंगा।

तीनों सोच में पड़ गये। तीनों बहुत बड़े अय्यास थे। राम, कृष्ण, और इन्द्र ने कुमकुम, प्रिया और मेनका नाम की तीन कॉल–गर्ल्स को रात के लिए बुलाया था।

तीनों बोले– "हमें रूपये अभी चाहिए"

गड्डियाँ देखकर तीनों में लालच आ गया। राम, कृष्ण और इन्द्र ने अपने–अपने मुँह खोल दिये। लारेंस ने तीनों के मुँह में बारी–बारी से थूका और डेढ़ लाख रूपये देकर चला गया। उसकी चाल तेज हो गयी थी। जैसे विजयी सेना अपने किले में तेजी से पहुँचती है ताकि विजयश्री की सूचना सभी को दे सके।

उधर सी–जार्ज जोजेफ को नपुंसकता बढ़ गयी थी। अब दवाईयों का उस पर कोई असर नहीं हो रहा था। वह पूर्णतः नपुंसक हो गया था। अब उसकी खिन्नता बहुत बढ़ गयी थी। नपुसंकता सभी बीमारियों से ज्यादा भयंकर होती है। लोग कैंसर और एड्स से इतना भयभीत नहीं होते हैं और न ही आत्मग्लानि महसूस करते हैं।

जितना अधिक नपुंसकता से महसूस करते हैं। इन जानलेवा बीमारियों को ठीक करने में इतना अधिक पैसा खर्च नहीं करते हैं, जिनता अधिक पैसा नपुंसकता दूर करने में लगाते हैं।

सी–जार्ज जोजेफ अब अपनी पत्नी और बच्चों से रूखा व्यवहार करने लगा था। अब वह अपनी पत्नी पर शक करने लगा,अतः पत्नी पर निगाह रखता था। पत्नी, बेटी और लारेंस तीनों व्यवहारिक इंसान थे, तीनों सी0जार्ज जोजेफ की कमियां जानते थे। मिसेज जोजेफ अपनी बेटी की जिन्दगी बर्बाद नहीं करना चाहती थी।

उसने अपनी बेटी मारिया से कहा– "बेटी, शादी के बाद बहुत पछताना पड़ता है, यदि लड़का शारीरिक रूप से कमजोर हुआ।"

बिना शरमाए बेटी बोली– "मम्मी, आप इसके लिए जो भी उपाय करेंगी मैं आपका साथ दूंगी।"

लारेंस ने हामी भरी– "आप ठोंक बजाकर मारिया के लिए लड़का चुनें।"

एक खूबसूरत लड़का सिकन्दर जो पशु चिकित्सक था। मारिया से शादी करना चाहता था। लेकिन मारिया, उसकी मॉ और लारेंस भयभीत थे, कहीं वह नपुसंक न हो। मॉ ने लारेंस से कहा– "इसके परीक्षण का कोई उपाय बताओं। डॉक्टर से इसके पुरू ात्व का प्रमाण पत्र लिया जाये,लड़का अपनी डाक्टरी जॉच करवाए।"

"आजकल पैसे के लोभ में डॉक्टर भी बिक कर मनचाहा प्रमाण पत्र दे देते हैं।"

मारिया ने कहा–"मैं आप पर छोड़ती हूँ, जिस तरह इसकी प्रैक्टिकली जॉच करेंगी मै आपका साथ दूंगी।"

जब मारिया और लारेंस कालेज पढ़ाने गये तब सिकन्दर को अपने घर एकान्त वाले कमरे में बुलाया और कहा– "मेरे पति नपुसंक हैं। ऐसा कोई भी पैमाना नहीं है कि वह वर की ऊपर जांच हो सके।"

***

"आप क्या चाहती है? आप जिस तरह से सन्तुष्ट हो मैं वह परीक्षण करवाने को तैयार हूँ।"

"समाज में अभी तक इस तरह के परीक्षण शुरू नहीं हुए है।"

"मैं तैयार हूँ।"

"यदि आप इस परीक्षण में सफल हो गये तो मैं अपनी बेटी की शादी आपसे कर दूंगी। "

शायद धरती पर होने वाला यह पहला परीक्षण था। इसमें समाज की सड़ी–गली मान्यताएं ध्वस्त हो रही थी। वास्तव में यह एक अटपटा परीक्षण लगता था। लेकिन यह सबसे बड़ा परीक्षण था। इसमें सृष्टि के निर्माणकर्ता शामिल थे। भविष्य की नींव इस परीक्षण पर टिक गयी है।

"मैं यह परीक्षण देने को तैयार हूँ। "

कमरे के अन्दर जोर का बम फट गया था। वास्तव में वह शक्तिशाली बम था। वैटनैरी डॉक्टर परीक्षण में पास हो गया था। कुछ दिनों बाद मारिया और सिकन्दर की शादी हो गयी और अपने पति के यहां चली गयी, उसका पति नौकरी करता था। वहीं मारिया ने भी एक अंग्रेजी स्कूल में नौकरी कर ली।

शादी के पहले लड़की के घर वाले मिसेज जोजेफ के यहां लड़की के वर के साथ परीक्षण के लिए आने लगे। मिसेज जोजेफ औरत के भविष्य के लिए यह परीक्षण करने लगी। नपुंसक पति सी जार्ज जोजेफ को अपनी पत्नी पर शंका होने लगी। नपुंसक आदमी जितना अन्दर से कमजोर होता है वह बाहर से बहुत मजबूत नजर आता है। समाज के सामने वह अपनी बाहर की मजबूती से अपने अन्दर की कमजोरी को दूर करना चाहता था। वह बहाना बनाकर मेरठ नौकरी करने चला गया लेकिन एक हफ़्ते बाद रात्रि में भेश बदलकर अपने दरवाजे की कुण्डी खटखटाई, अन्दर से आवाज आई– "अभी तेरा नम्बर नहीं है।" पति की शंका विश्वास में बदल गई। उसने दरवाजा तोड़ दिया। वहां पर मिसेज जोजेफ एक पुरूष का परीक्षण कर रही थी।

उसने कहा– "हरामजादी रंडी बन गयी है।"

वह कड़क आवाज में बोली– "तू क्या जाने रन्डी क्या होती है? " जोर की आवाज सुनकर लारेंस आ गया। उसने अपने पिता से कहा– "आप बेकार में परेशान हो रहे हैं, आप जो सोच रहे हैं ऐसा कुछ भी नहीं है।

"जो मैं देख रहा हूँ क्या वह सब झूठ है।"

"जी हाँ"

"तू तो साले भड़वा बन गया है, साले डोम, अपनी औकात पर आ गया, अपनी मॉ को वेश्या बना दिया।"

"आप तो भड़वा बनने लायक भी नहीं है।"

"साले मैं तुम दोनों को खत्म कर दूंगा,पहले मैं इस रंडी को समाप्त करूँगा।" कहकर उसने रिवाल्वर अपनी पत्नी पर तान दिया।

लारेंस बोला– "डैडी, मां को शूट मत करना।"

"साले मां की दलाली करता है। इस घर को वेश्यालय बना दिया।"

यह वेश्यालय नहीं बल्कि औषधालय है।"

ज्यों ही सी जार्ज जोजेफ रिवाल्वर पर ट्रिगर दबाने वाला था लारेंस मॉ के उपर गिर पड़ा । गोली लारेंस के बॉए हाथ को चीरती हुई निकल गयी, खून की धारा बहने लगी। उसने दोबारा मिसेज जोजेफ को शूट करना चाहा,लारेंस ने एकाएक उठकर रिवाल्वर पकड़ ली। मिसेज जोजेफ भी मि0 जोजोफ से लिपट गई छीना झपटी में गोली चल गई और मि0 जोजेफ के सीने को पार कर गई।

***

माँ का दूध बेटे को पालता है, बेटा अत्याचारियों के लिए विशैला सर्प बन जाता है और उसके पेट के अन्दर गया माँ का दूध जहर बन कर माँ की इज्जत पर हाथ डालने वालों को मार डालता है। माँ के दूध में यही ताकत होती है। इस ताकत के सामने तलवार, बन्दूक और एटम बम की ताकत धाराशायी हो जाती है।

पुत्र और माँ को गिरफ्तार कर लिया गया, एक जज सी. एम. खरोड़ा थे जो मिसेज जोजेफ की सुन्दरता पर मुग्ध हो गये। उन्होंने दोनों को जमानत दे दी और दोनो को अपने बंगले में बागवानी के लिए रख लिया। आशिक मिजाज जज अकेले में मिसेज जोजेफ से मिलता था,वह एक रात उसके साथ सोना चाहता था। उसने नियम कानूनों को ताक पर रख दिया था,उसे शहर में हो रही खुसर–फुसर से कोई मतलब नहीं था। किसी भी तरह वह उसको पा लेना चाहता था। जब अदालत न्याय के पलड़े में सेक्स रख लेती है तो न्याय का पलड़ा हल्का हो जाता है।

उसने मिसेज जोजेफ से कहा– "मैं तुम्हारे साथ एक रात्रि बिताना चाहता हूँ, वैसे तुम बहुत लोगों के साथ सो चुकी हो।"

"जज साहब, आप गलत समझ रहे हैं, मैं वेश्या नहीं हूँ।"

मैं आप दोनों को बाइज्जत छोड़ दूंगा। "

"ऐसा कभी नहीं हो सकता है चाहे मुझे फॉसी लग जाए।"

चोर और कामी आदमी की मनोदशा एक जैसी होती है, चोर चोरी करते समय सभी से छिपता है, कामी आदमी भी यही करता है। चोर चोरी करते समय जब पकड़ा जाता है तब वह समाज के सामने बेइज्जत हो जाता है। कामी आदमी पकड़े जाने पर चोर से ज्यादा बेइज्जत होता है। लेकिन जब कोई ओहदेदार इस कुकशत्य में पकड़ा जाता है तब वह अपना ओहदा गंवाने के साथ–साथ अपना सब कुछ गंवा देता है।

दूसरे दिन रात्रि में जज ने मिसेज जोजेफ का दरवाजा खटखटाया। दरवाजा खुलते ही जज उससे लपटा–झपटी करने लगा। उसने मिसेज जोजेफ के सारे कपड़े फाड़ दिये, मिसेज जोजेफ चिल्लाने लगी, उसी समय लारेंस आ गया और फावड़े का डंडा मारकर जज को घायल कर दिया।

जज ने अपने सुरक्षा कर्मी को आवाज लागई– "दीवान सिंह।"

"जी हजूर " जज के सर मे खून बहता देखकर वह दंग रह गया, वह बोला– " क्या बात है सर? "

"लारेंस ने मुझ पर हमला किया है,ये दोनों मेरे घर में चोरी कर रहे थे।

मुझे मारकर घर के रूपये और जेवरात लिए जा रहे थे।"

"जज साहब झूठ बोल रहे हैं, इसने मेरी माँ के साथ बालात्कार करने की कोशिश की है।"

जज गुर्राया – "क्या मैं इस वेश्या के साथ बलात्कार करूंगा? "

अपनी इज्जत को दांव पर लगता देख उसने दीवान सिंह को आदेश दिया– "लारेंस को शूट कर दो। "

"यस सर " और उसने एक गोली लारेंस की सीने पर दाग दी, मिसेस जोजेफ तड़प रहे बेटे के ऊपर गिर पड़ी, मिसेज जोजेफ की ऑखों और स्तनों से खून टपक–टपक कर लारेंस के मुँह में गिर रहा था।

***

ISSN- 2321-1504 Nagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

दलित साहित्यः चेतना के विविध आयाम

डॉ0 एन0पी0 प्रजापति,
एशोसिएट,
भारतीय उच्च अध्ययन संस्थान,
राष्ट्रपति निवास, शिमला 171005.

दलित साहित्य की चेतना के पीछे दीर्घ कालीन संघर्श है, जिसमें गौतम बुद्धसे लेकर नाथ, सिद्ध साहित्य के साथ–साथ संत साहित्य एवं मराठी साहित्य का योगदान है। इस चेतना के केन्द्र में मानवतावादी दृष्टिकोण है, जिसमें पाखंड, आडम्बर, अंधविश्वास, स्वर्ग, नर्क, भाग्य, भगवान, पाप–पुन्य, का कोई स्थान नही है। सभ्यता के सार्थक वैज्ञानिक अवशेषों का संरक्षण के साथ दलित–चेतना तर्क की कशौटी पर आगे बढती है। दलित–चेतना स्वतंत्र अभिव्यक्ति का मार्ग प्रशस्त करती है। कृतिम बंधनों, अतार्किक वर्जनाओं और अमानवीय व्यवस्था, मान्यताओं को नकारती है। समाज की रूढ़ हो गयी, जड़ हो गयी, अंधविश्वास की भाक्तियों से समाज को मुक्त कराकर समकालीन एवं प्रगतिशील, समता, स्वतंत्रता, बंधुत्व से ओत–प्रोत मानवतावादी समाज का निर्माण करती है, जिसमें अतीत बोध, संस्कृति बोध, परम्परा बोध, ऐतिहासिक अनुभव, विमर्श विषलेशण के आधार पर स्वीकार्य–अस्वीकार किये जाते हैं। वास्तव मे दलित समाज न अभागा है न अधूरा है, बात सिर्फ इतनी सी है कि अभी जागा नही है।

–000–

लो/यह कविता/इसे उढ़ा दो/कंबल की तरह अपने बच्चे को,और उसकी गर्मी में उसे/देखने दो सपने कल की सुबह के/उगने वाले सूरज का बछड़ा/उसी को पकड़ना है।।[1]

दलित कौन है? :–

'दलित' शब्द का शाब्दिक अर्थ स्पष्ट करते हुए रामचंद्र वर्मा ने हिन्दी शब्द कोश में लिखा हैः–''दलित भाब्द, मसला, मर्दित, दबाया, रौंदा या कुचला हुआ, विनष्ट किया हुआ है।''[2]

'दलित' शब्द का अर्थ जाति बोधक नही, बल्कि समूह की अभिव्यंजना देता है। सामान्य अर्थों में देखा जाए तो दलित वह है जो भारतीय समाज व्यवस्था में अस्पृश्य माना गया, दुर्गम पहाड़ियों, जंगलों में जीवन–यापन करनें को बाध्य जातियों, बेगार करने, कम मूल्य पर श्रम करने, श्रमिक, जरायम पेशा कही जानें वाली जातियां, बंधुआ मजदूर, वर्ण व्यवस्था का अंत्यज, जिसका आर्थिक, सामाजिक, शैक्षणिक, राजनीतिक, धार्मिक शोषण हुआ है, जो जन्मना अछूत हैं, सामाजिक रूप से अस्वीकृत हैं, वही दलित की परिभाषा में आते हैं।

दलित साहित्य की परिभाषा :–

दलित साहित्य को लेकर हिन्दी समीक्षकों और रचनाकारों मे यह विषय विवाद का विषय बना रहा कि वास्तव में दलित साहित्य' क्या है? दलित साहित्य निर्विवाद रूप में दलितों द्वारा रचा जा रहा दलितों का साहित्य है, हलांकि गैर दलित भी दलित विषयक लेखन करते हैं, परन्तु उन्हें न तो दलित लेखक के रूप में मान्यता मिली है और न वो स्वयं को दलित मानते हैं। वे दलितों के साथ स्वेच्छा से रोटी–बेटी के रिस्ते भी स्थापित करना नही चाहते।

***

जय प्रकाश कर्दम के अनुसार :–

दलित साहित्य दलित समाज को, भारतीय राष्ट्र को एक सूत्र में पिरोने का कार्य करता हैं। साहित्य जोड़ता है तोड़ता नहीं। इसीलिए दलित साहित्य का उद्देश्य भी अलगाव पैदा करना नही, अपितु समाज और राष्ट्र का हिस्सा बनकर उसे समता मूलक, न्यायपूर्ण और प्रगतिशील बनाने में अपनें रचनात्मक भूमिका निभाना है।''[3]

दलित साहित्य का मूल स्वर लोकतांत्रिक चेतना का प्रकटीकरण करना है। यह लेखन–अस्प भयता का व्यवहार और जातिगत विशेशाधिकार की व्यवस्था को स्वीकार नही करता हैं अतः दलित साहित्य का उद्देश्य खासकर दलितों के जीवन में भारत की अन्य जातियों के समान अधिकार, चेतना जगाना है, ताकि वे विकास के अवसरों, साधनों और सामाजिक न्याय की भाक्तियों से वंचित न रहें और उनकी स्थिति चित्रण के साथ–साथ स्वतंत्रता मूलक मुक्ति की छटपटाहट हैं।

'दलित' साहित्य एक ऐसी साहित्यिक धारा की ओर संकेत करता है,जो मानवीय सरोकारों और संवेदनाओं की यथार्थवादी अभिव्यक्ति बनती है।''ऐसा साहित्य जिसमें दलितों नें स्वंय अपनी पीड़ा प्रताड़ना और षोशण के विरूध्द अपनी भाषा–शैली में साहित्यिक अभिव्यक्ति दी है। जो सिर्फ 'कला' के लिए 'कला' नही है, बल्कि सामाजिक, धार्मिक, शैक्षणिक विद्वेश और दग्ध वेदनाओं को महसूस करते हुए मनुष्य की जिजीविशा और मुक्ति की आकांक्षा बनकर मानवीय सरोकारों के साथ उभरा है। जिसका उद्गम जीवन संघर्ष की दहकती अग्नि से हुआ है। इसीलिए दलित साहित्य 'एक्शन' का साहित्य है, जिसे मास लिटेचर कहा जाता है।''[4]

चेतना की परिभाषा :–

चेतना कुछ जीवधारियों में स्वयं के और अपने आसपास के वातावरण के तत्वों का बोध होने, उन्हें समझने तथा उनकी बातों का मूल्यांकन करने की शक्ति का नाम है। विज्ञान के अनुसार चेतना वह अनुभूति है जो मस्तिष्क में पहुँचने वाले अभिगामी आवेगों से उत्पन्न होती है। इन आवेगों का अर्थ तुरंत अथवा बाद में लगाया जाता है।

चेतना के स्तर :–

चेतना के तीन स्तर माने गए हैं – चेतन, अवचेतन और अचेतन। चेतन स्तर पर वे सभी बातें रहती हैं जिनके द्वारा हम सोचते समझते और कार्य करते हैं। चेतना में ही मनुष्य का अहंभाव रहता है और यहीं विचारों का संगठन होता है। अवचेतन स्तर में वे बातें रहती हैं जिनका ज्ञान हमें तत्क्षण नहीं रहता, परंतु समय पर याद की जा सकती हैं। अचेतन स्तर में वे बातें रहती हैं जो हम भूल चुके हैं और जो हमारे यत्न करने पर भी हमें याद नहीं आतीं और विशेष प्रक्रिया से जिन्हें याद कराया जाता है। जो अनुभूतियाँ एक बार चेतना में रहती हैं, वे ही कभी अवचेतन और अचेतन मन में चली जाती हैं। ये अनुभूतियाँ सर्वथा निष्क्रिय नहीं होतीं, वरन् मानव को अनजाने ही प्रभावित करती रहती हैं।

दलित चेतना :–

''दलित चेतना का सीधा सरोकार 'मैं कौन हूं?' से बहुत गहरे तक जुड़ा हुआ है। चेतना का संबंध दृष्टि से होता है, जो दलितों की सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और सामाजिक भूमिका की छवि के तिलस्म को तोड़ती है। अधिकारों से वंचित, सामाजिक तौर पर नकार दिया जाना यानी दलित होना और उसकी चेतना यानी दलित चेतना, जो दलित आंदोलनों के एक लंबे इतिहास की देन है, अलग–अलग कालखंडों में यह अलग रूपों में दिखाई पड़ती है।

दलित समाज का जनक शोषण, उत्पीडन, अन्याय, अत्याचार की पराकाश्ठा है। भारत में आर्यों के आगमन के बाद यहां के मूल निवासियों के साथ जों अमानवीय यातनाएं प्रारंभ होती हैं वह रोगटे खडी कर देने वाली और वीभत्स है। एक लम्बे समय के संघर्श के बाद मूल निवासी पराजय के कारण हाशिए पर धकेल दिए गए और आर्यों का वर्चस्व स्थापित हो गया।

***

कालांन्तर में ऐसे ऐसे अमानवीय नियम बनाए गये जिसके कारण एक बहुत बड़े समूह को दस्यु, दास, अस्पृश्य बना दिया गया,और कुछ विषेश वर्गों ने विषेशाधिकार सुरक्षित कर लिया। इस बर्चस्व वादी मनोवृत्ति के खिलाफ लोगों में स्वतंत्रता, समानता, बंधुत्व और भाई चारे के लिए अलख जगाने का काम किया, उनकी एक लम्बी परम्परा है, जिसे हम क्रम से देखने का प्रयास करेंगे।

बौद्ध साहित्य में दलित–चेतना :–

बौद्ध धर्म को वैज्ञानिक धर्म माना जाता है क्योकि यही एक धर्म है जो तर्क करता है। बौद्ध मत में मानव और मानव के बीच जाति धर्म और वर्ण के आधार पर किसी प्रकार का कोई भेद नही किया जाता। इसी लिए बौद्ध साहित्य चेतना का स्रोत बना। आगे चलकर जब डां0 भीमराव अम्बेडकर ने हिन्दू धर्म त्यागकर बौद्ध धर्म अपनाया तो पूरा दलित समाज ही बौद्ध धर्म की ओर आकर्शित हो गया। मराठी साहित्यकारों मे से कुछ ने तो यह भी कहा कि दलित साहित्य को दलित साहित्य न कह कर बौद्ध साहित्य ही कहा जाय। लेकिन पहचान के संकट में ऐसा नही होने दिया गया। ''गौतम बुद्ध एवं महावीर ने शूद्रों एवं दासों के प्रति मानवीय गरिमा के द्वार सफलता पूर्वक खोल दिए थे। धम्म पद ने ब्राहमण वर्गों की जन्म गत उच्चता पर प्रश्न चिन्ह लगा दिया था। इसका परिणाम यह हुआ कि सम्राट अशोक ने ब्राहमण को भी न्याय के समक्ष अन्य वर्गों के साथ सामान्य रूप से प्रस्तुत कर दिया,परंतु बौद्ध धर्म की महायान भााखा नें व्यवस्था पर कठोरता पूर्वक चोट की।चर्यापदों की प्रतीकात्मक भौली इसका प्रमाण है कि सर्वप्रथम दलित एवं निम्न जातियों को अभिव्यक्ति का सुअवसर इसी समय मिला। बुद्धा नें अपने धम्म पद –''न जटाहि न गोन्तहि न जच्चां होति ब्राह्म्णो''

ब्राहमण की जन्मजात श्रेश्ठता पर प्रश्न चिन्ह लगा दिया जो वर्ण व्यवस्था पर सीधे चोट थी। इसीलिए दलित साहित्य की चेंतना का महत्वपूर्ण स्रोत बौद्ध साहित्य को कहा जा सकता है। बौद्ध साहित्य ने समाज में यह चेतना जगाया कि ब्यक्ति के वर्तमान स्थिति के पीछे वह स्वयं है,कोई पिछले जन्म के का कारण नही है, न कोई स्वर्ग होता न नर्क, न भाग्य। इसलिए व्यक्ति को स्वयं ही अपने दुखों के कारण का पहचान करके दूर करना होगा।

सिद्ध और नाथ साहित्य में दलित–चेतना :–

भारतीय नाथ और सिद्ध साहित्य में अधिकांशतः बौद्ध थे । इनका विरोध हिन्दू वर्चस्व वादी मनोवृत्ति से था जिसमें पवित्रता के नाम पर पूजा–पद्धति और मंदिरों से दलितों को दूर रखा जाता था। श्री माता प्रसाद जी ने इस संबंध में लिखा है कि ''आठवी भाताब्दी के मध्यकाल मेंसहजयान के आचार्य सरहपा हुए। ये सरहपा ही सिद्धों के गुरू हुए, जिन्होनें ब्राहमण का विरोध करते हुए लिखा कि –

''ब्राहमण न जानते भेद, यों ही पढ़े ये चारो वेद।
मटरी पानी कुश लेई पठंत, घर बैठे अग्नि होमन्त।।
एक दण्डी त्रिदण्डी भगवा भेसे, ज्ञानी होके हंस उपदेसे।
मित्थे ही जग वह भूले, धर्म अधर्म जानत तुत्थे।।
वर्ण अचार प्रमाण रहित, अच्छर भेद।
अनंत को पूजई घरे भंजई, तउ न लागे लेप।

इन चौरासी सिद्ध कवियों में पैंतीस शुद्र थे, जिनके नाम इस प्रकार है–
जोगिपा, सर्वभक्ष, भद्रपा, मणिप्रदा, महीपा, चर्पटी, कन्थलीग,गुण्डरीपा,खडगपा,मेदनीपा, शालिपा, धनगपा, धम्मिपा, चमरिपा, कुण्डलिपा, छत्रपा, चेलुकपा, कालपा, कंकालिपा, पनहपा, निर्गुनपा, भीखनपा, धहुलिपा, पुतालिपा, कुचिपा, कमालपा,ततैया, धोकरिपा। इन सभी सिद्ध कवियों ने वर्ण व्यवस्था, जाति व्यवस्था, तथा ब्राहमण वर्चस्व का खुला विरोध किया। चूकि ये सभी सामान्य परिवार से ताल्लुक रखते थे इसलिए इन सब ने जन सामान्य में जाकर चेतना फैलाने का कार्य किया। इसी प्रकार नाथ साहित्य में नाथों के गुरू गोरखनाथ ने भाूद्रों को पढ़ानें की बात कही है :–

***

ISSN- 2321-1504 Nagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

बसैन्दर मुनि मुशि ब्रम्ह जो होते, सूद्र पढाउं बानी।
असंवद विधि ब्राहमण जग निपजा, मैने जुगति जमाया पानी।।

सिद्धों और नाथों की वाणी का अध्ययन करने के उपरांत डां0 प्रेम शंकर ने अपना निश्कर्श दिया –''नाथ सिद्ध कवियों में कई भूद्र कवि थे। इन्होनें जाति व्यवस्था, ब्राहमणवादी संस्कृति और साहित्य के विरोध में सशक्त अभिव्यक्ति के द्वारा अपने संघर्ष को जीवित रखा है।

संत साहित्य और दलित–चेतना :–

हिन्दी साहित्य के मध्यकाल में तीन काव्यधारायें मुख्य रूप से दिखाई देती हैं। एक राम और कृश्ण मार्गी काव्यधारा, दो निर्गुण काव्यधारा और तीसरी प्रेम मार्गी काव्य धारा। इसी काल में एक ओर सूर, तुलसी और मीरा आदि भक्त कवि, राम और कृश्ण के गीत गा रहे थे, वहीं दूसरी ओर कबीर और रैदास वर्चस्व वादी व्यवस्था, जाति व्यवस्था का विरोध कर रहे थे। वहीं तीसरी ओर जायसी आदि हिन्दू मिथक और कथाओं में इस्लामीं रंग भरकर सूफी कलाम प्रस्तुत कर रहे थे। यह पूरा काव्य परिद भय संघर्श और चेतना का प्रतीत होता है। इसी समय तुलसी दास रामचरित मानस के रूप में मनुष्म ति की रचना कर रहे थे, जिसमें भूद्रों को ढोल, गंवार और पशु की श्रेणी में रखकर ताड़न का अधिकारी घोशित कर रहे थे, तथा बता रहे थे कि राम तो केवल –गाय और ब्राहमण की रक्षा के लिए अवतार लेते हैं–विप्र धेनु सुर संत हित लीन मनुज अवतार। इतना ही नही बल्कि समस्त भारतीयों को चेताया कि समस्त गुणों से रहित, चरित्र हीन ब्राहमण की भी पूजा करें–पूजिय विप्र भील गुन हीना, भूद्र न गुण गण ज्ञान प्रवीना। रैदास इनके उलट लिखते हैं पूजिय पद चांडाल के जो होय गुण प्रणीन। ब्राहमण पद न पूजिए जो होय गुनहीन। लेकिन स्वामी जी ने अपने कथन को कैसे गलत होने देते इसलिए उन्होने इस वाक्य में धर्म का ये मोहर लगा दिया कि–'पुन्य एक जग में नहि दूजा, मन क्रम बचन विप्र पद पूजा वहीं कबीर दास मानवता के लिए अपना घर फूक कर चौराहे पर खडे दिखाई देते हैं, और खरी खरी आंखन देखी बात करते हैं और सवाल सवाल पूछते हैं कि–'जो तू बाभन बभनी जाया,आन बाट काहे नहि आया।' तात्पर्य यह कि कबीर समाज में यह चेतना फैला रहे थे कि इस संसार मे सभी मानव एक समान हैं।

मध्यकाल में संत कबीर, रैदास, पीपा, धन्ना सहजोबाई आदि ने ईश्वर को अपने मन के अन्दर ही ढूंढा और पाया। यह आकस्मिक नही हो रहा था और न ही स्वांतः सुखाय के लिए था, बल्कि उनकी विवशता थी, क्योकि कट्टर धार्मिकों ने इन्हें अपने मंदिरों में जाना तथा अपने धर्म ग्रंथों को पढ़ने से बर्जित कर रखा था। अतः इन संतों ने अपने मन को ही मंदिर माना। रैदास ने कहा है–

''का मथुरा का द्वारिका,का कासी हरिद्वार।
रैदास खोजा दिल आपना,तउ मिलिया दिलदार।।

गंगा स्नान को लेकर भी रैदास ने कहा कि–''मन चंगा तो कठौती में गंगा। ''साथ ही जन्म के आधार पर समाज में वर्ण उंच–नीच की अवधारणा पर भी रैदास ने चोट की–

''रैदास जन्म के कारनै, होत न कोउ नीच।
नर को नीच करि डारि हैं, ओछे करम की कीच।।''[11]

रैदास जी का मानना है कि एक ही तरह से उत्पन्न होने के कारण कोई आपस में उंच और नीच नही है।–

''रैदास एक ही बूंद सौ सब ही भये वित्थार,
मूरखि हैं जो करत हैं,वरन अवरन विचार।
रैदास एक ही नूर ते,जिमि उपज्यो संसार,
उंच–नीच किहि विधि भये,ब्राहमण और चमार।

***

इस तरह से मध्यकालीन संत कवि रैदास, पल्टू, दादू आदि ने अपनी अभिव्यक्ति के माध्यम से समाज में बेझिझक होकर सांस्कृतिक, धार्मिक, साहित्यिक चेतना जगायी। धर्म, जातिव अंधविस्वास के प्रति विद्रोही संत कवियों नें समता, बंधुत्व और मानवता की अलख जन सामान्य तक जगानें में अपना जीवन खपाया। इसी लिए संत साहित्य को दलित साहित्य का, चेतना स्रोत मानते हुए माता प्रसाद लिखते हैं कि ''संतों के विचारों से दलित साहित्य को चेतना मिली, उनमें आत्म विस्वास जाग्रत हुआ।

उर्पयुक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि दलित साहित्य में ब्राहमण वादी व्यवस्था के प्रति जो विद्रोह हमें दिखाई देता है–वह संत साहित्य की निर्गुण धारा से चेतना प्राप्त करती है। इसी मार्ग पर चलकर आज दलित साहित्य अपना विकास कर रहा है।

डा0 अम्बेडकर की विचारधारा एवं दलित–चेतनाः–

दलित साहित्य को सबसे ज्यादा यदि किसी ने आधार दिया है तो वह डा0 भीमराव अम्बेडकर का जीवन एवं साहित्य है। भाताब्दियों से अशिक्षा, अज्ञानता एवं दरिद्रता के अंधेरे में भटकते हुए दलित समाज को डा0 भीमराव अम्बेडकर एक सूर्य के रूप में प्राप्त हुए। उन्होने समाज को समता, स्वतंत्रता, बंधुत्व, न्याय, शिक्षा एवं सम्मान का प्रकाश प्रदान किया।

डा0 अम्बेडकर ने अपना सम्पूर्ण जीवन दलित समाज को सामाजिक अभिषाप से मुक्ति दिलानें में लगा दी। उन्होने कई पुस्तकें लिखी और चेतना का वैचारिक आधार दिया। उनके भाषणों को महाराष्ट्र सरकार के शिक्षा विभाग ने 14 खण्डों में प्रकाशित किया। बाद में भारत सरकार ने जब डा0 अम्बेडकर फाउण्डेशन, दिल्ली की स्थापना की तो उसने भी उनके सम्पूर्ण साहित्य को प्रकाशित किया। अम्बेडकर सम्पूर्ण साहित्य का विभिन्न भाशाओं मे अनुवाद हुआ और दलित समाज में चेतना का प्रसार हुआ। उन्होने प्रबुद्ध भारत, बहिश्कत भारत, तथा मूकनायक आदि पत्रों का सम्पादन किया,जिसमें दलितों को अभिव्यक्ति का महत्व पता चला, और जब डा0 अम्बेडकर ने मराठी में अपनी आत्म कथा''अमी कसा झालो'' 'मैं कैसे बना, लिखी तो मराठी दलित लेखकों में आत्म कथा लिखने की चेतना जगी और आत्म कथा लिखने की होड़ सी लग गयी।

उपयुक्त तथ्यों से स्पश्ट होता है कि दलित साहित्य की प्रेरणा का स्रोत वर्तमान काल में तो डा0 भीमराव का जीवन, साहित्य और विचारधारा ही है। सभी भाशाओं के दलित लेखक एकमत से इसे स्वीकार भी करते हैं।

मराठी साहित्य और दलित–चेतना :–

19 वीं शताब्दी में हम सबसे पहले महाराष्ट्र में इस दलित धारा को प्रभाव में देखते हैं। महाराष्ट्र में ज्योतिबा राव फूले के नाटकों और पंवाड़ा काव्य में इस विचारधारा के सबसे पहले दर्शन होते हैं। महात्मा फूले की प्रख्यात रचना 'गुलामगीरी' है। इसमें ब्राह्मणवाद पर जितना तीखा प्रहार मिलता है उतना और ग्रंथ में नहीं मिलता। यह रचना संवाद शैली में लिखी गई है।

वे लिखते है :–

''मनु जलकर खाक हो गया,
जब अंग्रेज आया।
हमको दूध पिलाया।।
अब तो तुम भी पीछे न रहो।
भाइयों, पूरी तरह जलाकर,
खाक कर दो मनुवाद को।।

***

इनकी कविताओं में दलित विमर्श, अछूत और शुद्रों के लिए नवजागरण का विमर्श है। मराठी दलित साहित्य का आधार फूले अम्बेडकर की चिन्तनधारा ही है। डा0 अम्बेडकर 1927 से 1930 तक महराष्ट्र में जल श्रोतों पर समान अधिकार एवं मंन्दिर प्रवेश जैसे सामाजिक मुद्दों से टकरा रहे थे। इसी समय कुछ जन कवि, वाणी से महाराष्ट्र में जन जागृति का काम कर रहे थे। इन लोक गीतों में जातिगत भेदभाव, अस्पृश्यता आदि का चित्रण हुआ है। यही परम्परा धीरे धीरे आगे चलकर मराठी कविता में परिणित हुई। मराठी में 'अस्मितादर्श', आम्ही और विद्रोह जैसे साहित्यिक पत्रिकाओं का प्रकाशन प्रारंभ हुआ, तो साहित्यिक विमर्श और अन्य विधाओं की ओर मराठी के दलित साहित्यकारों का ध्यान गया। इन विधाओं में सबसे अधिक ख्याति आत्मकथाओं को प्राप्त हुई। यहां कुछ दलित स्त्रियों ने भी आत्मकथाएं लिखी है। इनमे मल्लिका अमर भोख, शांता बाई, बेबी ताई कांबले, जनाबाई गिरहे, कुमुद पाण्डे, कौशल्या बैसन्त्री आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

मराठी दलित साहित्य में उपन्यास, कहानी, कविता, आत्म कथा आदि विधाओं में रचनाएं प्रकाशित हुई हैं और चेतना में अपनी भूमिका का निर्वहन कर रही हैं। मराठी साहित्य ने सम्पूर्ण देश के दलित साहित्य को चेतना देने केसाथ हिन्दी में भी दलित साहित्य के सृजन को प्रेरित किया, चेतना दिया।

20वीं शताब्दी में दलित विमर्श, और व्यापकता के साथ दिखाई देता है। महाराष्ट्र के साथ–साथ यह विमर्श अब अन्य राज्यों में भी दिखाई देता है। इसलिए इसी समय केरल में के0वी0 करूप्पन कवि हुए जो जाति से अछूत (मछूआरे) थे। इन्होंने शंकराचार्य के 'अद्वैत दर्शन' की नयी व्याख्या करते हुए अपनी 'जाति कुंभी' नाम से एक लम्बी कविता लिखी। वास्तव में केरल में दलित विमर्श का आंदोलन चलाने वाले नारायण गुरू है। इन्होंने अपनी रचनाओं में 'जाति मत पूछो, जाति मत बताओ और जाति के बारे में मत सोचो' के नारे को लोकप्रिय बनाया।

हिन्दी दलित साहित्य और चेतना :–

20वीं शताब्दी के हिन्दी साहित्य में, दलित चेतना और अधिक, प्रखर रूप में हमारे सामने आती है। इस युग में दर्जनों दलित लेखक इस धारा में सक्रिय हुए। इनमें हीरा डोम और अछूतानंद के नाम उल्लेखनीय है। हीरा डोम ने एकमात्र कविता लिखी जो 1914 में 'सरस्वती' पत्रिका में 'अछूत की शिकायत' नाम से छपी थी। इसे विशुद्ध दलित संवेदना की कविता माना जाता है, जिसमें एक अछूत अपने क टों का वर्णन भगवान के सामने और सबके सामने कर रहा है–

''हमनी के रात–दिन दुखवा भोगत बानी,
हमनी के सहेजे से मिनती सुनाइबि।
हमनी के दुःख भगवानों न देखता जे,
हमनी के कबले कलेसवा उठाइबि।

000

डोम जानिके हमनी के छुए से डेरइले,
हमनी के इनरा के निगिचे न जाइले जा।
पांके में से भरि, पियतानी पानी,
पनही से पिटि पिटि हाथ गोड़ तुरि दैलें,।
हमनी के इतनी काही के हलकानी।

***

इसी युग में दूसरे सबसे प्रभावी लेखक स्वामी अछूतानंद हैं जो 'हरिहर' उपनाम से कविता लिखते थे। ये कवि होने के साथ–साथ नाटककार और पत्रकार भी थे। इन्होंने उत्तर भारत में 'आदि हिन्दू' आंदोलन भी चलाया। आदि हिन्दू पत्र निकालकर इन्होंने दलित पत्रकारिता को जन्म दिया। अपने पत्र में इन्होंने दलित पर होने वाले अत्याचारों को प्रकाशित किया, साथ ही दलितों को उनके इतिहास से परिचित कराकर उनमें चेतना और स्वाभिमान उत्पन्न करने की कोशिश की। स्वामी अछूतानंद की एक कविता 'मनुस्मृति' में हीरा डोम की कविता जैसे ही भाव दिखाई देते हैं–

''निसदिन मनुस्मृति ये हमको जला रही है।
ऊपर न उठने देती नीचे गिरा रही है।

स्वामीजी की इस दलित धारा को शंकरानंद, केवलानंद और अयोध्यानाथ दंडी जैसे कवियों ने आगे बढ़ाया। आज भी केवलानंद का यह गीत दलित वर्गों में प्रसिद्ध है :–

''मनु जी तुमने वर्ण बना दिए चार।
जा दिन तुमने वर्ण बनाया
बनिया पीले बनाये क्यों ना।
गोरे ब्राह्मण, लाल क्षत्रिय,
न्यारेऊ रंग बनाये क्यों ना।
शुद्र बनाते काले वर्ण के,
पीछे को पैर लगवाए क्यों ना।''

दलित चेतना की यह धारा सवर्ण लेखकों तक भी आई। इसका सीधा सा कारण 20वीं शताब्दी के राजनैतिक और सामाजिक आंदोलनों का प्रभाव था। डा0 अम्बेडकर और महात्मा गांधी जी के बीच हुए संवाद और 'पूना पैक्ट' (1932) के समझौते ने सवर्ण लेखकों को इस ओर प्रेरित किया। सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', मैथिलीशरण गुप्त, गया प्रसाद शुक्ल, व रामचन्द्र शुक्ल आदि ने दलितों के ऊपर सहानुभूतिपूर्वक रचनाएं लिखीं। हालांकि इनकी रचनाओं में दलित लेखकों जैसी दलित मुक्ति का कोई स्वर दिखाई नहीं देता। निराला प्रारम्भ में वर्ण व्यवस्था में विश्वास रखते थे लेकिन बाद में उन्होंने अपनी विचारधारा में परिवर्तन किया और दलितों के समर्थन में भिखारी और' चतुरी चमार' जैसी रचनाएं भी लिखीं।

हिन्दी साहित्य में प्रगतिशील धारा जो 1930 में प्रारम्भ हुई और जिसका विधिवत् नामकरण 1936 में हुआ, दलित विमर्श की यह धारा विभिन्न सोपानों को पार करती हुई इस आंदोलन तक भी पहुंची। प्रेमचंद इस धारा से जुड़े पहले लेखक थे, जिन्होंने अपनी कहानी एवं उपन्यासों में दलित समस्या का चित्रण किया है। उन्होंने अपनी रचनाओं में दलितों के प्रति सवर्णों के कठोर व्यवहार की निन्दा की और डा0 अम्बेडकर ने तालाब में पानी लेने और मंदिर में प्रवेश के अधिकार को लेकर जो आंदोलन किए उससे प्रभावित होकर 'ठाकुर का कुंआ', 'मंदिर' और 'सद्गति' जैसी दलित–विशयक कहानियां लिखी। आगे चलकर प्रेमचंद के पश्चात् प्रगतिशील साहित्य मे दलित वर्ग की स्थिति मजदूर वर्ग के रूप में चित्रित की गई। मुक्तिबोध, नरेन्द्र शर्मा, त्रिलोचन, धूमिल और नागार्जुन जैसे साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं में दलितों को, शेषित वर्ग के रूप में चित्रित किया है। जैसे धूमिल की प्रसिद्ध रचना 'मोचीराम' में दलित मोची के लिए समाज का हर आदमी एक जोड़ी जूता है :–

''रांपी से उड़ी हुई आंखों ने
मुझे क्षणभर टटोला, और
और फिर पतियाते हुए स्वर में बोला
बाबू जी सच कहूं
मेरी निगाह में, न कोई बड़ा है, न छोटा
मेरे लिए हर आदमी
एक जोड़ी जूता है
जो मेरे सामने मरम्मत के लिए खड़ा है।

***

इसी प्रकार नागार्जुन की प्रसिद्ध कविता 'हरिजन गाथा' में दलितों के सामूहिक हत्याकाण्ड के विरूद्ध अराजक तत्वों के खिलाफ एक विद्रोही स्वर दिखाई देता है–

''ऐसा तो कभी नहीं हुआ था कि
एक नहीं, दो नहीं, तीन नहीं–
तेरह के तेरह अभागे
अकिंचन मनुपुत्र
जिन्दाझोंक दिए गए हों
प्रचंड अग्नि की विकराल लपटों में
साधन संपन्न ऊंची जातियों वाले
सौ–सौ मनुपुत्रों द्वारा
ऐसा तो कभी नहीं हुआ था।''

दलित विमर्श का तीव्र विद्रोह के साथ विकास हिन्दी साहित्य में 1960 के बाद दिखाई देता है। इस युग में आकर कविता, आत्मकथा, और कहानी जैसी विधाओं मे सामाजिक व्यवस्था के प्रति विद्रोह के भावों का चित्रण मिलता है। साठोतरी हिन्दी साहित्य में लेखक कभी लघु मानव की बात करता है, तो कभी दलित मानव की मनःस्थिति का वर्णन करता है।

भटकता हुआ अकेलापन – यही इस युग की कविता का यथार्थ है। इस युग में दलित विमर्श का कोई अलग स्वरूप नहीं है। जगदीश गुप्त ने अपने 'शंबूक' काव्य में वर्ण व्यवस्था पर इस प्रकार करारा प्रहार किया है–

''जो व्यवस्था व्यक्ति के सत्कर्म को भी
मान ले अपराध
जो व्यवस्था फूल को
खिलने दे निर्बाध
जो व्यवस्था वर्ग सीमित
स्वार्थ से हो ग्रस्त
वह विशम घातक व्यवस्था
शीघ्र ही हो अस्त।''[19]

इस प्रकार दलित साहित्य का आर्विभाव विभिन्न सोपानों से होता हुआ स्वयं दलित साहित्य में आया और इसी दशक मे दलित लेखकों का साहित्य भी अस्तित्व में आया। हिन्दी साहित्य में साठ के दशक में अनेक रचनाकार जैसे–चन्द्रिका प्रसाद जिज्ञासु,ललई सिंह, डॉ0 डी0 आर0 जाटव, रजनीकांत शास्त्री, रामस्वरूप वर्मा आदि लेखकों की पुस्तकें प्रकाशित हुईं। इनके अतिरिक्त डॉ0 भीमराव अम्बेडकर, राहुल सांकृत्यायन, अछूतानंद आदि की रचनाओं ने भी क्रांतिकारी विचार प्रस्तुत किए।

1960 के पश्चात् दलित साहित्य की रचनाओं के क्रम में तेजी आई और 1980 तक आते–आते यह हिन्दी में यह साहित्य स्थापित हो गया–''1960 के आसपास मराठी में दलित आंदोलन के उभार के साथ ही धीरे–धीरे दलित जीवन से जुड़ी रचनाओं का हिन्दी में आना शुरू हुआ तथा 1980 तक आते–आते हिन्दी में दलित साहित्य की रचना शुरू हुई। इस बीच 1976 में नागपुर में पहली बार दलित साहित्य सम्मेलन का आयोजन हुआ तथा इस आयोजन ने यह सिद्ध कर दिया कि दलित साहित्य के आंदोलन की प्रक्रिया अब धीमी नहीं, तेज होगी। इसी दौरान हिन्दी में दलितों द्वारा परम्परा के प्रति विद्रोह के रूप में छिटपुट लेखन की शुरूआत हुई, जिसने धीरे–धीरे एक विशेष प्रकार के साहित्य के रूप में अपनी पहचान स्थापित की। आज हिन्दी में जो दलित साहित्य लिखा जा रहा है, उसका एक बड़ा हिस्सा दलितों द्वारा रचित है और वास्तव में वही 'दलित साहित्य' है।''

***

इधर हिन्दी में ओमप्रकाश वाल्मीकि, मोहनदास नैमिशराय, सोहनपाल सुमनाक्षर, धर्मवीर, रूपनारायन सोनकर, यौराज सिंह बेचैन, कंवल भारती, जयप्रकाश कर्दम, प्रेमशंकर, सुशीला टांकभौरे, सुखबीर सिंह, कुसुम मेघवाल, रजतरानी मीनू, सूरजपाल सिंह चौहान, आदि प्रमुख हैं। इन रचनाकारों में अधिकांश कहानी, कविता, आत्मकथा, संस्मरण और आलोचना लगभग सभी विधाओं में लिख रहे हैं। इस सम्बन्ध में मोहनदास नैमिशराय की आत्मकथा 'अपने अपने पिंजरे' का विशेष महत्व है।

इस कृति में शहर में रहने वाले चमार समुदाय की पीड़ा को उभारा गया है। इस आत्मकथा में लेखक ने यह दिखाने का प्रयास किया है कि दलित चाहे शहर में रहे या गांव में, सवर्णों की बस्ती में रहे या मुस्लिम बस्ती में उसे घोर अपमान ही सहना पड़ता है। लेखक अपनी पीड़ा को इन शब्दों में व्यक्त करता है–''हम लम्बे समय से अपमान सहते आये थे, पर गुनहगार न थे। हम हारे हुए लोग थे, जिन्हें आर्यों ने जीतकर हाशिए पर डाल दिया था। हमारे पास सिर्फ कड़वा अतीत और जख्मी अनुभव था। सदियों से गर्दिश में रहते–रहते हम अपने इतिहास से कट गये थे। अपनी संस्कृति भूल गये थे।''[21]

बाल्मीकि समाज की असहनीय पीड़ाओं और भोगे हुए अनुभवों को ओमप्रकाश बाल्मीकि ने अपनी आत्मकथा 'जूठन' में समेटा है। इस कृति में लेखक ने लिखा है–'' एक ऐसी समाज व्यवस्था में हमने सांस ली है जो बेहद क्रूर और अमानवीय है, दलितों के प्रति असंवेदनशील भी।'' इस पुस्तक में लेखक ने दलित 'चूहड़ा' समाज की दयनीय स्थिति का चित्रण किया है।

लेखक ने इस कृति में कई प्रश्न उठाए हैं जैसे आदर्श हिन्दू समाज में जहां पेड़–पौधों, पशु–पक्षियों तक की पूजा की जाती है, वहां दलितों के प्रति उनका रवैया असहिष्णु क्यों है ?

दलित साहित्य में केवल पुरूशों ने ही अपनी लेखनी नहीं चलाई बल्कि इधर महिला रचनाकारों ने भी अपनी भोगे हुए यथार्थ को आत्मकथाओं में चित्रित करने का प्रयास किया है। इस दृष्टि से कौशल्या बैसंत्री ने अपनी आत्मकथा 'दोहरा अभिशाप' में न केवल दलित होने की पीड़ा को जीवन्तता दी है अपितु स्त्री होने की पीड़ा को भी पाठकों को संवेदनशीलता के साथ अहसास करा दिया है। लेखिका का मानना है कि स्त्रियों के मामले में सवर्ण पुरूषों की सोच और दलित पुरूषों की सोच में कोई अंतर नहीं है। खुद लेखिका का जीवन इस बात का प्रमाण है कि उनके व्यक्तित्व निर्माण में सर्वाधिक बाधाएं उनकी बिरादरी के पुरूषों ने ही खड़ी की। लेखिका के शब्दों में–''एक सहयोगी ने मेरे साथ जबरन यौनाचार करना चाहा। और के बस्ती के लोगों ने मेरा जीना मुहाल कर दिया। इसलिए हमारी पहली मुठभेड़ सवर्ण पुरूश सत्ता से नहीं बल्कि दलित पुरूष सत्ता से है।''

निष्कर्स :–

आज दलित साहित्य हिन्दी की सभी विधाओं में लिखा जा रहा है। प्रमुख रूप से काव्य ग्रन्थ, उपन्यास, कहानियां, नाटक, निबन्ध, आत्मकथाएं व आलोचना–ग्रंथों में दलित विमर्श उपलब्ध है। इस प्रकार हम अंत में निष्कर्ष रूप में यही कह सकते हैं कि दलित साहित्यकारों ने दलित समाज के सम्पूर्ण दैन्य–दारिद्रय, अज्ञानता, अंधविश्वास, धार्मिक वितण्डता, शोषण एवं तिरस्कार का जीवन्त चित्रण किया है, और समाज में ईश्वरवाद, ब्राहमण वाद, मनुवााद, पाप, पुन्य, स्वर्ग–नर्क, भाग्य–भगवान के ब्राहमणी चंगुल से उपर उठ कर प्रश्न खड़ा करने लगा है। चाहे आत्मकथा लेखक महार, मातंग, बाल्मीकि, केकाड़ी, उठाईगीर, चमार आदि किसी भी समाज का हो इनकी मूलभूत समस्याएं एक ही हैं और इसी एक समस्या ने हिन्दी में विशाल दलित लेखक वर्ग तैयार किया जिनका रचना कर्म दलित सवालों को न केवल प्रखर रूप से उठाना है, बल्कि उसके पक्ष में दलित साहित्य का माहौल के लिए चेतना विकसित करना है। लेकिन वर्तमान परिवेश दलित समाज के लिए संक्रमण का है। साथ ही इनके प्रति मीडिया की नकार का विकल्प भोसल मीडिया ने लिया है। अब लोग अपनी बात फेसबुक ट्यूटर और व्हाटसएप के माध्यम ये कहने लगे हैं,लेकिन आज भी बहुत कठिन है डगर पनघट की,मतलब की स्थितियां बहुत सामान्य नही है। संविधान और संवैधानिक अधिकार खतरे में है,ऐसा दलित लेखक चिन्तकों का मानना है।

***

ISSN- 2321-1504 Nagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

फासीवाद डुबा ले गयी,आपकी तैरती नैया को,
स्वार्थ की आंधी उड़ा ले गयी, आपकी नाव खेवईया को।
संविधान की एक एक पर कैसे कटता जा रहा,
बचा सको तो बचा लो अपने, आंगन की गौरैया को।।

—000—

संदर्भ ग्रन्थ सूची :—

1. अधूरी चिट्ठी रोशनी की — चंद्र कुमार बरठे, पृष्ठ 21
2. हिन्दी शब्द कोष— रामचंद्र वर्मा
3. दलित—चेतना और स्त्री विमर्श, डा0विजय कुमार संदेश पृष्ठ 41
4. दलित विमर्श साहित्य के आईने में—डा0 जय प्रकाश कर्दम, पृष्ठ 15
5. मुख्य धारा और दलित साहित्य, सामयिक प्रकाशन नई दिल्ली, पृष्ठ 50
6. दलित संघर्शः संस्कृति एवं साहित्य की सबल अभिव्यक्ति,डा0 प्रेम शंकर पृष्ठ 206, त्रैमासिक मंसूरी, जनवरी—मार्च—1997
7. धम्म पद ब्राहमण वग्गो,929/11 पृष्ठ 297
8. हिन्दी काव्य में दलित काव्यधाराः माता प्रसाद, पृष्ठ 36
9. दलित संघर्शः संस्कृति एवं साहित्य की सबल अभिव्यक्ति, डा0प्रेम शंकर पृष्ठ 206, त्रैमासिक मंसूरी, जनवरी—मार्च—1997 पृष्ठ 26
10. संत कवि रैदास, मूल्यांकन और प्रदेय—डा0 एन. सिंह, पृष्ठ 30
11. संत कवि रैदास, मूल्यांकन और प्रदेय—डा0 एन. सिंह, पृष्ठ 33
12. संत कवि रैदास, मूल्यांकन और प्रदेय—डा0 एन. सिंह, पृष्ठ 28,29
13. हिन्दी काव्य में दलित काव्यधाराःमाता प्रसाद, पृष्ठ 47
14. दलित विमर्श की भूमिकारू कंवल भारती, पृष्ठ 106
15. अछूत की शिकायत— हीरा डोम,1914, सरस्वती पत्रिका।
16. दलित विमर्श की भूमिकारू कंवल भारती, पृष्ठ 0 113
17. दलित विमर्श की भूमिकारू कंवल भारती, पृष्ठ 0 122
18. दलित विमर्श की भूमिकारू कंवल भारती, पृष्ठ 0 123
19. शंबूक (खण्ड काव्य) रू जगदीश गुप्त, पृष्ठ 37
20. दलित साहित्य का विमशर्रू कंवल भारती, पृष्ठ 123
21. दलित साहित्य की मुख्यधारारू देवेन्द्र चौबे, पृष्ठ 184
22. अपने अपने पिंजरेरू मोहनदास नैमिशराय, पृष्ठ 39
23. कथा—क्रम (दलित विशेषांक , नवम्बर 2000, पृष्ठ 115

***

ISSN- 2321-1504 Nagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

बघेली के नीव कालीन प्रमुख कवियों के व्यक्तित्व एवं कृतित्व

राजकुमार सिंह सोटिया
सहायक प्राध्यापक 'हिन्दी'
नवीन शासकीय महाविद्यालय, नौरौजावाद
जिला – उमरिया म.प्र.

मो0 :– 8959215326

बघेली के प्रथम शोध कर्ता डां. भगवती प्रसाद शुक्ल ने अपनी ग्रंथ 'बघेली भाषा एवं साहित्य' में जिन कवियों का प्रथम उल्लेख किया गया है,उनमें मुन्नी लाल प्यारे तथा हरिदास को ही बघेली का प्रथम उल्लेख किया गया है। डॉ0 नगेन्द्र सिंह 'कमलेश के शोध ग्रंथ में बघेली के प्रथम कवि के रूप में बैजू को स्वीकार किया है। डां0 अभय राज त्रिपाठी ने अपने शोध ग्रंथ में बघेली कवियों का जो काल विभाजन किया है उसमें हरिदास और बैजू को प्राचीन काल का कवि स्वीकार किया है। किन्तु प्रो0 आदित्य प्रताप सिंह के निर्देशन में लिखित सूर्यभान के लघुशोध में उल्लेख किया है कि हरिदास अटठारहवी शताब्दी के कवि हैं। अतः उन्हें बघेली का पहला कवि मानना चाहिए। प्रो0 आदित्य प्रताप सिंह नें इस बात की पुष्टि के लिए कहा है कि 1777 में गुढ रीवा में जन्में हरिदास बघेली के प्रथम पुष्ट कवि के रूप में दिखाई देते हैं। उनके हास्य, व्यंग्य और कटाक्ष देखते ही बनते हैं। बघेली भाषा के सशक्त रचनाकार बाबूलाल दाहिया ने अपने एक लेख 'काहे मा धौं निबल है आपन बघेली' में हरिदास को बघेली का अदिकवि माना है।लोक साहित्य को छोड़कर बघेली कविता का इतिहास बहुत पुराना नही है। मुन्नीलाल प्यारे के कुछ गीतों का प्रभाव जनश्रुतियों के माध्यम से मिलते हैं। उसके बाद हरिदास का उल्लेख मिलता है। बघेली भाषा और साहित्य में भी इनका साहित्य लिखित रूप में उपलब्ध नही है।'हिन्दी साहित्य का ब हद इतिहास' के द्वितीय खण्ड में 'बघेली लोक साहित्य' शीर्षक के अन्तर्गत जो बघेली लोक कवियों की सूची एवं परिचय दिया गया है, उनमें श्री चन्द्र जैन,हरिदास, बैजनाथ, मधुर अली, राम प्यारे, सैफुद्दीन,रामेश्वर, ब्रज किशोर, मोहन लाल,कुन्ती देवी, रूपनारायण, इन लोक कवियो का उल्लेख है। बघेली साहित्य के प्रथम चरण को नीव काल से अभिहित किया गया है। बघेली साहित्य का नीवकाल ठीक वैसा ही है जैसा हिन्दी साहित्य का आदिकाल। इस काल के कवियों एवं रचनाओं का कोई विधिवत प्रमाण नही है, परन्तु जो भी जनश्रुतियों के द्वारा वा शोध ग्रंथों में वर्णित है उनके आधार पर विचार किया गया है। इस काल के प्रमुख कवि मुन्नी लाल, मधुर अलि, गणेश भट्ट, एवं रामसुन्दर शुक्ल जी हैं।

01 मुन्नालाल प्यारेः– मुन्नालाल प्यारे के संबंध में कोई आधिकारिक जानकारी उपलब्ध नही है और ना ही कोई लिखिति साहित्य अभी तक प्राप्त हुआ है। इनके संबंध में डॉ0 भगवती प्रसाद शुक्ल नें अपनी शोध प्रबंध ''बघेली भाषा और साहित्य में इस प्रकार बताया है–''मुन्नालाल प्यारे सतना जिले के बुड़वा गांव के निवासी थे। जाति के ब्राहमण थे लेकिन अब इनके बंश का कोई अधिक त व्यक्ति नही है, किन्तु इतना अवश्य है कि वहां के आस–पास के गांवों में आज भी उनकी गारियां गाई जाती हैं। उनके गारियों में राम कलेवा वा ज्योनार अधिक प्रसिद्ध है।

कनक के भात जतन से बनाए,मूंग के दार बघारी।
जो उई आही तीन लोक के ठाकुर काहे आएं ससुरारी।[2]

02 मधुर अलीः–नीव काल के दूसरे कवि के रूप में मधुर अली का नाम आता है। इनके जीवन काल के संबंध में कोई पुख्ता प्रमाण नही मिलता लेकिन डां0 अभय राज त्रिपाठी नें अपने शोध ग्रंथ ''बघेली लोक कवियों के व्यक्तित्व और क तित्व एक अनुशीलन'' में यह स्पष्ट किया है कि ''मधुर अली महाराज रघुराज सिंह के समकालीन कवि हैं। इनका जन्म सतना जिले के रामपुर नगर के आस–पास पुरैरा ग्राम में हुआ था। वे बाल्य काल में मवेशी चराते समय कुछ तुक बंदी कर नृत्य किया करते थे। इनकी भाषा अवधी और बघेली मिश्रित है। इनके युगल विनोद के कुछ पंक्तियां प्रस्तुत है :–

***

ISSN- 2321-1504 Nagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

''श्याम सो लगी सुरतिया,
नही भूलै छटा छबीली,
वह मुस्कान मनोहर बतियां

उपर्युक्त पंक्तियों से स्पष्ट हो जाता है कि अवधी की प्रधनता भले ही हो परंतु बघेली इससे अछूता नही है। अतएव बघेली के नीव कालीन कवि के रूप में अपका अहम भूमिका है।

03. गणेशी भट्टः– बघेली लोक कवियों में गणेशी भट्ट अग्रणी माने गये हैं। अपनी कविताओं में शौर्य वा वीर के पदों की रचना की है। उनके संबंध में डां0 भगवती प्रसाद शुक्ल नें अपने शोध प्रबंध ''बघेली भाषा और साहित्य''में लिखा है कि गणेशी भट्ट के पूर्वज बघेल राजाओं के यहां राज्याश्रित जीवन जीते थे। भटट मुख्यतः तुकबंदी के माध्यम से अपनी बात रखते थे। वे बघेल राजाओं का जीवन शौर्य के साथ–साथ प्रकृति के मनोरम दृश्यों का भी सुन्दर चित्रण किये हैं।जैसे नदी , पहाड़, सूर्य, चंद्र, आदि। कुछ पंक्तियां प्रस्तुत हैं :–

बेला चमेली नरगिस गमकि रही,
लेकिन सबसे अच्छी रही खुशबू गुलाब की।[3]

अतः कहा जा सकता है कि बघेली का नीव भले ही दिखाई न दे रहा हो लेकिन इसका महल और कंगूरा इसी नीव पर टिके हैं जो व्यापक रूप में विद्यमान है।

04. रामसुन्दर शुक्लः–राम सुन्दर शुक्ल के कृतित्व का अंश अभी तक उपलब्ध नही हो पाया है किन्तु इतना अवश्य है किवे बघेली में भजन गायन बड़ी तन्मयता के साथ किया करते थे। प्रकाशन के अभाव में रचनाएं विलीन हो गई हैं। लेकिन जो भी हो बघेली के नीवकाल के कवियों के रूप में अपना नाम आपने आश्यक रूप से दर्ज कराई है। आपका जन्म शहडोल जिले के ब्योहारी तहसील के मुख्यालय में हुआ था तथा आपकी प्रतिभा संम्पन्न व्यक्तित्व सबको भाती थी।इनके पाण्डु लिपियों से प्राप्त कुछ पंक्तियां प्रस्तुत हैं :–

''गुरू आही भगवान
जे न जानिस एहि माया का।
देवी देउता हम नही जानी,
गुरू का जोड़ महान।''

उपर्युक्त लोक कवियों का साहित्यिक मूल्य उतना भले ना हो किन्तु परम्परा की क्रमिक विकास के रूप में बघेली का साहित्यिक भवन अवश्य खड़ा है।

संदर्भ–सूची :–

1. सोन और रेवा के स्वर–वघेली कविता सेग्रह,प भठ–42
2. सोन और रेवा के स्वर–वघेली कविता सेग्रह,प भठ–60
3. डां0 अभयराज त्रिपाठी –बघेली लोक कवियों का व्यक्तित्व और क तित्व, शोध ग्रंथ,प भठ–303
4. डां0 अभयराज त्रिपाठी –बघेली लोक कवियों का व्यक्तित्व और क तित्व, शोध ग्रंथ,प भठ–304

***

महिमा पेंट स्टोर
& Mahima Associates
Govt. Contractor
Authorised Dealers Barger Paints (I) Ltd.
Nerolac Paints (I) Ltd. Garnish Paints (P) Ltd.
Stockist electrical Goods, Hardware welding road
Building Materials & Repairing of All kinds of electrical goods
Main Road Nawanagar, Distt-Singrauli (M.P.) Mob.: 9926350714, 9425828682

डॉ. यू.के. सिंह
एम.बी.बी.एस., एम.डी. (भोपाल)
पंजीयन क्रमांक-MP4919
स्त्री एवं प्रसूति, निःसंतान रोग विशेषज्ञ
जिला-सिंगरौली (म.प्र.)
पूर्व चिकित्सक सुल्तानिया जनाना हास्पिटल एवं गॉधी मेडिकल कॉलेज भोपाल (म.प्र.)
डी.जे. कोर्ट, रोमी प्रेस के सामने, शॉप नं.4, बैढ़न, जिला-सिंगरौली (म.प्र.)

रोमी प्रेस
बैनर एण्ड मल्टी कलर प्रिंट
रबर सील
फ्लैक्स बोर्ड
पैम्पलेट
लेटर पैड
बिल बुक
शादी कार्ड
विजिटिंग कार्ड
वन-वे विजन
कलर प्रिंट
बैढ़न, सिंगरौली (म.प्र.)
9425179103, 9424780879